ISHVARIYA BODH

RAMKRISHNA PARMOHAMSA

छात्र-हितकारी पुस्तकमाला—सं० १

ईश्वरीय बोध

Ishvariya Bodh

परमहंस रामकृष्ण के उपदेश

Ramkrishna Parmahansa

संकलनकर्त्ता

केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

ईश्वरीय बोध

अथवा

परमहंस श्रीरामकृष्ण के उपदेश



संग्रहकर्त्ता और प्रकाशक

केदारनाथ गुप्त

छात्रहितकारी पुस्तकमाला,

दारागंज, प्रयाग



चौथा संस्करण
१५००

१९३५

मूल्य ।।।)

प्रकाशक—

केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

प्रोप्राइटर—छात्र-हितकारी पुस्तकमाला,

दारागंज, प्रयाग।



मुद्रक—

रघुनाथप्रसाद वर्मा

नागरी प्रेस, दारागंज, प्रयाग।

परमहंस श्रीरामकृष्ण देव की

संक्षिप्त जीवनी

—०—

परमहंस रामकृष्णजी का जन्म २० फरवरी सन् १८३३ ई० को हुगली प्रान्त के अन्तर्गत ग्राम कमारपकर में हुआ था। इनके पिता का नाम खुदीराम चट्टोपाध्याय और माता का नाम चन्द्रमनी देवी था। खुदीराम बड़े स्वतन्त्रवक्ता, सदाचारी, निष्कपट और परमात्मा के अनन्य भक्त थे। लोगों का कहना है कि उनको वाक्सिद्धि थी। अच्छी बुरी प्रायः सभी उनकी बातें सच उतरती थीं। यही कारण था कि गांव के रहने वाले उनका बड़ा आदर सत्कार करते थे। उनकी माता भी सरला और दयालु थीं।

रामकृष्ण जी को बाल्यावस्था ही से गाने बजाने में बड़ी रुचि थी। जहाँ कहीं वे धार्मिक नाटक देख पाते तो घर लौट लड़कों को लेकर उसी प्रकार स्वयं भी वृक्षों के नीचे खेलते थे। इनको मूर्ति बनाने का भी बड़ा शौक था; जब कभी किसी मूर्ति में कोई ख़राबी देखते तो झट बता देते और मूर्ति फिर उनके कथनानुसार ठीक कर दी जाती थी। वे स्वयं परमात्मा की प्रतिमा बनाते और मित्रों के साथ उनकी आराधना करते थे। इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। ६ ही वर्ष की अवस्था में कथक्कड़ों से सुन सुनकर पुराण, रामायण, महाभारत और भागवत का इनको अच्छा ज्ञान हो गया।

ये तीन भाई और दो बहिन थे। सब से बड़े भाई रामकुमार चटोपाध्याय जी संस्कृत साहित्य के बड़े पंडित थे। उन्होंने कलकत्ते में अपनी पाठशाला खोल रक्खी थी और उसी के स्वयं अध्यापक थे। १६ वर्ष की आयु में रामकृष्ण जी इसी मदरसे में भेजे गये और यहीं इनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। किन्तु यहाँ की शिक्षा-प्रणाली से उन्हें सन्तोष न हुआ। उन्होंने देखा कि अध्यापक और विद्यार्थी आत्मा, परमात्मा और मुक्ति आदि विषयों पर बड़ी बड़ी लम्बी वक्तृता देते हैं और घंटों वादा-विवाद करते हैं; परन्तु उन बातों को कार्य्य रूप में परिणत करने का प्रयत्न नहीं करते, उनकी इच्छा निरन्तर सोने चाँदी की ओर लगी रहती है। अतः उन्होंने स्पष्ट रूप से एक दिन अपने बड़े भाई से कह दिया कि मैं इस निरर्थक शिक्षा से कोई लाभ नहीं देखता मेरा चित्त तो किसी दूसरी ही वस्तु में संलग्न है। उस दिन से उन्होंने स्कूल जाना छोड़ दिया।

कलकत्ते से ५ मील की दूरी पर उत्तर की ओर दक्षिणेश्वर में कालीदेवी का मंदिर है। श्री रामकृष्ण जी के ज्येष्ठ भ्राता इसी के पुजारी थे। इधर उधर महीनों भ्रमण करने के पश्चात् वे इसी मंदिर में काली की आराधना करने लगे परन्तु इनका चित्त रमता हुआ न दिखलाई पड़ा। इसी समय संयोगवश इनके बड़े भाई रोगग्रसित हुए और अन्त में मंदिर का सारा काम इन्हीं को अंगीकार करना पड़ा। उस दिन ये काली के पक्के उपासक बन गये।

काली पर उनका अटल विश्वास था; उनको अपनी और सब संसार की माता समझते थे। घंटों तालियाँ बजा बजा कर और भजन गा गा कर उनकी आराधना करते थे यहाँ तक कि पूजा करते करते उनको अपने देह की भी सुध-बुध जाती रहती थी। अपने इच्छानुसार दर्शन न पाने के कारण कभी कभी वे घंटों अश्रुपात करते थे। नाना प्रकार की गप उड़ने लगीं। किसी ने कहा रामकृष्ण

परमात्मा का सच्चा भक्त है और दूसरों ने कहा वह पागल हो गया है। स्वामी जी की माता और भाइयों ने जब यह दृश्य देखा तो रामकृष्ण का पाणिग्रहण रामचन्द्र मुखोपाध्याय की ५ वर्ष वयस्क दुहिता के साथ कर दिया।

इस सम्बन्ध से स्वामी जी की कोई क्षति न हुई। उनकी भक्ति और उत्साह सहस्रों गुणा और अधिक प्रगाढ़ होता गया। हाथ जोड़ कर देवी के सन्मुख वे फिर खड़े हो गये और कई दिनों तक रोया किये। लोगों ने समझा इनको कोई शारीरिक पीड़ा है अतः वे डाक्टर के पास ले गये किन्तु किसी डाक्टर की चिकित्सा कारगर न हुई। ढाका के एक चिकित्सक महोदय ने तो साफ साफ़ कह दिया कि संसार का कोई भी डाक्टर इनको नहीं अच्छा कर सकता। ये थोड़े दिनों में स्वयं अच्छे हो जायंगे।

कई दिनों तक रोने गाने पर भी जब देवी के दर्शन न हुये तो एक दिन इन्होंने शरीर छोड़ने का संकल्प किया परन्तु उसी दिन स्वप्न में काली ने दर्शन दिया। इस प्रकार के दर्शन पर भी इनको विश्वास न हुआ, नाना प्रकार से उसकी परीक्षा करने लगे। एक दिन उन्होंने मन में विचार किया यदि रानी रासमनी की दो युवती कन्यायें जो मुझसे सर्व प्रकार अपरिचित हैं, इस मंदिर में आ जायँ तो मैं समझूंगा कि काली के दर्शन हो गये। दूसरे दिन क्या देखते हैं कि दोनों कन्याएं हस्तबद्ध होकर उनके सामने आ खड़ी हुईं। इस दृश्य को देख कर रामकृष्ण को बड़ा आश्चर्य हुआ।

रामकृष्ण की पवित्र आत्मा इतने ही पर सीमाबद्ध नहीं रही किन्तु परमात्मा को साक्षात करने की इच्छा में शनैः २ उन्नति के उच्च शिखर पर आरूढ़ होती चली गई। उन्होंने १२ वर्ष पर्यन्त एक स्थान में कठिन तपस्या की। इस बीच में उनका ध्यान परमात्मा में निमग्न था, आँखें खुली थीं। जटा बड़े बड़े हो गये थे और शरीर बिलकुल परिवर्तित हो

गया था परन्तु उन्हें कुछ भी न मालूम हुआ। दूसरे चौथे उनका भतीजा हृदय दो चार कौर खिला जाता था। जब कभी उनका चित्त चाहता भंगियों और नीच जात वाले पुरुषों के मध्य काम करने लगते और अपनी माँ काली से प्रार्थना करते, कि हे माँ, मेरे हृदय से ब्राह्मणत्व का भाव निकाल दे; संसार के नरनारी तेरे ही अनेक रूप हैं।

कभी २ एक हाथ में मिट्टी और दूसरे में सोना चाँदी लेकर गंगा जी के किनारे बैठ जाते और अपनी आत्मा को संबोधित कर के कहते, "आत्मन्, सांसारिक पुरुष इसको रुपया कहते हैं, इससे घर बनवाये जा सकते हैं, अनाज घी और दूसरी वस्तुयें खरीदी जा सकती हैं; परन्तु इस से ब्रह्म ज्ञान नहीं मिल सकता। इसलिये इस रुपये को भी मिट्टी समझ। चाँदी सोने और मिट्टी में कुछ अंतर न समझते'। सब को मिला कर गंगा में फेंक देते। उनके शिष्य मथुरानाथ ने एक बार १५००) रु० मूल्य का एक साल उन्हें उढ़ा दिया। स्वामी जी ने तो पहिले स्वीकार कर लिया इसके अनंतर पृथ्वी पर फेंक दिया, पैरों तले खूब कुचला, उस पर थूका और फिर उसी से कमरा बटोरा।

इस प्रकार १२ वर्ष में बहुत कुछ ज्ञानोपार्जन करके वे योगाभ्यास करने लगे। कई वर्ष पर्य्यन्त शास्त्रानुकूल योगाभ्यास किया किन्तु तब भी उत्तरोत्तर ज्ञान वृद्धि की लव लगी रही। इसी बीच में तोतापुरी नामक सन्यासी से उनकी भेंट हुई। तोतापुरी महाराज को वेदान्त का अच्छा ज्ञान था। वे सदैव नग्न रहते और खुले मैदान में सोते थे। वर्षा और शिशिर ऋतु में भी वृक्षों के नीचे पड़े रहते और एक स्थान में तीन दिन से अधिक नहीं ठहरते थे। रामकृष्ण को गंगा के तीर बैठा देखकर वे उनके समीप गये और कहने लगे कि मैं तुम्हें वेदान्त की शिक्षा देना चाहता हूँ। रामकृष्ण जी ने कहा "महाराज आप ठहरिये। मैं काली जी की आज्ञा ले आऊं तब आप से अध्ययन करूँ।" वे मन्दिर गये और थोड़ी देर में लौटकर कहने लगे

मुझे वेदान्त की शिक्षा दीजिये। तीन दिन में उन्होंने सब सीख लिया। उनकी ऐसी विलक्षण बुद्धि को देखकर तोतापुरी ने कहा, "मेरे पुत्र जो कुछ मैंने कठिन परिश्रम करने के उपरान्त ४० वर्ष में सीखा है उसको तुमने केवल तीन दिन में सीख लिया। आज से अब तुम्हें मित्र कहकर संबोधित करूंगा।" वे रामकृष्ण के पास ११ मास रहे और स्वयं उनसे बहुत सी बातें सीख कर चले गये।

तोतापुरी के चले जाने के अनन्तर रामकृष्ण सदैव ब्रह्म में लीन रहने का प्रयत्न करने लगे। ६ मास तक लगातार निर्विकल्प समाधि में निमग्न रहे। इसी बीच में उन्हें खाना भी विस्मरण हो गया और उनका शरीर गलकर पंचतत्व में मिलना ही चाहता था कि एक संयासी उनके पास आ गये। वे उनके शरीर की रक्षा बराबर करते रहे। जब पुकारने पर भी होश में न आते तो डंडे से पीटते और जगाकर भोजन कराते। कभी कभी तो ऐसा होता था कि पीटने पर भी इनकी आंखें न खुलतीं। अन्तोगत्वा निराश होकर वह पश्चात्ताप करने लगते। इस घोर तपस्या से उनके आंव पड़ने लगी। यही कारण था कि ये होश में आये अन्यथा और कुछ समय तक समाधि में बैठे रहते। अच्छे होने के पश्चात् वे सब धर्मों की परीक्षा करने लगे। पहले वैष्णव धर्म की परीक्षा की। वृज की गोपियों की तरह जनाने कपड़े पहिन लेते और चारों ओर कृष्ण भगवान की खोज में इधर उधर घूमा करते। स्वप्न में कृष्ण भगवान के दर्शन हुए और उन्हें शान्ति मिली। तदनन्तर उन्होंने यवन और खीष्ट धर्म की परीक्षा की। प्रत्येक धर्म में शान्त्वना मिली, अन्ततः यह फल निकाला कि संसार के सब धर्म सच्चिदानन्द तक पहुँचने के भिन्न भिन्न मार्ग हैं; मुक्ति सभी धर्म द्वारा मनुष्य को मिल सकती है।

इन तमाम वर्षों में वे अपनी स्त्री को बिलकुल भूल गये। जिस पुरुष को अपनी देह तक की भी सुध-बुध न रहे उसके लिये स्त्री का भूलना कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। लड़की की अवस्था अब १७

वर्ष की थी वह अपने प्राणपति के दर्शन के लिए माता से आज्ञा मिलने पर ३०, ४० मील पैदल चलकर दक्षिणेश्वर के मंदिर में आ उपस्थित हुई। रामकृष्ण ने उसका अच्छा स्वागत किया और कहा "माता पुराना रामकृष्ण तो मर गया, नया रामकृष्ण सब स्त्रियों को मातृवत् देखता है।" उन्होंने फिर चन्दन, फूल, अगर इत्यादि वस्तुओं से उसकी अर्चना की। स्त्री ने कहा "स्वामिन् मुझे कुछ न चाहिये; मैं केवल पास रह कर आपकी सेवा सुश्रुषा और परमात्मिक ज्ञानोपार्जन करना चाहती हूं।" रामकृष्ण ने रहने की आज्ञा दे दी। वह भी संयासिनी होकर उसी मंदिर में रहने और अपने पति से शिक्षा ग्रहण करने लगी। यों तो कदाचित कुछ ही लड़कों की माँ हुई होती परन्तु अब सैकड़ों नर नारियों की अध्यात्मिक माँ बन गई।

रामकृष्ण योग की चरम सीमा तक पहुँच गये परन्तु उन्होंने किसी व्यक्ति के सामने दिखलाने का प्रयत्न कभी भी नहीं किया। वे अपने चेलों से कहा करते थे, "लोगों की बातों पर ध्यान न दो आत्मिक उन्नति करते चले जाओ योग शक्ति आप से आप आ जायगी"। स्वामी जी में सर्व श्रेष्ठ गुण यह था कि वे मनुष्य के शरीर को छूकर उसके विचारों को बदल सकते थे। कभी कभी तो ऐसा देखने में आया है कि स्पर्श मात्र से लोग समाधिस्थ हो गये और सांसारिक बातों को भूल कर देवी और देवताओं को प्रत्यक्ष देखने लगे। हालत यहां तक पहुँच गई थी कि सांसारिक पुरुष संसार की बातों से और कंजूस सोने और चाँदी से घृणा करने लगे।

लोगों को कष्ट में देख कर उन्हें कष्ट होता था। एक बार वृन्दाबन अपने शिष्य मथुरानाथ के साथ जाते समय एक गांव में ठहरे। वहाँ के रहने वाले दुख से चिल्ला रहे थे। बेचारों को पेट भर भोजन भी नहीं नसीब था। रामकृष्ण इस दृश्य को देखकर चीख मार मार कर रोने लगे और वहाँ से उस समय तक नहीं हटे जब तक मथुरादास ने कुछ कपड़े

और कुछ द्रव्य प्रत्येक निवासी को बुला बुलाकर नहीं दे दिया। धन से इनको बड़ी घृणा थी। मथुरादास की इच्छा थी कि दक्षिणेश्वर का मंदिर २५००० रुपये वार्षिक आय के साथ रामकृष्ण को दे दिया जाय परन्तु उन्होंने एक दम अस्वीकार कर दिया और कहा यदि आप ऐसा करने का प्रयत्न करेंगे तो मैं यहाँ से भाग जाऊंगा। एक अन्य धनी सज्जन ने भी २५००० रुपये देना चाहा परन्तु उन्होंने उसे भी वही उत्तर दिया।

वे प्रायः कहा करते थे कि गुलाब का फूल जब खिल जाता है और उसकी सुरभि चारों ओर फैलने लगती है तो भौंरे आप से आप आ जाते हैं। यह कथन उन्हीं के जीवन में बिलकुल सत्य उतरा। जब वे भले प्रकार ज्ञानोपार्जन कर चुके तो प्रत्येक धर्म के सभासद सैकड़ों और सहस्रों की संख्या में उनके पास जाकर उपदेशामृत पान करने लगे। प्रातः से सायंकाल तक उनके इर्द गिर्द खचाखच भीड़ लगी रहती और वे सब की आत्मिक क्षुधा निवारण करते। कभी कभी तो खाने पीने का भी साव-काश न मिलता। उनकी सादगी, निःस्वार्थ भाव और भोली भाषा को देखकर बड़े बड़े योगी उनके पास आते और दीक्षा पाकर उन्हें अपना आध्यात्मिक गुरु मानने लगते थे।

१८८५ ई० के प्रारंभ में वे गले की व्याधि से पीड़ित हुए। डाक्टरों ने कहा आप उपदेश करना छोड़ दीजिये तभी इस रोग से छुटकारा मिल सकता है। परन्तु उन्होंने स्पष्टतः डाक्टरों से कह कर दिया "उपदेश करना बंद नहीं कर सकता, एक आत्मा को भी संसार बंधन से मुक्त कर सका तो शारीरिक व्यथा की कौन चलावे यदि मृत्यु भी हो जाय तो कोई परवाह नहीं"। अंत में रोग ने पूर्ण रूप से धर दबाया और १६ अगस्त १८८६ ई० को १० बजे रात इनकी पवित्र आत्मा सदा सर्वदा के लिए ब्रह्म में लीन हो गई।

———

ईश्वरीय बोध

अथवा

परमहंस श्रीरामकृष्ण के उपदेश



१. आकाश में रात्रि के समय बहुत से तारे दिखलाई पड़ते हैं परन्तु सूर्योदय होने पर वे अदृश्य हो जाते हैं। इससे यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि दिन के समय आकाश में तारे हैं नहीं। उसी प्रकार ऐ मनुष्यो, मायाजाल में फंसने के कारण यदि परमात्मा न दिखलाई पड़े तो मत कहो कि परमेश्वर नहीं है।

२. जल एक ही वस्तु है परन्तु लोगों ने उसको अनेक नाम दे रक्खा है। कोई पानी कहता है, कोई वारि कहता और कोई अकुआ कहता है। उसी प्रकार सच्चिदानन्द है एक परन्तु उसके नाम अनेक हैं। कोई अल्लाह के नाम से पुकारता है, कोई हरि का नाम लेकर याद करता है और कोई ब्रह्म कह कर उसकी आराधना करता है।

३. एक समय दो मित्र वार्तालाप कर रहे थे। संयोगवश उनकी दृष्टि सामने एक गिरगिटान पर पड़ी। पहिले ने कहा, "इसका रंग लाल है।" दूसरे ने कहा, 'नहीं इसका रंग नीला है, "वे परस्पर इस मरहले को न निपटा सके। निदान वे एक मनुष्य के पास गये जो सदैव उस वृक्ष के नीचे रहा करता था। पहिले ने आँखें लाल लाल कर के कहा कि

क्या इसका रंग लाल नहीं है ? उस भद्र पुरुष ने उत्तर दिया "हाँ है।" तब दूसरे ने पूछा कि क्या उसका रंग नीला नहीं है ? उसने नम्रता-पूर्वक फिर कहा कि हाँ है। वह जानता था कि गिरगिटान बार बार रंग बदला करता है। इसी कारण उसने दोनों का उत्तर ठीक बतलाया। उसी प्रकार जिसने परमात्मा का एक ही रूप देखा है वह उसे केवल उसी रूप में जानता है। परन्तु जिसने उसके अनेक रूप देखे हैं वही यह कह सकता है कि ये सब परमात्मा के भिन्न भिन्न स्वरूप हैं। सचमुच वह साकार और निराकार दोनों है। उसके बहुत रूप तो ऐसे हैं जो किसी को मालूम तक नहीं।

४. बिजली की रोशनी से नगर के भिन्न २ स्थानों में प्रकाश न्यून अधिक (काम व बेश) सब जगह पहुँचता है किन्तु रोशनी का उद्गम एक ही स्थान से होता है, उसी प्रकार सब युगों और सब देशों के धर्मोपदेशक अनेकों बिजली के खंभे हैं जिनके द्वारा सर्वशक्तिमान परमात्मा से प्राप्त हुये आत्मा ज्ञान का प्रसार जनसाधारण में बराबर होता रहता है।

५. हाइड और सीक (Hide and seek) के खेल में जब एक खिलाड़ी पाले को छू लेता है तो वह राजा हो जाता है, दूसरे खिलाड़ी उसे चोर नहीं बना सकते। उसी प्रकार एक बार ईश्वर के दर्शन हो जाने से संसार के बन्धन फिर हम को बाँध नहीं सकते। जिस प्रकार पाले को छू लेने पर खिलाड़ी जहाँ चाहे वहाँ निडर घूम सकता है, उसे कोई चोर नहीं बना सकता; उसी प्रकार जिसको ईश्वर के चरण स्पर्श का आनन्द एक बार मिल जाता है उसे फिर संसार में किसी का भय नहीं रह जाता। वह सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त हो जाता है और किसी भी माया मोह में फिर नहीं फँसता।

६. पारस पत्थर के स्पर्श से लोहा एक बार जब सोना बन जाता है तो उसे चाहे ज़मीन में गाड़ दो अथवा कतवार में फेंक दो वह सोना

ही बना रहता है फिर लोहा नहीं हो जाता; उसी प्रकार सर्व शक्तिमान परमात्मा के चरण स्पर्श से जिसका हृदय एक बार पवित्र हो जाता है तो उसका फिर कुछ नहीं बिगड़ सकता चाहे वह संसार के कोलाहल में रहे अथवा जंगल में एकान्त वास करे।

७. पारस पत्थर के स्पर्श से लोहे की तलवार सोने की हो जाती है और यद्यपि उसकी सूरत वैसी ही रहती है किन्तु लोहे की तलवार की तरह उससे लोगों को हानि नहीं पहुँच सकती। उसी प्रकार ईश्वर के चरण स्पर्श से जिसका हृदय पवित्र हो जाता है उसकी सूरत शकल तो वैसी ही रहती है किन्तु उससे दूसरों को हानि नहीं पहुंच सकती।

८. समुद्र तल में स्थित चुम्बक की चट्टान समुद्र के ऊपर चलने वाले जहाज़ को अपनी ओर खींच लेता है, उसके कीले निकाल डालता है, सब तख्तों को अलग अलग कर देता है और जहाज़ को समुद्र में डुबो देता है। उसी प्रकार जीवात्मा को जब आत्मज्ञान हो जाता है, जब वह अपने को ही समान रूप से विश्व भर में देखने लगता है तो मनुष्य का व्यक्तित्व और स्वार्थ एक क्षण में नष्ट हो जाते हैं और उसका जीवात्मा परमेश्वर के अगाध प्रेम सागर में डूब जाता है।

९. दूध पानी में जब मिलाया जाता है तो वह तुरन्त मिल जाता है; किन्तु दूध का मक्खन निकाल कर डालने से वह पानी में नहीं मिलता बल्कि उसके ऊपर तैरने लगता है। उसी प्रकार जब जीवात्मा को ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है तो वह अनेक बद्ध प्राणियों के बीच में निरन्तर रहता हुआ भी उनके बुरे संस्कारों से प्रभावित नहीं हो सकता।

१०. नवोढ़ा तरुणी को जब तक बच्चा नहीं होता तब तक वह गृहकार्य्य में निमग्न रहती है किन्तु बच्चा हो जाने पर गृहकार्य्यों से वह धीरे धीरे बेपरवाह होती जाती है और बच्चे की ओर वह अधिक ध्यान देती है। दिन भर उसे बड़े प्रेम के साथ चूमती चाटती और प्यार

करती है। इसी प्रकार मनुष्य अज्ञान की दशा में संसार के सब कार्य्यों में लगा रहता है किन्तु ईश्वर के भजन में आनन्द पाते ही वे उसे नीरस मालूम होने लगते हैं और वह उनसे अपना हाथ खींच लेता है। ईश्वर की सेवा करने और उसकी इच्छानुसार चलने ही में उसे अत्यन्त आनन्द मिलता है। दूसरे किसी भी काम में उसको सुख नहीं मिलता। ईश्वर दर्शन के सुख से फिर वह अपने को खींच भी नहीं सकता।

११. सिद्ध को कौन सी स्थिति प्राप्त होती है? (पहुँचा हुआ साधू और भली भाँति पका हुआ भोजन दोनों सिद्ध कहलाते हैं। सिद्ध शब्द पर श्लेष है।) जिस प्रकार उबालने पर आलू मुलायम और गुद-गुदा (pulpy) हो जाता है उसी प्रकार मनुष्य जब कठिन तपस्या से सिद्ध हो जाता है तो वह दया और नम्रता से भर जाता है।

१२. संसार में पांच प्रकार के सिद्ध पाये जाते हैं:—(१) स्वप्न-सिद्ध—जिनको स्वप्न ही के साक्षात्कार से पूर्णता प्राप्त होती है। (२) मन्त्रसिद्धि—जिन्हें दिव्य मन्त्रों से पूर्णता प्राप्त होती है। (३) हाटाठ सिद्ध—वे कहलाते हैं जिन्हें एकाएक सिद्धि मिल जाती है और जो एकाएक पापों से मुक्त हो जाते हैं जिस प्रकार एक दरिद्र को एकाएक द्रव्य मिल जाय या एकाएक उसका विवाह एक धनवान स्त्री से हो जाय और वह धनी बन जाय। (४) कृपासिद्ध—वे कहलाते हैं जिन्हें ईश्वर की कृपा से पूर्णता प्राप्त होती है। जिस प्रकार बन को साफ करते हुए किसी मनुष्य को पुराना तालाब या घर मिल जाय और उनके बनवाने में उसे फिर कष्ट न उठाना पड़े उसी प्रकार कुछ लोग भाग्यवश किंचित् परिश्रम करने ही से सिद्ध हो जाते हैं। (५) नित्यसिद्ध—वे कहलाते हैं जो सदैव सिद्ध रहते हैं। गोर्ड (gourd) और लौकी की लतरों में फल लग जाने पर फूल आते हैं उसी प्रकार नित्य सिद्ध गर्भ ही से सिद्ध पैदा होता है उसकी बाहरी तपस्या तो मनुष्य जाति को सद् मार्ग पर लाने के लिये एक नाम मात्र का साधन है।

१३. जब मनुष्य बाजार से दूर रहता है तो उसे "होहो" की आवाज़ अस्पष्ट रूप से सुनाई पड़ती है किन्तु जब वह बाज़ार में आजाता है तो हो हो की आवाज बन्द हो जाती है और वह अपनी आँखों से साफ साफ़ देखता है कि कौन आदमी आलू खरीद रहा है और कौन बैंगन खरीद रहा है और कौन दूसरी चीजें खरीद रहा है। उसी प्रकार जब तक मनुष्य ईश्वर से दूर रहता है तब तक वह तर्क कुतर्क, बाद-विवाद आदि बातों में पड़ा रहता है; किन्तु जब वह ईश्वर के समीप पहुँच जाता है तो तर्क कुतर्क और बाद-विवाद सब बन्द हो जाते हैं और वह ईश्वरीय गुह्य बातों को उत्तम प्रकार स्पष्ट रूप से समझता है।

१४. ईसा मसीह को जब सूली दी गई उस समय उसको घोर वेदना हो रही थी तब भी उसने प्रार्थना की कि उसके शत्रु यहूदी क्षमा किये जायं। इसका क्या कारण है? जब एक साधारण कच्चे नारियल में कीला ठोंका जाता है तो वह भीतर की गरी में भी घुस जाता है लेकिन जब वही कीला एक पुराने पके हुये नारियल में ठोंका जाता है तो गरी में नहीं घुसता क्योंकि पके हुये नारियल का गोला खोपड़ी से अलग हो जाता है। यीसू मसीह पके हुये नारियल की तरह थे। उनकी अन्तरात्मा शरीर से विलग थी इसीलिये शारीरिक वेदना उन्हें नहीं मालूम हुई। कीलें उसके शरीर में आरपार ठोंक दी गई थीं तब भी वह शान्ति के साथ अपने शत्रुओं की भलाई के लिये प्रार्थना कर रहा था।

१५. घर की छत पर मनुष्य सीढ़ी, बाँस, रस्सी आदि कई साधनों के योग से चढ़ सकता है। उसी प्रकार ईश्वर तक पहुँचने के लिये भी अनेकों मार्ग और साधन हैं। संसार का प्रत्येक धर्म इन मार्ग में से एक मार्ग को प्रदर्शित करता है।

१६. एक माँ के कई लड़के होते हैं। एक को वह ज़ेवर देती है, दूसरे को खिलौने देती है और तीसरे को मिठाई देती है सब अपनी-

अपनी चीज़ों में लग जाते हैं और माँ को भूल जाते हैं। माँ भी अपने घर का धन्धा करने लगती है। किन्तु इस बीच में जो लड़का अपनी चीज को फेंक देता है वह अपनी माँ को चिल्लाने लगता है और माँ दौड़ कर उसको चुप करती है; उसी प्रकार से ऐ मनुष्यो, तुम लोग संसार के कारोबार और अभिमान में मस्त होकर अपनी जगमाता को भूल गये हो। जब तुम उन्हें छोड़ कर उसको पुकारोगे तब वह शीघ्र ही आवेगी और तुमको अपने गोद में उठा लेगी।

१७. परमात्मा के अनेक नाम और अनेक स्वरूप हैं। जिस नाम और जिस स्वरूप से हमारा जी चाहे उसी नाम और उसी स्वरूप से हम उसे देख सकते हैं।

१८. यदि ईश्वर सर्वव्यापी है तो हम उसे देख क्यों नहीं सकते? जिस तालाब के बीच में बड़ी लम्बी लम्बी घास उगी हुई हो उसका पानी हम नहीं देख सकते। पानी को देखना है तो घास को निकालना होगा। उसी प्रकार माया का परदा आँखों में पड़ने के कारण हम ईश्वर को नहीं देख सकते। यदि ईश्वर को देखना है तो आँखों से माया का परदा निकालना होगा।

१९. हम जगन्माता को क्यों नहीं देख सकते? वह उच्च कुलोत्पन्न स्त्री की तरह है जो परदे के भीतर से अपना काम करती हुई सब को देख सकती है किन्तु उसे कोई नहीं देख सकता। उसके भक्त ही केवल परदे के पीछे जाकर उसे देख सकते हैं।

२०. वादविवाद न करो। जिस प्रकार तुम अपने धर्म और विश्वास पर दृढ़ रहते हो उसी प्रकार दूसरों को भी अपने धर्म और विश्वास पर दृढ़ रहने की पूरी स्वतन्त्रता दो। केवल वादविवाद से तुम दूसरों को उनकी गलती न समझा सकोगे। परमात्मा की कृपा होने पर ही प्रत्येक पुरुष अपनी गलती समझेगा।

२१. कमरे में दीपक को लाते ही सैकड़ों वर्षों का अन्धकार

एक दिन दूर हो जाता है। उसी प्रकार ईश्वर की केवल एक कृपा कटाक्ष से असंख्य जन्मों के पाप नष्ट हो सकते हैं।

२२ मलय पर्वत की हवा जब चलती है तो जिन वृक्षों में "सत्व" होता है वे सब चन्दन के वृक्ष हो जाते हैं। बबूल, बांस और केले के वृक्ष जिनमें 'सत्व' नहीं होता जैसे के तैसे बने रहते हैं। उसी प्रकार परमेश्वर को कृपा का वायु जब बहता है तो जिनके हृदयों में भक्ति और पुण्य के बीज वर्तमान हैं वे एक दिन पवित्र हो जाते हैं और उनमें ईश्वरीय तेज भर जाता है किन्तु जो निरुपयोगी और प्रपंची होते हैं वे जैसे के तैसे बने रहते हैं।

२३. एक लड़के ने अपनी माँ से कहा, "अम्मा, जगा दे, मुझे भूख लगेगी।" माँ ने उत्तर दिया, "बच्चे घबड़ा नहीं तेरी भूख तुझे स्वयं जगा देगी।"

२४. जब मुझे प्रतिदिन अपने पेट की चिन्ता करनी पड़ती है तो मैं उपासना किस प्रकार कर सकता हूँ? जिसकी उपासना तू करता है वह तेरी आवश्यकताओं को पूर्ण करेगा। तुझे पैदा करने के पहिले ही ईश्वर ने तेरे पेट का प्रबन्ध कर दिया है।

२५. ऐ भक्त, यदि ईश्वर की गुह्य बातों को जानने की तेरी लालसा है तो वह स्वयं सद्गुरू भेजेगा। गुरू को ढूँढ़ने में तुझे कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं है।

२६. एक बार एक महात्मा नगर में होकर जा रहे थे। संयोग से उनके पैर से एक दुष्ट आदमी का अंगूठा कुचल गया। उसने क्रोधित होकर महात्मा जी को इतना मारा कि वे बेचारे मूर्छित होकर ज़मीन पर गिर पड़े। बहुत दवा दारू करके उनके चेले बड़ी मुश्किल से उनको होश में लाये। तब तो एक चेले ने महात्मा से पूछा, "यह कौन आपकी सेवा कर रहा है!" महात्मा ने उत्तर दिया, "जिसने मुझे पीटा था"। एक सच्चे साधू को मित्र और शत्रु में भेद नहीं मालूम होता।

२७. मनुष्य तकिये की खोली के समान है। किसी खोली का रंग लाल, किसी का नीला, और किसी का काला होता है पर रुई सब में है। यही हाल मनुष्यों का भी है। उनमें से कोई सुन्दर है, तो कोई काला है, कोई सज्जन है तो कोई दुर्जन है किन्तु परमात्मा सभी में मौजूद है।

२८. सब प्रकार के जल में नारायण व्याप्त हैं किन्तु सब प्रकार का जल पीने योग्य नहीं होता। उसी प्रकार यद्यपि यह सत्य है कि परमात्मा प्रत्येक स्थान में उपस्थित है किन्तु प्रत्येक स्थान में मनुष्य का जाना ठीक नहीं। जिस प्रकार कोई पानी पैर धोने के काम में आता है, कोई नहाने के काम आता है, कोई पीने के काम आता है और कोई हाथ से स्पर्श तक नहीं किया जाता। उसी प्रकार स्थानों में भी भिन्नता है। किसी स्थान के तो पास ही तक जाना चाहिये, किसी स्थान के भीतर घुस जाना चाहिये, और कुछ स्थानों को दूर ही से नमस्कार करना चाहिये।

२९. यह सच है कि परमात्मा का बास व्याघ्र में है परन्तु उसके पास जाना उचित नहीं। उसी प्रकार यह भी ठीक है कि परमात्मा दुष्ट से भी दुष्ट पुरुष में वर्तमान है परन्तु उसका संग करना उचित नहीं।

३०. एक गुरू जी ने अपने चेले को उपदेश दिया कि जिस वस्तु का अस्तित्व है वह परमेश्वर ही है। भीतरी मतलब को न समझकर चेले ने उसका अर्थ अक्षरशः लगाया। एक समय जब वह मस्त सड़क पर जा रहा था तो सामने से एक हाथी आता हुआ दिखलाई पड़ा। महावत ने चिल्ला २ कर कहा, "हट जाओ, हट जाओ"। परन्तु उस लड़के ने एक न सुनी। उसने कि मैं ईश्वर हूँ, और हाथी भी ईश्वर है; ईश्वर से ईश्वर को किस बात का डर। इतने में हाथी ने सूंड से एक ऐसी चपेट मारी कि वह एक कोने में जा गिरा। थोड़ी देर बाद किसी प्रकार संभल कर उठा और गुरु के पास जाकर सब हाल बयान किया। गुरु जी ने हँस कर कहा, "ठीक है, तुम ईश्वर हो और हाथी भी ईश्वर है, परन्तु

परमात्मा महावत के रूप में हाथी पर बैठा तुम्हें आगाह कर रहा था। तुमने उसके कहने को क्यों नहीं सुना ?"

२१. एक किसान ऊख के खेत में दिन भर पानी भरता था किन्तु सायंकाल जब देखता तो उसमें पानी का एक बूंद भी नहीं दिखलाई पड़ता था। सब पानी अनेकों छेदों द्वारा ज़मीन में सोख जाता था। उसी प्रकार जो भक्त अपने मन में कीर्ति, सुख, संपत्ति, पदवी आदि विषयों की चिन्ता करता हुआ ईश्वर की पूजा करता है वह परमार्थ के मार्ग में कुछ भी उन्नति नहीं कर सकता। उसकी सारी पूजा वासनारूपी बिलों द्वारा बह जाती है और जन्म भर पूजा करने के अनन्तर वह देखता क्या है कि जैसी हालत मेरी पहिले थी वैसी ही अब भी है; तरक्की कुछ भी नहीं हुई।

२२. आराधना के समय उन लोगों से दूर रहो जो भक्त और धर्मनिष्ठ लोगों का उपहास करते हों।

२३. दूध और पानी मिलाने से मिल जाते हैं; उसी प्रकार अपने सुधार की ओर लगा हुआ नवीन भक्त जब हर प्रकार के सांसारिक लोगों में बिना किसी सोच विचार के मिल जाता है तो वह अपने ध्येय को भूल जाता है और उसकी पहिले की श्रद्धा, और उसका प्रेम और उत्साह धीरे धीरे लोप हो जाते हैं।

२४. दल (पंथ) का उत्पन्न करना क्या अच्छा है ? (यहाँ "दल" शब्द पर श्लेष है। दल का एक अर्थ है पंथ और दूसरा है काई (शेवाल)। बहते हुये पानी पर दल (काई) नहीं उत्पन्न हो सकता वह छोटे छोटे तालों के बँधे हुये पानी में उत्पन्न होता है। उसी प्रकार जिसका हृदय सचाई के साथ ईश्वर की ओर लगा हुआ है उसके पास दूसरी बातों पर विचार करने का समय ही नहीं रहता। दल (पंथ) वे ही बनाते हैं जो यश और प्रतिष्ठा के भूखे रहते हैं।

२५. जिस प्रकार मुँह से उगला हुआ भोजन उच्छिष्ट हो जाता

है उसी प्रकार वेद, तंत्र, पुराण और दूसरे सब धर्मग्रन्थ उच्छिष्ट ऐसे हो गये हैं क्योंकि उनकी रचना मनुष्यों ने की है और उसी बात को उन्होंने बारबार दोहराया है। किन्तु ब्रह्म अथवा परमात्मा कभी उच्छिष्ट नहीं होने का क्योंकि उसके वर्णन करने के लिये अभी तक किसी की वाणी समर्थ नहीं हुई।

२६. जिस प्रकार मेघ सूर्य्य को ढक लेता है उसी प्रकार माया परमेश्वर को ढके रहती है। मेघ के हट जाने से सूर्य्य दिखलाई पड़ता है; उसी प्रकार माया के दूर होने से परमेश्वर के दर्शन होते हैं।

३७. एक पुरोहित जी अपने एक शिष्य के घर जा रहे थे। उनके साथ कोई नौकर नहीं था। मार्ग में एक चमार मिला। उन्होंने उससे कहा, "क्यों जी भलेमानुस, क्या तुम मेरे नौकर बन कर मेरे साथ चलोगे? तुमको पेट भर उत्तम भोजन मिलेगा किसी बात की कमी न होगी।" चमार ने उत्तर दिया, "मैं तो शूद्र हूँ, मैं आपका नौकर कैसे बन सकता हूँ।" पुरोहित जी ने कहा, "इसकी कोई परवाह नहीं। किसी से कहना नहीं कि मैं शूद्र हूँ और न किसी से बोलना या अधिक जानकारी करना।" चमार राज़ी हो गया। सन्ध्या समय जब कि पुरोहित भी संध्या कर रहे थे, एक दूसरा ब्राह्मण आया और उसने नौकर से कहा, "क्यों रे? जाकर मेरा जूता तो उठा ला।" नौकर ने कोई उत्तर नहीं दिया। ब्राह्मण ने जूता लाने के लिये फिर कहा किन्तु उसने फिर भी उत्तर नहीं दिया। ब्राह्मण बार बार कहता रहा और नौकर टस से मस नहीं हुआ। आख़िरकार क्रोध में आकर ब्राह्मण ने कहा "क्यों रे तुझे इतना घमण्ड हो गया कि अब तू ब्राह्मण की आज्ञा नहीं मानता। तेरा क्या नाम है? क्या तू चमार नहीं है?" चमार काँपने लगा। उसने पुरोहित जी की ओर देख कहा, "महाराज, मुझे तो इन्होंने पहिचान लिया, अब मैं नहीं ठहर सकता" यह कह कर

वह लम्बा हुआ। इसी प्रकार माया जब पहिचान ली जाती है तो वह भाग जाती है।

३८. हरी जब सिंह का चेहरा अपने मुँह में लगा लेता है तो वह बड़ा भयंकर दिखलाई पड़ता है। उसको लगाये हुये वह अपनी छोटी बहिन के पास जाता है और किलकारी मारकर उसे डरवाता है। वह घबड़ा कर एकदम ज़ोर से चिल्लाने लगती है और सोचती है कि अरे, अब तो मैं भाग भी नहीं सकती, यह दुष्ट तो मुझे खा जायगा। किन्तु हरी जब सिंह का चेहरा उतार डालता है तो बहिन अपने भाई को पहिचान लेती है और उसके पास जाकर प्रेम से कहती है, "अरे यह तो मेरा प्यारा भाई है।" यही दशा संसार के मनुष्यों की भी है। वे माया के झूठे जाल में पड़कर घबड़ाते और डरते हैं किन्तु माया के जाल को काटकर जब वे ब्रह्म के दर्शन कर लेते हैं तो उनकी घबड़ाहट और उनका डर छूट जाता है। उनका चित्त शान्त हो जाता है और परमात्मा को हउवा न समझ कर वे उसे अपनी प्यारी आत्मा समझने लगते हैं।

३९. जीवात्मा और परमात्मा में क्या सम्बन्ध है? पानी के प्रवाह में लकड़ी के तख़्ते को तिरछा रखने से जिस प्रकार पानी के दो भाग दिखलाई पड़ते हैं, उसी प्रकार ब्रह्म अभेद्य होता हुआ भी माया के कारण दो दिखलाई पड़ता है। वास्तव में दोनों एक ही चीज़ हैं।

४०. पानी और उसका बुलबुला एक ही चीज़ है। बुलबुला पानी से बनता है, पानी में तैरता है और अन्त में फूटकर पानी ही में मिल जाता है; उसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा एक ही चीज़ है, भेद केवल इतना है कि एक छोटा होने से परमित है और दूसरा अनन्त है; एक परतन्त्र है और दूसरा स्वतन्त्र है।

४१. समुद्र का पानी दूर से गहरा नीला दिखलाई पड़ता है किन्तु पास जाकर देखने से वह साफ़ और निर्मल दिखलाई पड़ता है;

उसी प्रकार श्रीकृष्ण दूर से नीले दिखलाई पड़ते हैं किन्तु वास्तव में ऐसे नहीं हैं। वे शुद्ध और निर्मल हैं।

४२. जिस प्रकार एक बड़ा और प्रचंड शक्ति का जहाज़ समुद्र पर छोटी छोटी नावों को खींचता हुआ बड़े वेग से चलता है; उसी प्रकार ईश्वर का जब अवतार होता है तो वह बड़ी सुगमता के साथ हजारों स्त्री पुरुषों को माया के समुद्र से पार करवाकर स्वर्ग पहुँचाता है।

४३. समुद्र में ज्वारभाटा आने से उसमें गिरनेवाली नदियों, नालों और आसपास की ज़मीन पर पानी चढ़ जाता है, और चारों ओर जल ही जल दिखलाई पड़ता है; किन्तु वर्षा का पानी सदा के मार्ग से बहकर निकल जाता है। उसी प्रकार जब परमात्मा का अवतार होता है तो उसकी कृपा से सब का उद्धार होता है; सिद्ध पुरुष तो बड़े परिश्रम के साथ अपना ही उद्धार मुश्किल से कर पाते हैं।

४४. प्रवाह में बहते हुए लकड़ी के कुन्दे के ऊपर सैकड़ों पक्षी बैठ जाते हैं तब भी वह नहीं डूबता, किन्तु बहते हुये बेत पर केवल एक कौव्वा यदि बैठ जाय तो वह तुरन्त डूब जाता है; उसी प्रकार जब ईश्वर का अवतार होता है तो उसकी शरण लेकर सैकड़ों मनुष्य अपना उद्धार कर लेते हैं। सिद्ध पुरुष तो बड़े परिश्रम के साथ केवल अपना ही उद्धार मुश्किल से कर पाते हैं।

४५. रेलगाड़ी का इञ्जन वेग के साथ चलकर ठिकाने पर अकेला ही नहीं पहुँचता बल्कि अपने साथ साथ बहुत से डब्बों को भी खींचकर पहुँचा देता है। यही हाल अवतारों का भी है। पाप के बोझ से दबे हुये सैकड़ों मनुष्यों को वे ईश्वर के पास पहुँचाते हैं।

४६. एक अवतार दूसरे अवतार का मान नहीं करता, इसका क्या कारण है? इसका उत्तर बड़ा सरल है। जादूगर दूसरे जादूगर का तमाशा नहीं देखता; उसके खेल और हाथ की सफाई को देखने के लिये जनसाधारण इकट्ठा होते हैं।

४७. वज्र वातुल के बीज नीचे को नहीं गिरते, हवा उनको दूर उड़ा ले जाती है और वहीं पर वे जड़ पकड़ते हैं । उसी प्रकार एक बड़े महात्मा की आत्मा अपनी जन्म भूमि से दूरस्थ प्रदेश में प्रकट होती है और वहीं पर उसकी सराहना भी होती है ।

४८. दीपक अपने चारों ओर के स्थानों पर प्रकाश फेंकता है लेकिन उसके नीचे सदा अंधेरा रहता है; उसी प्रकार महात्माओं के पास रहनेवाले मनुष्य उनके महत्व को नहीं समझ सकते । दूर रहनेवाले उनकी अद्‌भुत शक्ति और आत्मतेज से मोहित हो सकते हैं ।

४९. "जो कोई हमें उपदेश देता है वही हमारा गुरू है" ऐसा कहने की अपेक्षा एक खास आदमी को गुरू कह कर पुकारने की क्या आवश्यकता है ? अपरिचित देश जाने पर केवल उसी पुरुष की सलाह से काम करना चाहिये जिसे वहाँ का पूर्ण ज्ञान है । हर प्रकार के बहुत से लोगों की सलाह पर चलने से गड़बड़ी पैदा हो सकती है । उसी प्रकार ईश्वर तक पहुँचने के लिये आँख मूँद कर गुरू की आज्ञा माननी चाहिये । एक खास गुरू की आवश्यकता इसी से सिद्ध होती है ।

५०. उस पुरुष को गुरू की आवश्यकता नहीं जो सचाई और लगन के साथ ईश्वर का ध्यान कर सकता है; परन्तु ऐसे पुरुष बहुत कम हैं इसीलिये गुरू की आवश्यकता है । गुरू एक ही होता है, उपगुरू बहुत से हो सकते हैं । जिससे कुछ भी शिक्षा मिले वह उपगुरू है । श्रीमहाराज दत्तात्रेय जी ने २४ उपगुरू किये थे ।

५१. एक अवधूत ने गाजे बाजे के साथ जाती हुई एक बारात को देखा, पास ही उसने अपने लक्ष पर ध्यान लगाये हुये एक चिड़ीमार को देखा । वह अपने शिकार के ध्यान में मस्त था, बाजे का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था । एक बार घूमकर उसने देखा तक नहीं । अवधूत ने लपक कर चिड़ीमार को सलाम किया और उससे कहा, "जनाब आप हमारे गुरू हैं; मैं चाहता हूँ

कि आराधना के समय मेरा भी ध्यान ईश्वर में उसी प्रकार लगे जिस प्रकार तुम्हारा ध्यान अपने शिकार पर लगा हुआ है।"

४२. कोई मछुआहा तालाब में मछली फँसा रहा था। अवधूत ने उसके पास जा कर पूछा, भाई अमुक स्थान तक कौन सा रास्ता जाता है। रस्सी के हिलने से मालूम होता था कि मछली फँसने के करीब थी, इसलिये वह कुछ न बोला, अपना ध्यान उसी ओर लगाये बैठा रहा। जब मछली फँस गई तो घूम कर उसने पूछा; "आप क्या कह रहे थे?" अवधूत ने उसे प्रणाम किया और कहा, "आप मेरे गुरु हैं, जब मैं परमात्मा में ध्यान लगाने बैठूँ तो मेरा ध्यान आपकी तरह किसी और वस्तु में न जाकर केवल उसी परब्रह्म में लगे।"

४३. एक बगुला मछली पकड़ने के लिये धीरे २ चल रहा था। पीछे उस पर एक बहेलिया निशाना लगा रहा था परन्तु बगुले को इस बात की कुछ भी ख़बर न थी। अवधूत ने जाकर बगुले को प्रणाम किया और कहा, "जब मैं ध्यान लगाने बैठूँ तो आपकी तरह पीछे न घूमकर मैं भी केवल उसी परमात्मा में लीन रहूँ।"

४४. एक चील्ह चोंच में एक मछली लिये उड़ी जा रही थी और बहुत से कौव्वे और दूसरी चील्हें मछली को छीनने के लिये उसका पीछा कर रहे थे। जिस ओर वह चील्ह जाती थी उसी ओर वे सब भी उसका पीछा करते थे। अन्त में थककर उसने मछली छोड़ दी और दूसरी चील्ह ने उसे लपककर पकड़ लिया। अब कौव्वे और चील्हें दूसरी चील्ह का पीछा करने लगे। पहिली चील वृक्ष की एक डाल पर निर्विघ्न शान्त बैठ गई। अवधूत ने पास जाकर उसे प्रणाम किया और कहा, "हे चील्ह, तुम हमारे गुरू हो, तुमने मुझे यह उपदेश दिया है कि मनुष्य जब तक संसार की वासनाओं को नहीं छोड़ता तब तक वह अशान्त और अस्वस्थ रहता है।"

४५. शिष्य को चाहिये कि वह अपने गुरू की टीका टिप्पणी न

करे। जो वे कहें उस पर आँख मूँद कर विश्वास करे। बङ्गाली कविता में ऐसा कहा गया है कि "मेरे गुरु शराब खाने (Tanem) में भी जांय तो भी वे पवित्र हैं।"

५६. मानवी गुरू कान में मन्त्र फूंकते हैं और दैवी गुरू आत्मा में तेज।

५७. चार अन्धे एक हाथी को देखने लगे। एक ने हाथी का पैर पकड़ पाया और बोला, "हाथी खम्भे के समान है।" दूसरे ने सूँड़ पकड़ा और कहा हाथी मोटे डंडे के समान है। तीसरे का हाथ पेट पर पड़ा। उसने कहा, हाथी एक घड़े के समान है। चौथे के हाथ में कान आये। उसने कहा हाथी सूप के सदृश है। चारों हाथी की बनावट के विषय में झगड़ने लगे। एक यात्री उस मार्ग से जा रहा था। उसने उनको झगड़ते हुये देखकर पूछा, "तुम लोग क्यों लड़ रहे हो?" उन्होंने सारी कथा आद्योपान्त कह सुनाई और हाथ जोड़ कर कहा कि आप इस मामले को निपटा दीजिये। उस यात्री ने कहा, "तुममें से किसी ने भी हाथी को नहीं देखा। हाथी खम्भे के समान नहीं है, उसके पैर खम्भे के समान हैं। यह घड़े के समान नहीं है। इसका पेट घड़े के समान है। यह सूप के समान नहीं है। इसके कान सूप के समान हैं। यह मोटे डंडे के समान है। हाथी इन सब से मिलकर बना है। उसी प्रकार (इस संसार में) वे ही झगड़ा बखेड़ा करते हैं जिन्होंने परमात्मा के केवल एक ही रूप को देखा है।

५८. मेढक की दुम जब झड़ जाती है तो वह थल और जल दोनों में रह सकता है। उसी प्रकार मनुष्य का अज्ञान रूपी अँधेरा जब नष्ट हो जाता है तो वह स्वतन्त्र होकर ईश्वर और संसार दोनों में एक समान विचर सकता है।

५९. आत्मज्ञान प्राप्त कर लेने पर जनेऊ को पहिनना क्या उचित है?

आत्मज्ञान ही प्राप्त कर लेने पर सब बन्धन आपसे आप टूट जाते हैं। उस समय ब्राह्मण और शूद्र, ऊँच और नीच में कोई भेद नहीं मालूम होता, और जाति चिन्ह जनेऊ की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। परन्तु जब तक अपने में भेदभाव है तब तक जनेऊ को ज़बरदस्ती तोड़ कर नहीं फेंक देना चाहिये।

६०. राजहंस दूध पी लेता है और पानी छोड़ देता है। दूसरे पक्षी ऐसा नहीं कर सकते। उसी प्रकार साधारण पुरुष माया के जाल में फँसकर परमात्मा को नहीं देख सकते। केवल परमहंस ही माया को छोड़कर परमात्मा के दर्शन पाकर स्वर्गीय सुख का अनुभव करते हैं।

६१. यदि यह शरीर निकम्मा और क्षणभंगुर है, तो महात्मा लोग इसकी ख़बरदारी क्यों करते हैं? खाली सन्दूक की परवाह कोई भी नहीं करता। सब लोग उसी सन्दूक की ख़बरदारी करते हैं जिसमें सोना और जवाहिरात आदि अमूल्य वस्तुयें भरी हों।

हमारा शरीर ईश्वर का भंडारघर है उसमें उसका निवास है इसलिये महात्मा लोगों को शरीर की ख़बरदारी करनी पड़ती है।

६२. थैली के फट जाने से इधर उधर छितराये हुये सरसों का इकट्ठा करना जिस प्रकार बड़ा कठिन है उसी प्रकार सब दिशाओं में दौड़नेवाले और अनेक कामों में व्यग्र मन को शान्त और एकाग्र करना बड़ा कठिन है।

६३. भगवद्भक्त अपने परम प्रिय ईश्वर के लिये प्रत्येक वस्तु को छोड़ने के लिये क्यों तैयार रहता है?

पतिङ्गा प्रकाश को देख कर फिर अँधेरे में जाने की इच्छा नहीं करता; चिउटी चीनी के ढेर में मर जाती है किन्तु पीछे नहीं लौटती। उसी प्रकार भगवद्भक्त भी किसी बात की परवाह नहीं करता; वह परमानन्द की प्राप्ति में अपने प्राणों तक का बलिदान कर देता है।

६४. अपने इष्टदेव को माँ कहने में भक्त को इतना आनन्द क्यों मालूम होता है ? क्योंकि बालक अन्य प्राणियों की अपेक्षा अपनी माँ से अधिक स्वतन्त्र रहता है इसलिये वह उसे अधिक प्यारा भी होता है।

६५. भक्त एकान्त में रहना क्यों नहीं पसन्द करता ? जिस प्रकार Hemp smoke गंजेड़ी को बिना साथी सोहबती के गांजा पीने में आनन्द नहीं आता उसी प्रकार साथी सोहबती को छोड़ कर एकान्त में ईश्वर का नाम लेने में भक्त को आनन्द नहीं मिलता।

६६. योगी और सन्यासी सांप के सदृश होते हैं। सांप अपने लिये बिल नहीं बनाता, वह चूहे के बनाये हुये बिल में रहता है। एक बिल रहने के योग्य जब नहीं रह जाता तो वह दूसरे बिल में चला जाता है। उसी प्रकार योगी और सन्यासी अपने लिये घर नहीं बनाते। वे दूसरों के घरों में कालक्षेप करते हैं—आज इस घर में हैं तो कल दूसरे घर में।

६७. गायों के झुंड में जब एक अपरिचित जानवर घुस जाता है तो वे सब मिल कर अपने सींगों से मार मार उसे बाहर निकाल देती हैं; किन्तु जब एक गाय उसी झुंड में घुस जाती है तो दूसरी गायें उससे मिल जाती हैं और उसे अपना मित्र बना लेती हैं। उसी प्रकार एक भक्त जब दूसरे भक्त से मिलता है तो दोनों को सुख होता है और फिर अलग होने में दुख होता है। किन्तु उनकी मंडली में जब कोई निंदक जाता है तो वे उससे बहिर्मुख हो जाते हैं।

६८. साधु साधु को पहचान सकता है। सूत का व्यापारी ही किसी सूत को एकदम देख कर बतला सकता है कि यह किस जाति और कितने नम्बर का सूत है।

६९. एक महात्मा जी समाधि लगाये सड़क के किनारे बैठे हुये थे। उस ओर से एक चोर निकला। उसने विचारा कि यह पुरुष चोर अवश्य है,

कल रात भर इसने किसी के घर में चोरी की है, इस समय थक कर सो रहा है, पुलीस शीघ्र ही इसे पकड़ेगी, चलो मैं भाग चलूं। थोड़ी देर बाद एक शराबी आया। उसने कहा, "खूब, अरे भाई तुमने शराब अधिक पी ली है, इसीलिये इस खाईं में पड़े हो; मेरी ओर देखो, मुझमें तुमसे अधिक फुर्ती है और मैं कांप भी नहीं रहा हूँ। थोड़ी देर बाद एक दूसरे महात्मा आये। इस महान आत्मा को समाधि में लीन देखकर बैठ गये और धीरे धीरे उनके पवित्र चरण दबाने लगे।

७०. दूसरों की हत्या करने के लिये तलवार और दूसरे शस्त्रों की आवश्कता होती है किन्तु अपनी हत्या करने के लिये एक आलपीन काफी है; उसी प्रकार दूसरों को उपदेश देने के लिये बहुत से धर्मग्रन्थों और शास्त्रों को पढ़ने की आवश्यकता है किन्तु आत्मज्ञान के लिये एक ही महावाक्य पर दृढ़ विश्वास करना काफ़ी है।

७१. जिसको छिछले तालाब का स्वच्छ पानी पीना है उसे हलके हाथ से पानी पीना होगा। यदि पानी कुछ भी हिला तो नीचे का मैल ऊपर चला आवेगा और सब पानी गन्दा हो जायगा। उसी प्रकार यदि तुम पवित्र रहना चाहते हो तो दृढ़ विश्वास के साथ भक्ति का अभ्यास क्रमशः बढ़ाते जावो, व्यर्थ के आध्यात्मिक विवाद में अपने समय को नष्ट न करो नहीं तो नाना प्रकार की शंकाओं और प्रतिशंकाओं से तुम्हारा मस्तिष्क गन्दा हो जायगा।

७२. दो पुरुष एक बार किसी बाग़ में गये। सांसारिक पुरुष घुसते ही सोचने लगा कि इसमें कितने आम के वृक्ष हैं, हरेक वृक्ष में कितने आम होंगे और इस बाग़ की कीमत क्या होगी? दूसरे ने जाकर मालिक से परिचय किया और उसकी आज्ञा लेकर आम खाने लगा। आप स्वयं विचार कर सकते हैं कि दोनों में से कौन अधिक बुद्धिमान था। आम खाओ जिससे तुम्हारी भूख बुझे। वृक्षों और फलों को गिनने से क्या लाभ होगा। मूर्ख आदमी सृष्टि की प्रत्येक बातों में

खुचड़ निकालता फिरता है, चतुर आदमी केवल परमात्मा पर विश्वास कर स्वर्गीय सुख का अनुभव करता है।

७३. घी में कच्ची पूड़ी डालने से वह पड़पड़ और चुर्र चुर्र करने लगती है किन्तु जैसे जैसे वह पकती जाती है तैसे तैसे पड़पड़ और चुर्र चुर्र की आवाज कम होती जाती है। और जब वह बिल्कुल पक जाती है तो आवाज़ एक दम बन्द हो जाती है। उसी प्रकार जब मनुष्य को थोड़ा ज्ञान होता है तो वह व्याख्यान देता है, वादविवाद करता है और उपदेश करता है परन्तु उसे जब पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो उपरोक्त सब आडम्बर दूर हो जाते हैं।

७४. सच्चा शूरमा वह है जो प्रलोभनों के बीच रहता हुआ मन को वश में करके पूर्ण ज्ञान प्राप्त करता है।

७५. संसार और ईश्वर—इन दोनों का मेल किस प्रकार किया जा सकता है? ढेंकीवाले की स्त्री को देखो। वह ढेंकी के चावल को फेरती जाती है और अपने बच्चे को दूध भी पिलाती जाती है, साथ ही खरीदारों से भी बातचीत करती रहती है। वह इतने काम एक ही साथ करती है किन्तु उसका ध्यान केवल एक ही ओर रहता है कि चावल चलाते समय ढेंकी से उसका हाथ न कुचल जाय। उसी प्रकार संसार में रहो, काम करते जाओ लेकिन अपना लक्ष्य सदा परमेश्वर की ओर रक्खो। उससे विमुख न जाओ।

७६. मगर पानी में तैरना बहुत पसन्द करता है लेकिन पानी के भीतर से जब वह ऊपर आता है तो शिकारी उस पर गोली चलाते हैं। आखिरकार बेचारे को पानी के भीतर ही रहना पड़ता है, ऊपर आने का साहस नहीं होता। तथापि सुअवसर ताक कर सूं सूं करता हुआ वह पानी के ऊपर तैरता रहता है। उसी प्रकार जगज्जाल में बंधे हुये ऐ मनुष्यो, तुम भी ब्रह्मानन्द में गोता लगाना चाहते हो लेकिन घरेलू और सांसारिक आवश्यक कार्यों के कारण तुम ऐसा नहीं कर

सकते। (ऐसा होते हुए भी) तुम लोग सदैव प्रसन्नचित्त रहो और जब तुमको सावकाश मिले तभी सच्चाई और धुन के साथ ईश्वर की आराधना करो और उससे अपना सब दुख कहो। उचित समय आने पर वह तुम्हारा उद्धार करेगा और तुम ब्रह्मानन्द में गोता लगाने के योग्य बन सकोगे।

७७. ऐसा कहते हैं कि जब कोई तान्त्रिक अपने देवता को जगाना (प्रसन्न करना) चाहता है तो वह एक ताजे मुरदे पर बैठकर मंत्र जपता है और भोजन और शराब अपने पास रख लेता है। इस बीच में यदि किसी समय वह मुरदा सचेत होकर मुँह खोलता है तो वह तांत्रिक उस मुरदे में आनेवाले पिशाच को प्रसन्न करने के लिये शराब और भोजन डाल देता है। यदि वह ऐसा न करे तो पिशाच अप्रसन्न होकर विघ्न डालने लगता है और वह फिर देवता को जगा नहीं सकता। उसी प्रकार इस संसार रूपी मुरदे पर बैठकर यदि तुम ईश्वर से मिलना (ईश्वर को जगाना) चाहते हो तो तुमको वे सब चीजें इकट्ठी कर लेनी होंगी जिनसे तुम संसार के लोगों की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सको नहीं तो यदि ऐसा न करोगे तो तुम्हारी उपासना में विघ्न पड़ेगा।

७८. जिस प्रकार (street ministrel) एक भिक्षुक एक हाथ से सितारे बजाता है और दूसरे हाथ से ढोलक बजाता है और साथ ही साथ मुँह से भजन भी गाता जाता है। उसी प्रकार ऐ संसारी मनुष्यो, तुम अपना कर्त्तव्य कर्म करो किन्तु सच्चे हृदय से ईश्वर का नाम जपना न भूलो।

७९. जिस प्रकार एक कुलटा (व्यभिचारिणी स्त्री) घर के काम काज में लगी होती हुई भी अपने प्रेमी का स्मरण करती है, उसी प्रकार संसार के धन्धों में लगे रहते हुए भी मनुष्यों को ईश्वर का चिन्तन दृढ़ता के साथ करते रहना चाहिये।

८०. धनिकों के घरों की सेविकायें (नौकरानियां) उनके लड़कों का पोषण करती हैं और अपने खास पुत्रों की तरह उनका लाड़ प्यार करती हैं किन्तु वे नौकारानियों के पुत्र नहीं हो जाते। उसी प्रकार तुम लोग भी अपने को अपने पुत्रों के पोषणकर्ता समझो, उनका असली पिता तो वास्तव में ईश्वर है।

८१. विवेक और वैराग्य युक्त मन बिना धर्म ग्रन्थ और शास्त्रों का पाठ करना व्यर्थ है। आध्यात्मिक उन्नति बिना विवेक और वैराग्य के नहीं हो सकता।

८२. पहिले अपने आत्मा को पहिचानो और फिर अनात्मा और ईश्वर को जो दोनों का मालिक है। सोचो कि "मैं" कौन हूँ? हाथ, पांव, मांस, रक्त, स्नायु ही क्या "मैं" हूँ? तब तुम्हारी समझ में आवेगा कि इनमें से कोई भी "मैं" नहीं है। जिस प्रकार प्याज़ के छिलके को लगातार उतारते रहने से वह पतला होता जाता है उसी प्रकार "मैंपन" के पृथक्करण से यह बात सहज ही समझ में आ जायगी कि "मैं" कोई चीज़ नहीं है। इस विवेचन का फल एक ही है और वह ईश्वर है। जब "मैंपन" छूट जायगा तो ईश्वर का दर्शन होगा।

८३. कलियुग की सच्ची उपासना और उसका सच्चा आध्यात्मिक ज्ञान प्रेमरूप ईश्वर का सदैव नाम जपना है।

८४. यदि तुम ईश्वर का दर्शन करना चाहते हो तो हरिनाम जपने के सामर्थ्य पर दृढ़ विश्वास रक्खो। और असली (आत्मा) और नकली (अनात्मा) को पहिचानो।

८५. जब हाथी खुल जाता है तो वह वृक्षों और झाड़ियों को उखाड़ कर फेंक देता है; लेकिन महावत जब उसके मस्तक पर अंकुश की मार देता है तो वह तुरन्त ही शान्त हो जाता है, यही हाल अनियंत्रित मन का है! जब आप उसे स्वच्छन्द छोड़ देते हैं तो वह आमोद प्रमोद

के निस्सार विचारों में दौड़ने लगता है लेकिन जब विवेकरूपी अंकुश की मार से आप उसे रोकते हैं तो वह शान्त हो जाता है।

८६. परमेश्वर का ध्यान निर्जन स्थान में करो, अथवा एकान्त जंगल में करो, अथवा अपने हृदय के मौन मंदिर में करो।

८७. चित्त को एकाग्रता लाने के लिये तालियाँ बजा बजाकर हरी (ईश्वर) का नाम ज़ोर ज़ोर से लो। जिस प्रकार वृक्ष के नीचे तालियाँ बजाने से उस पर बैठे हुए पक्षी इधर उधर उड़ जाते हैं, उसी प्रकार तालियाँ बजा कर हरी का नाम लेने से कुत्सित विचार मन से भाग जाते हैं।

८८. जब तक हरी का नाम लेते ही आनन्दाश्रु धारा न बहाने लगे तब तक उपासना की आवश्यकता है। ईश्वर का नाम लेते ही जिसकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगती है उसे उपासना की आवश्यकता नहीं है।

८९. यदि एक बार डुब्बी लगाने से मोती न मिले तो यह न कहो कि समुद्र में मोती नहीं हैं। बार बार डुबकी लगाओ, अन्त में तुम्हें मोती मिलेंगे। उसी प्रकार ईश्वर को साक्षात् करने में पहले विफलता हो तो निराश मत होओ। बारबार प्रयत्न करते रहो, अन्त में ईश्वर का साक्षात्कार तुम्हें अवश्य होगा।

९०. एक लकड़िहारा जंगल की लकड़ी बेच बेचकर बड़े दुख के साथ जीवन निर्वाह करता था। आकस्मात् उस मार्ग से एक संयासी जा रहे थे। उन्होंने लकड़िहारे के दुख को देखकर उससे कहा "बेटा जंगल में और आगे घुसो, तुमको लाभ होने वाला है।" लकड़िहारा आगे बढ़ा यहाँ तक कि उसे एक चंदन का वृक्ष मिला। उसने बहुत सी लकड़ियाँ काट लीं और उसे ले जाकर बाजार में बेंचा। इससे उसको बहुत लाभ हुआ। उसने सोचा कि संन्यासी ने चन्दन के वृक्ष का नाम क्यों नहीं लिया! उसने इतना ही क्यों कहा कि आगे और घुसो! दूसरे दिन जंगल

में और आगे घुसा और उसे तांबे की एक खान मिली। उसने उसमें से मनमाना ताँबा निकाला और उसे बाज़ार में बेंचकर खूब रुपया प्राप्त किया। तीसरे दिन वह और आगे घुसा और उसे एक चाँदी की खान मिली। उसने उसमें से मनमाना चाँदी लिया और उसे बाज़ार में बेचकर और भी अधिक रुपया प्राप्त किया। वह और आगे बढ़ा और उसे सोने और हीरे की खानें मिलीं। अन्त में वह बड़ा धनवान हो गया। ऐसा ही हाल उन लोगों का भी है जिन्हें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा होती है। थोड़ी सी सिद्धि प्राप्त करने पर वे रुकते नहीं, बराबर बढ़ते जाते हैं और अन्त में लकड़िहारे की तरह ज्ञान का कोश पाकर आध्यात्मिक क्षेत्र में वे भी धनवान हो जाते हैं।

६१. साधुओं और ज्ञानियों की संगति आध्यात्मिक उन्नति का प्रमुख तत्व है।

६२. इस संसार को छोड़ने से पहिले जिस देह का विचार आत्मा करता है उसी में वह जन्म पाता है। ऐसा करने के लिये उपासना की अत्यन्त आवश्यकता है। सरल उपासना से मन में जब कोई दूसरी एक भी कल्पना न आवे तो केवल परमात्मा की कल्पना से ही जीवात्मा भर जाता है और अन्तकाल तक उससे वह रिक्त नहीं होता। (अन्ते मतिः सा गतिः)

६३. क्या अहङ्कार का समूल नाश नहीं होता? कमल के पत्ते झड़ जाते हैं किन्तु दाग नहीं मिटता, उसी प्रकार मनुष्य का अहङ्कार सम्पूर्ण नष्ट हो जाता है किन्तु पूर्वजन्म के अस्तित्व का संस्कार (दाग) शेष रहता है लेकिन उससे किसी को हानि नहीं पहुँचती।

६४. भक्त की शक्ति किसमें है? वह परमात्मा का पुत्र है और प्रेमाश्रु उसके शक्तिशाली शस्त्र हैं।

६५. कोई ईश्वर को किस प्रकार प्यार करे? जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपने पति को और कंजूस धन को।

९६. मानवी स्वभाव की दुर्बलता को हम किस प्रकार जीत सकते हैं ? फूल से जब फल तैयार हो जाता है तो पंखड़ियाँ आपसे आप गिर जाती हैं। उसी प्रकार (Divinity) जब तुम में बढ़ेगी तो तुम्हारे स्वभाव का दौर्बल्य आपसे आप नष्ट हो जायगा।

९७. धर्मग्रन्थों के पढ़ने से ईश्वर भक्ति प्राप्त की जा सकती है ? हिन्दू पंचांगों में लिखा रहता है कि देश के किस किस भाग में कब कब और कितना पानी बरसेगा। लेकिन पंचांगों को अगर हम निचोड़ना शुरू करें तो एक बूद भी पानी नहीं मिलेगा। उसी प्रकार धर्मग्रन्थों में भी बहुत से उत्तम उत्तम उपदेश मिलते हैं, लेकिन केवल उनको पढ़ने से कोई ईश्वर-भक्त नहीं बन सकता। ईश्वर-भक्त बनने के लिये उन उपदेशों को कार्य्य रूप में परिणत करना होगा।

९८. गीता शब्द बराबार लगातार कहने से उसमें तागी (त्यागी) शब्द की धुन निकलती है जिसका अर्थ त्याग है। ऐ संसारी मनुष्यो, प्रत्येक वस्तु को त्याग दो और ईश्वर के चरणों में अपना दिल लगाओ।

९९. आप निश्चय जानो कि जो मनुष्य "अल्लाह, अल्लाह" "हे मेरे इष्ट, हे मेरे इष्टदेव" मुँह से कहता रहता है उसे ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। जिसको ईश्वर मिल जाता है वह बिलकुल शान्त हो जाता है।

१००. जब तक भौंरा फूल के भीतर का मकरन्द नहीं चख लेता तब तक उसके बाहर बराबर चक्कर लगाया करता है। लेकिन जब वह फूल के भीतर घुस जाता है तो चुपचाप अमृत रस (मकरन्द) को पीने लगता है। उसी प्रकार तब तक मनुष्य ब्रह्मानन्द रसरूपी मकरन्द नहीं चखते तब तक धार्मिक सिद्धान्तों और मतमतान्तरों की गपोड़बाज़ी करते हैं। लेकिन एक बार जब उन्हें इस रस का आनन्द मिल जाता है तो वे शान्त हो जाते हैं।

१०१. कुतुबनुमें की सुई हमेशा उत्तर की ओर रहती है इसलिये

जहाज समुद्र में नहीं भटकता। इसी प्रकार जब तक मनुष्य का हृदय ईश्वर की ओर रहता है तब तक वह समुद्र रूपी संसार में नहीं भटक सकता।

१०२. बन्दर का बच्चा अपनी माँ की छाती में जोर से चिपटा रहता है। बिल्ली का बच्चा अपनी माँ से नहीं चिपट सकता; उसको बिल्ली जहाँ रख देती है वहीं वह बड़े दुख के साथ म्यूं म्यूं करता रहता है। बन्दर का बच्चा यदि अपनी माँ को छोड़ दे तो वह नीचे गिर जाय और उसको चोट लग जाय। इसका कारण यह है कि उसको अपनी शक्ति का भरोसा रहता है। बिल्ली के बच्चे को इस प्रकार का कोई भय नहीं रहता क्योंकि उसकी माँ स्वयं उसको एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाती है। अपनी शक्ति पर विश्वास रखने और ईश्वर की इच्छा पर अपने को एक दम छोड़ देने वालों में भी यही अन्तर है।

१०३. भारतवर्ष के गाँव की स्त्रियाँ अपने सर पर चार पाँच पानी से भरे हुए घड़े रख कर चलती हैं, वे मार्ग में एक दूसरे से सुख दुख की अनेक बातें भी करती जाती हैं, लेकिन एक बूंद भी पानी छलक कर नीचे नहीं गिरता। धर्म के मार्ग पर चलने वाले यात्री की भी यही दशा होनी चाहिये। वह चाहे किसी भी परिस्थिति में हो, धर्म के मार्ग से उसे कभी विचलित नहीं होना चाहिये।

१०४. हथेलियों में तेल लगाकर कटहल छीलने से हाथों को किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता और न उनमें कटहल का चिपचिपा दूध चिपकता है। उसी प्रकार पहिले ईश्वरीय ज्ञान उपार्जन करो और फिर संसार के धन्धों में लगो तो तुमको किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँच सकेगी।

१०५. तैरना सीखने के लिये अभ्यास की आवश्यकता है। एक दिन के अभ्यास से कोई समुद्र में नहीं तैर सकता। उसी प्रकार यदि तुम्हें ब्रह्म के समुद्र में तैरना है तो सफलतापूर्वक तैरने के पहिले बहुत से निष्फल प्रयत्न करने पड़ेंगे।

१०६. कृष्णजी के नाटक में तुमने देखा होगा कि जब लोग मृदङ्ग बजा बजा और गा गा कर "अरे कृष्ण आओ, अरे कृष्ण जल्दी दौड़ो" ऐसा कह कर कृष्ण को पुकारते हैं, तो कृष्ण बना हुआ पात्र उनकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं देता; वह रङ्गभूमि के भीतर आड़ में बैठा हुआ गप्पें मारता है और सिगरेट पीता है। किन्तु बाजों के बन्द हो जाने पर प्रेममूर्ति नारद मुनि जब मधुर स्वर से गाते हुये रंगभूमि में आते हैं और कृष्ण को पुकारते हैं तो वे दौड़ कर रंगभूमि में आते हैं। उसी प्रकार भक्त जब तक केवल मुँह से यह कह कर चिल्लाता है कि "अरे भगवान दौड़ो, दर्शन दो" तब तक भगवान दौड़ कर दर्शन नहीं देते। किन्तु जब वह प्रेम भरे अन्तःकरण से भगवान को पुकारता है तो भगवान तुरन्त दौड़ कर आते हैं। प्रेम भरे शुद्ध अन्तःकरण से भक्त जब भगवान का स्मरण करता है तो वे आने में विलम्ब नहीं करते।

१०७. अपने ध्येय को सिद्ध करने के लिये काफी साधनों को एकत्रित करना चाहिये। गला फाड़ फाड़ कर यह चिल्लाने से कि 'दूध में मक्खन है" तुम्हें मक्खन नहीं मिलेगा। यदि मक्खन निकालना है तो पहिले दूध का दही बनाओ और फिर उसको मथानी से मथो। उसी प्रकार यदि तुम्हें ईश्वर का दर्शन करना है तो आध्यात्मिक साधनाओं का अभ्यास करते चलो। केवल "हे ईश्वर, हे ईश्वर" अलापने से क्या प्रजोजन?

१०८. "भंग" भंग" कहने से नशा नहीं चढ़ता। भंग को पीसकर और पानी में घोलकर पीने से नशा चढ़ता है। "हे ईश्वर" "हे ईश्वर" इस प्रकार ज़ोर ज़ोर चिल्लाने से क्या लाभ? उपासना बराबर करते चलो, तब अलबत्ते तुम्हें ईश्वर के दर्शन होंगे।

१०९. मनुष्य को मोक्ष कब कब मिलता है? जब उसका अहंकार नष्ट हो जाता है।

११०. जब एक तीक्ष्ण कांटा पैर में चुभ जाता है तो मनुष्य

उसको निकालने के लिये दूसरे कांटे का उपयोग करता है और फिर दोनों को फेंक देता है। उसी प्रकार हमको अन्धा बनाने वाले सापेक्ष (relative) अज्ञान का नाश सापेक्ष ज्ञान से ही होना चाहिये। जब मनुष्य को सर्वोच्च ब्रह्म का ज्ञान हो जाता है तो अज्ञान और ज्ञान नष्ट हो जाते हैं और वह इन द्वन्द्वों से रहित हो जाता है।

१११. माया के पंजे से छुटकारा पाने के लिए हमें क्या करना चाहिये? उसकी पकड़ से मुक्त होने की प्रबल उत्कंठा करने वाले को ईश्वर छुटकारे का मार्ग दिखलाता है। माया से छूटने के लिये उससे छूटने की प्रबल उत्कंठा भर की आवश्यकता है।

११२. यदि तुम माया के सच्चे स्वरूप को पहिचान लो तो वह तुम्हारे पास से इस तरह भाग जाय जिस प्रकार तुम्हें देखकर चोर भाग जाता है।

११३. सच्चिदानन्द सागर में गहरी डुब्बी लगाओ। काम, क्रोध आदि भयानक जलजन्तुओं से न डरो। विवेक और वैराग्य की हलदी का गहरा लेप अपने अंग में लगाओ तो जलचर जीव तुम्हारे पास न आवेंगे, क्योंकि हल्दी की महक से उनको दुसह दुःख होता है।

११४. जिन स्थानों में मोह में पड़ जाने का भय हो उन स्थानों में यदि जाने की आवश्यकता ही पड़ जाय तो जगत् माता का चिन्तन करते हुये वहाँ जाओ। वह इन दुर्वृत्तियों से भी तुम्हारी रक्षा करेगी जो तुम्हारे हाथ में बैठी हुई है। जगत्माता को उपस्थित समझ कर बुरे विचार मन में लाने या बुरे काम करने में तुम्हें लज्जा मालूम होगी।

११५. ईश्वर की प्रार्थना क्या हमें ज़ोर से करनी चाहिये? जिस प्रकार तुम्हारा जी चाहे उस प्रकार तुम उसकी प्रार्थना करो, हर हालत में वह तुम्हारी प्रार्थना सुनेगा। वह तो चींटी के पैरों की आवाज़ तक को भी सुन सकता है।

११६. शरीर पर के प्रेम को हम किस प्रकार जीत सकते हैं।

यह शरीर नश्वर वस्तुओं से बना है। अरे इसमें तो मज्जा, मांस, रुधिर आदि अनेक घृणित वस्तुयें भरी हुई हैं। इस प्रकार शरीर की बनावट पर जब पृथक् पृथक् हम विचार करेंगे तो उसके प्रति घृणा पैदा होगी और शरीर पर का हमारा प्रेम नष्ट हो जायगा।

११७. भक्त को क्या किसी विशेष प्रकार के वस्त्र पहिनने की आवश्यकता है ? योग्य वस्त्रों का पहिनना सदैव उत्तम है। भगवे वस्त्र पहिनने अथवा झांझ और खंझड़ी लेकर चलने से संभव है मनुष्य गाली न वके या गन्दे गाने गाये लेकिन चटकदार वस्त्र पहिनने से संभव है मुंह से गाली भी निकले और गन्दे गाने भी गाये जाँय।

११८. मनुष्य के हृदय में ईश्वर के प्रगट होने के क्या चिन्ह हैं ? जिस प्रकार सूर्योदय के पहिले अरुणोदय होता है उसी प्रकार ईश्वर के प्रगट होने के पहिले मनुष्य के हृदय में स्वार्थत्याग, पवित्रता, सत्यनिष्ठा आदि गुण आकर अपना अधिकार जमाते हैं।

११९. अपने सेवक के घर जाने के पहले राजा आवश्यक कुर्सियाँ, आभूषण, भोजन के पदार्थ आदि भेज देता है ताकि वह भले प्रकार उनका स्वागत कर सके; उसी प्रकार आने के पहिले परमात्मा भक्त के हृदय में प्रेम, भक्ति और श्रद्धा पहिले ही से उत्पन्न कर देते हैं।

१२०. सांसारिक और ऐहिक सुखों की आसक्ति कब नष्ट होती है ? सच्चिदानन्द परमात्मा सब सुख और आनन्द का भण्डार है। जो उसमें आनन्द का उपयोग करते हैं वे संसार के क्षणभंगुर सुख में आसक्त नहीं हो सकते।

१२१. मन की कौन सी स्थिति में ईश्वर के दर्शन होते हैं ? ईश्वर के दर्शन उस समय होते हैं जब मन शान्त रहता है। जब तक मनरूपी हवा चलती रहती है तब तक उसमें ईश्वर का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ सकता।

१२२. हम अपने ईश्वर को किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं ?

मछुआहा चारा लगाकर और बंसी को पानी में फेंकर घण्टों चुपचाप धैर्य के साथ बैठा प्रतीक्षा करता है तब वह मनचाही बड़ी और सुन्दर मछली फंसा सकता है; उसी प्रकार भक्त को भी यदि ईश्वर को प्राप्त करना है तो धैर्य के साथ चिरकाल तक ईश्वर की उपासना करनी होगी।

१२३. नवजात बछवा पहिले अनेकों बार फिसलता और गिरता है तब कहीं उसे खड़े होने में सफलता मिलती है; उसी प्रकार भक्ति के मार्ग में भी सफलता प्राप्त करने के लिये पहिले कई बार फिसलना और गिरना होगा।

१२४. कहते हैं एक बार दो पुरुष शव-साधन नाम की भयंकर विधि से काली माता की उपासना करने लगे। (यह तांत्रिक विधि रात्रि के समय श्मशान भूमि में एक शव पर बैठ कर की जाती है) पहिला तांत्रिक तो पहिले ही पहर में रात्रि की भयंकरता से घबड़ा कर पागल हो गया और दूसरे को रात बीतने पर काली माता के दर्शन हुये। उसने माता से पूछा "माँ वह आदमी पागल क्यों गया ?" देवी ने उत्तर दिया, "बेटा; तू भी पूर्व जन्मों में अनेकों बार पागल हो चुका है और अन्त में इस बार तुझे मेरा दर्शन हुआ।"

१२५. हिन्दुओं में अनेकों पन्थ और मत हैं। हमें कौन से मत को स्वीकार करना चाहिये।

पार्वती जी ने एक बार महादेव से पूछा, "भगवान्, नित्य सनातन सर्वव्यापी, सच्चिदानन्द की प्राप्ति का मूल क्या है।" महादेव जी ने उत्तर दिया, "श्रद्धा"। कौन किस धर्म का है और किसके धर्म में कौन कौन सी विशिष्ट बातें हैं, इससे कोई मतलब नहीं। मतलब केवल यही है कि अपने अपने पंथ की उपासना और दूसरे कर्त्तव्यों का पालन प्रत्येक मनुष्य श्रद्धा के साथ करे।

१२६. एक छोटे पौधे की रक्षा बकरे, गाय और छोटे बच्चों से

उसके चारों ओर तार बाँध कर करनी चाहिये। किन्तु जब यह एक बड़ा वृक्ष हो जाता है तो अनेकों बकरियाँ और गायें स्वच्छन्दता के साथ उसी के नीचे विश्राम करती हैं और उसकी पत्तियाँ खाती हैं। उसी प्रकार जब तक तुम में थोड़ी ही भक्ति है तब तक बुरी संगति और संसार के प्रपंच से उसकी रक्षा करनी चाहिये। लेकिन जब उसमें दृढ़ता आ गई तो फिर तुम्हारे समस्त कुवासनाओं को आने की हिम्मत न होगी, और अनेकों दुर्जन तुम्हारे पवित्र सहवास से सज्जन बन जाँयगे।

१२७. चकमक पत्थर पानी में सैकड़ों वर्ष रहता है किन्तु उसके भीतर की अग्नि-उत्पादक शक्ति नष्ट नहीं होती। जब आपका जी चाहे उसे लोहे से रगड़िये, वह तुरन्त आग उगलने लगेगा। ऐसा ही हाल दृढ़ भक्ति रखने वाले भक्तों का भी है। संसार के बुरे से बुरे प्राणियों के बीच में भले ही रहें लेकिन उनकी भक्ति कभी नष्ट नहीं हो सकती। ज्योंही वे ईश्वर का नाम सुनते हैं त्योंही उनका हृदय प्रफुल्लित होने लगता है।

१२८. प्रवाह का पानी बराबर सीधा बहता है लेकिन कभी कभी भंवर पड़ जाने से उसके बहाव का सीधापन रुक जाता है, उसी प्रकार भक्तों का हृदय भी सदैव प्रसन्न रहता है; हाँ, कभी कभी निराशा, दुःख और अश्रद्धा के भंवर के बीच में पड़ कर उनकी प्रसन्नता रुक जाती है।

१२९. एक मनुष्य ने कुआं खोदना शुरू किया। २० हाथ खोदने पर उसे पानी का सोता नहीं मिला। उसने उसे छोड़ दिया और दूसरी जगह दूसरा कुआं खोदने लगा। वहां उसने कुछ अधिक गहराई तक खोदा किन्तु वहां भी पानी न निकला। उसने फिर तीसरी जगह तीसरा कुआं खोदना शुरू किया। इसको उसने और अधिक गहराई तक खोदा किन्तु यहाँ भी पानी न निकला। तीनों कुओं की खुदाई १०० हाथ से कुछ ही कम हुई होगी। यदि पहिले ही कुयें को वह केवल ५० हाथ धीरता के साथ खोदता तो उसे पानी अवश्य मिलता। यही हाल उन

लोगों का है जो अपनी श्रद्धा बराबर बदलते रहते हैं। सफलता प्राप्त करने के लिये सब ओर से चित्त हटाकर केवल एक ही ओर अपनी श्रद्धा लगानी चाहिये और उसकी सफलता पर विश्वास करना चाहिये।

१३०. पानी में पत्थर सैकड़ों वर्ष पड़ा रहे लेकिन पानी उसके भीतर नहीं घुस सकता। चिकनी मिट्टी पानी के स्पर्श ही से घुसने लगती है। उसी प्रकार भक्तों का दृढ़ हृदय कठिन से कठिन दुःख पड़ने पर भी निराश नहीं होता, लेकिन दुर्बल श्रद्धा रखनेवाले पुरुषों का हृदय छोटी छोटी बातों से हताश होकर घबड़ाने लगता है।

१३१. रेलगाड़ी का इंजन माल से खचाखच भरे हुये डब्बों को बड़ी आसानी से अपने साथ खींच ले जाता है। उसी प्रकार ईश्वर के प्यारे सच्चे भक्त भी अनेकों सांसारिक मनुष्यों को खींचकर ईश्वर तक पहुँचा देते हैं, चिन्ताओं और कठिनाइयों की कोई परवाह नहीं करते।

१३२. बच्चे का भोलापन कितना अच्छा मालूम होता है। वह संसार की संपति और वैभव से खिलौनों को अधिक पसन्द करता है। यही हाल भक्तों का भी है। उनका भोलापन बड़ा मोहक होता है और वे संसार की संपति और वैभव से ईश्वर को प्राप्त करना अधिक पसन्द करते हैं।

१३३. जिस प्रकार बालक खम्भे को पकड़ कर चारों ओर घूमता है और उसे गिरने का भय नहीं रहता; उसी प्रकार मनुष्य भी ईश्वर में सच्ची श्रद्धा रखकर निर्भय होकर संसार के कामों में लग सकता है।

१३४. खुले खेत में भरे हुये एक छोटे नाले का पानी कोई इस्तेमाल भी न करे तब भी वह सूख जाता है; उसी प्रकार पापात्मा भी कभी कभी ईश्वर की कृपा से त्यागी बन कर मुक्त हो जाते हैं।

१३५. "ब--कालमा' ऐसा सुरक्षित और सुगम कोई दूसरा मार्ग नहीं है। "ब--कालमा' का अर्थ है ईश्वर को सर्वस्व समझना और ममत्व (यह चीज़ मेरी है इसकी) विस्मृत होना।

१३६. ईश्वर पर पूर्ण अवलम्ब रखने का स्वरूप क्या है? वह आनन्द की दशा है जिसका अनुभव एक पुरुष दिन भर परिश्रम के पश्चात सायंकाल को तकिये के सहारे लेट कर सिगरेट पीता हुआ करता है चिन्ताओं और दुखों का रुक जाना ही ईश्वर पर पूर्ण अवलम्ब रखने का सच्चा स्वरूप है।

१३७. जिस प्रकार हवा सूखी पत्तियों को इधर उधर उड़ा ले जाती है, उनको इधर उधर उड़ने के लिये न तो अपनी अक्ल खर्च करने की आवश्यकता पड़ती है और परिश्रम न करना पड़ता है; उसी प्रकार ईश्वर के भक्त ईश्वर की इच्छा से सब काम करते रहते हैं, वे अपनी अक्ल नहीं खर्च करते और न स्वयं परिश्रम करते हैं।

१३८. पका हुआ आम श्री ठाकुर जी के भोग लगाने या किसी दूसरे काम में लाया जा सकता है, लेकिन कौव्वा जब चोंच मार देता है तो उसका न तो भोग लगाया जाता है और न वह दान में दिया जा सकता है। साधू लोग उसे खाते भी नहीं। उसी प्रकार लड़कपन से ही लड़कों और लड़कियों को ईश्वर की भक्ति की ओर लगाना चाहिये। उस समय उनका हृदय वासनाओं के स्पर्श न होने के कारण निर्मल रहता है। एक बार जब वे वासनाओं और विषयों में व्यस्त हो जाते हैं तो उनको उधर से हटाकर हमेशा सन्मार्ग पर लाना बहुत कठिन हो जाता है।

१३९. गेरुआ वस्त्र पहिनने से क्या लाभ? पोशाक में क्या रक्खा है फटे पुराने जूते और फटे पुराने वस्त्रों के पहिने से नम्र विचार उठते हैं; काले किनारे की बढ़िया मलमल की धोती पहिने से इश्क भरे गानों को गाने का जी चाहता है; उसी प्रकार गेरुआ वस्त्र पहिनने से स्वभावतः पवित्र विचार उत्पन्न होते हैं। स्वयं वस्त्र का कोई अर्थ नहीं है। लेकिन भिन्न भिन्न प्रकार के पहिनने से भिन्न भिन्न प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं इसमें कोई सन्देह नहीं है।

१४०. एक पिता अपने एक लड़के को गोद में लिये और दूसरे की अँगुली पकड़े एक खेत में हो जा रहे थे। उन दोनों लड़कों ने एक उड़ती हुई पतङ्ग को देखा। दूसरे लड़के ने पिता की अँगुली छोड़ दी और खुशी से थपोड़ी पीटने लगा। पिता का हाथ छोड़ते ही ठोकर खाकर ज़मीन पर गिर पड़ा और उसके चोट लग गई। पहिले लड़के ने भी थपोड़ियाँ पीटीं लेकिन वह गिरा नहीं क्योंकि पिता उसे गोद में लिये हुये था। अपने ही प्रयत्न से आध्यात्मिक उन्नति करने वाला मनुष्य पहिले लड़के की तरह है और सब प्रकार से ईश्वर की शरण जाने वाला मनुष्य दूसरे लड़के की तरह।

१४१. पुरानी कहावत है कि, "गुरु हजारों की संख्या में मिल सकते हैं किन्तु चेला एक भी मिलना दुर्लभ है।" इसका मतलब यह है कि शिक्षा देने वाले पुरुष अनेकों हैं किन्तु उनके अनुसार चलने वाले बहुत कम।

१४२. सूर्य का प्रकाश सब जगह एक समान पड़ता है किन्तु उसका प्रतिबिम्ब पानी, शीशा या पालिश किये हुये बरतन सदृश वस्तुओं ही में पड़ता है। यही हाल ईश्वरीय प्रकाश का भी है। वह बिना किसी पक्षपात के मनुष्यों के अन्तःकरणों में एक समान पड़ता है लेकिन उसका प्रतिबिम्ब केवल नेक और पवित्र भक्तों के ही हृदयों में पड़ता है।

१४३. कचौड़ियों का बाहरी भाग आटे का होता है लेकिन उनके भीतर नाना प्रकार के मसाले भरे होते हैं। कचौड़ी की अच्छाई और बुराई भीतर के मसाले पर निर्भर है। उसी प्रकार सब मनुष्यों का केवल शरीर तो एक ही चीज़ से बना है लेकिन अपने हृदयों की पवित्रता के अनुसार वे भिन्न भिन्न प्रकार के हैं।

१४४. धर्म क्यों बिगड़ते हैं ? मेंह का पानी साफ होता है यह

सच है लेकिन यदि गन्दी छतें, गन्दे नल और नालियों में होकर बहे तो वह भी गन्दा होगा, इसमें सन्देह ही क्या है।

१४५. नमक के, कपड़े के और पत्थर के खिलौने पानी में डुबोने से नमक से खिलौने तो पानी में घुल जाते हैं, कपड़े के खिलौने खूब पानी सोखते हैं और अपना स्वरूप कायम रखते हैं लेकिन पत्थर के खिलौनों में पानी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सर्वव्यापक विश्वात्मा में अपनी आत्मा को मिला देने वाला पुरुष नमक के खिलौने के सदृश है, उसे मुक्त पुरुष समझो; ईश्वरीय आनन्द और ज्ञान से भरा हुआ पुरुष कपड़े के खिलौने के सदृश है, उसे भक्त समझो; जिसके हृदय में सच्चे ज्ञान का लेश मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता वह पत्थर के खिलौने के सदृश है, उसे संसारी मनुष्य समझो।

१४६. सत्व, रज और तम इनमें से प्रत्येक की अधिकता के अनुसार मनुष्य भिन्न भिन्न प्रकार के होंगे।

१४७. caterfillar अपने ही बनाये हुये cocoon में बन्दी रहता है; उसी प्रकार संसारिक मनुष्य भी अपने ही द्वारा उत्पन्न की हुई वासनाओं के जाल में बन्दी रहता है caterfillar जब बढ़कर एक तितली बन जाता है तो वह cocoon को फाड़कर निकल आता है और खुली हवा और प्रकाश में स्वच्छन्दता से विचारा करता है। उसी प्रकार जब संसारिक मनुष्य भी विवेक और वैराग्य से माया को नष्ट कर देता है तो वह भी स्वच्छन्द होकर ईश्वर के चरणों का स्पर्श करके सच्चे सुख का अनुभव करता है।

१४८. प्रेम (भक्ति) तीन प्रकार का होता है. (१) स्वार्थ रहित (समर्थ) (२) अन्योन्यगामी (समंजस) (३) स्वार्थपूर्ण (साधारण)। स्वार्थरहित प्रेम सर्वश्रेष्ठ है। इसमें प्रेमी केवल अपनी प्रेमिका के हित की चिन्ता करता है और उसको प्राप्त करने में जो जो कष्ट होते हैं उन्हें भोग लेता है। अन्योन्यगामी

प्रेम में प्रेमी प्रेमिका को सुखी रखने का प्रयत्न करता है लेकिन साथ ही यह भी चाहता है कि प्रेमिका भी उसे सुखी रखे। स्वार्थपूर्ण प्रेम सब से नीचे दरजे का प्रेम है। इसमें प्रेमी केवल अपनी प्रसन्नता का ख्याल रखता है, प्रेमिका के सुख दुःख की कुछ परवाह नहीं करता।

१४९. बहुतों ने बर्फ़ का केवल नाम सुना है लेकिन उसे देखा नहीं, उसी प्रकार बहुत से धर्मोपदेशकों ने ईश्वर के गुणों को धर्मग्रन्थों में पढ़ा है लेकिन अपने जीवन में उनका अनुभव नहीं किया। बहुतों ने बर्फ़ को देखा है लेकिन उसका स्वाद नहीं लिया, उसी प्रकार बहुत से धर्मोपदेशकों को ईश्वर के तेज का एक बूंद मिल गया है लेकिन उन्होंने उसके तत्व को नहीं समझा। जिन्होंने बर्फ़ को खाया है वे ही उसके स्वाद को बता सकते हैं उसी प्रकार जिन्होंने ईश्वर की संगति का लाभ भिन्न भिन्न अवस्थाओं में उठाया है, कभी ईश्वर का सेवक बनकर, कभी मित्र बनकर, कभी भक्त बनकर और कभी एकदम उसी में लीन होकर, वे ही बतला सकते हैं कि परमेश्वर के गुण क्या हैं और उसकी संगति के प्रेमरस को आस्वादन करने में कैसा आनन्द मिलता है।

१५०. सब आत्मायें एक हैं लेकिन परिस्थितियों के अनुसार उनकी चार क़िस्में हैं।

(१) बद्ध—बन्दी की हुई।
(२) मुमुक्षु—मोक्ष की इच्छा करने वाली।
(३) मुक्त—मोक्ष प्राप्त की हुई।
(४) नित्यमुक्त—सदैव मुक्त रहने वाली।

१५१. ईश्वर चीनी के पहाड़ की तरह है। एक छोटी चींटी चीनी का एक दाना लाती है, बड़ी चींटी कुछ अधिक दाने लाती है लेकिन पहाड़ ज्यों का त्यों बना रहता है। यही हाल भक्तों का है। वे ईश्वर के गुणों में से एक गुण का लेशमात्र भी पाकर प्रसन्न हो जाते हैं। उसके सम्पूर्ण गुणों का अनुभव कोई कर नहीं सकता।

१५२. कुछ लोगों को एक गिलास भर शराब पीने से नशा आता है और कुछ को नशा लाने के लिये दो या तीन बोतलों की आवश्यकता होती है लेकिन नशे का अनुभव दोनों करते हैं। उसी प्रकार कुछ भक्त ईश्वरीय तेज के एक किरन को पाकर प्रसन्न हो जाते हैं और कुछ प्रत्यक्ष उसके दर्शन को पाकर प्रसन्न होते हैं लेकिन भाग्यशाली हैं दोनों। आनन्द दोनों को मिलता है।

१५३. साधुओं की संगति चावल के धोवन की तरह है। चावल के धोवन को पीने से नशा उतर जाता है, उसी प्रकार साधुओं की संगति से वासनारूपी शराब को पीकर उन्मत्त सांसारिक लोगों का नशा उतर जाता है।

१५४. ज़मीन्दार का कारिन्दा जब गावों में वसूल तहसील करने के लिये जाता है तो रिआया को बहुत सताता है, लेकिन जब वह मालिक के पास जाता है तो उसका बर्ताव बदल जाता है। वहाँ पहुँची हुई रिआया के दुःखों को वह सुनता है और उन्हें दूर करने का भरसक प्रयत्न करता है। मालिक के डर और उसकी सोहबत से इतना परिवर्तन कारिन्दे में होता है। उसी प्रकार साधुओं की भी सोहबत दुष्टों को अच्छे मार्ग पर ला सकती है और उनके हृदय में डर और भक्ति पैदा कर सकती है।

१५५. गीली लकड़ी भी आग पर रखने से सूखी हो जाती है और आख़िरकार शीघ्र जलने लगती है। उसी प्रकार महात्माओं का सत्संग भी सांसारिक पुरुषों और स्त्रियों के दिलों से लोभ और विषय की नमी को सुखा कर विवेक की अग्नि को प्रज्वलित कर सकता है।

१५६. मनुष्य अपनी आयु किस प्रकार व्यतीत करे। जिस प्रकार अंगीठी की आग को बुझने न देकर प्रज्वलित रखने के लिए सदैव एक लोहे के छड़ से खोदते रहने की आवश्यकता है; उसी प्रकार मन को

भी सचेत रखने के लिये और उसे निर्जीव होने से बचाने के लिये महात्माओं के सत्संग की आवश्यकता है।

१५७. धौंकनी धौंक धौंक कर जिस प्रकार लोहार अग्नि को सजीव रखता है उसी प्रकार मन को भी महात्माओं के सत्संग से सजीव रखना चाहिये।

१५८. समाधि में मन की क्या स्थिति होती है? मछली को पानी से निकाल कर फिर उसे पानी में डालने से जो आनन्दमय स्थिति उसके मन की होती है वह आनन्दमय स्थिति समाधि में महात्माओं के मन की होती है।

१५९. सच्चा मनुष्य वह है जो सत्यज्ञान के प्रकाश से तपस्वी बनता है। शेष तो नाममात्र के मनुष्य हैं।

१६०. "अहंकार (Ego) की दो क़िस्में हैं, (१) एक पक्का और (२) दूसरा कच्चा। पक्का अहंकार वह है जिसमें मनुष्य सोचता है कि इस संसार में मेरी कोई वस्तु नहीं है, यहां तक कि यह शरीर मेरा नहीं है; मैं सनातन से हूँ, मुक्त हूँ, सर्वज्ञ हूँ। कच्चा अहंकार वह है जिसमें मनुष्य सोचता है कि यह मेरा घर है, यह मेरी स्त्री है, मेरे लड़के हैं और यह मेरा शरीर है।

१६१. एक ज्ञानी (ईश्वरज्ञ) और एक प्रेमिक (ईश्वरभक्त) एक बार किसी जङ्गल के बीच से जा रहे थे। जाते जाते उनको एक चीता दिखलाई पड़ा। ज्ञानी ने कहा, "डर कर भागने की कोई बात नहीं है, ईश्वर हमारी रक्षा करेगा।" प्रेमिक ने कहा, "भाई साहब, आइये हम लोग भाग चलें, जो हम स्वयं कर सकते हैं उसमें ईश्वर को कष्ट देने की क्या आवश्यकता?"

१६२. ज्ञान (ईश्वर का ज्ञान) पुरुष की तरह है और भक्ति स्त्री की तरह ज्ञान का प्रवेश ईश्वर के केवल बाहरी कमरों तक होता है और भक्ति तो उसके भीतरी कमरों में भी घुस जाती है।

१६३. गिद्ध ऊँचे हवा पर उड़ता है परन्तु उसका ध्यान नीचे मरघट के गले सड़े मुरदों को ओर रहता है। उसी प्रकार संसारी पंडित भी आध्यात्मिक तत्वों का प्रतिपादन करके और उदात्त विचार प्रगट कर के भावुक लोगों के सामने अपनी विद्वत्ता दिखलाते हैं लेकिन मन गुप्त रूप से सदैव द्रव्य, आत्मप्रशंसा आदि सांसारिक चीज़ों पर लगा रहता है।

१६४. केवल धर्मग्रन्थों को पढ़कर ईश्वर का स्वरूप वर्णन करना वैसा ही है जैसा काशी के चित्र को देखकर काशी का स्वरूप वर्णन करना।

१६५. सा, री, ग, म, मुंह से कहना सहज है, लेकिन बाजे में इनपर राग निकालना कठिन है; उसी प्रकार धर्म की बातें करना सहज है लेकिन उनके अनुसार जीवन व्यतीत करना कठिन है।

१६६. हाथी के दो जोड़े दांत होते हैं, एक दिखलाने के और दूसरे खाने के। उसी प्रकार श्रीकृष्ण आदि अवतारी पुरुष और दूसरे महात्मा साधारण पुरुषों की तरह काम करते हुये दूसरों को दिखलाई पड़ते हैं लेकिन उनकी आत्मायें वास्तव में कर्मों से मुक्त होकर विश्राम करती रहती हैं।

१६७. आप उस पुरुष को कैसा समझते हैं जो एक अच्छा वक्ता और उपदेशक है लेकिन जिसमें आध्यात्मिक जागृत नहीं हुई? वह उस मनुष्य के सदृश है जो अपने संरक्षण में रखी हुई दूसरे की संपत्ति नष्ट करता है। वह दूसरों को शिक्षा दे सकता है क्योंकि ये शिक्षायें उसको खास तो हैं नहीं, बल्कि दूसरों की (शास्त्रों की) हैं और उनमें उसका कुछ खर्च होता नहीं।

१६८. तोता "राधाकृष्ण, राधाकृष्ण" बार बार कहता है लेकिन उसे जब बिल्ली पकड़ लेती है तो राधाकृष्ण भूलकर वह अपनी प्राकृतिक भाषा में "क्याँ क्याँ" करने लगता हैं, उसी प्रकार मनुष्य भी

सांसारिक सुख की आशा से हरि (ईश्वर) का नाम लेता है और धर्म के काम करता है लेकिन जब विपत्ति, दुःख दारिद्र और मृत्यु आते हैं तो वह ईश्वर को और धर्म के कामों को भूल जाता है।

१६९. खपड़ी में जो चावल भूने जाते हैं उनमें से छिटक कर जो बाहर चले जाते हैं वे उत्तम होते हैं, उनमें किसी प्रकार का दाग नहीं पड़ता, और जो खपड़ी में भूने जाते हैं उनमें से हरेक में एक छोटा सा जला हुआ दाग़ ज़रूर पड़ जाता है उसी प्रकार ईश्वर के भक्तों में भी जो संसार को छोड़कर बाहर चले जाते हैं वे पूर्ण और कलंक रहित होते हैं और जो संसार में रह जाते हैं उनमें अपूर्ण का (imperfection) छोटा सा दाग ज़रूर लगा रहता है।

१७०. दही से मक्खन को निकाल कर उसी बरतन में नहीं रखना चाहिये नहीं तो मक्खन की मिठास कम हो जायगी और वह पतला पड़ जायगा। उसे दूसरे बरतन में स्वच्छ पानी डालकर रखना चाहिये। उसी प्रकार संसार में रहकर यदि थोड़ी सी (सिद्धि) किसी मनुष्य को मिल जाय और मनुष्य संसार ही में आगे भी रहे तो उसके दूषित होने की संभावना है। लेकिन वह संसार से अलिप्त रह कर सिद्धि को कायम रखता हुआ पवित्र रह सकता है।

१७१. कज्जल की कोठरी में रहकर आप चाहे जितने सावधान रहें, काजल कुछ न कुछ अवश्य लगेगा। उसी प्रकार दुष्टों की संगति में रहकर मनुष्य चाहे जितना संयम रक्खे और अपने चरित्र की देख भाल करे लेकिन उसका मन विषय-वासना की ओर कुछ न कुछ ज़रूर जायगा।

१७२. एक ब्राह्मण और एक सन्यासी सांसारिक और धार्मिक विषयों पर बातचीत करने लगे। सन्यासी ने ब्राह्मण से कहा "बेटा, इस संसार में कोई किसी का नहीं है" ब्राह्मण इसको कैसे मान सकता था। वह तो यही समझता था कि अरे मैं तो दिन

रात अपने कुटुम्ब के लोगों के लिये मर रहा हूँ क्या ये मेरी सहायता समय पर न करेंगे? ऐसा कभी नहीं हो सकता। उसने सन्यासी से कहा, "महाराज, जब मेरे सिर में थोड़ी सी पीड़ा होती है तो मेरी माँ को बड़ा दुःख होता है और दिन रात वह चिन्ता करती है क्योंकि वह मुझे अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करती है। प्रायः वह कहती है कि भइया के सिर की पीड़ा अच्छी करने के लिये मैं अपने प्राण तक देने को तैय्यार हूँ। ऐसी माँ समय पड़ने पर मेरी सहायता न करे, ऐसा कभी हो नहीं सकता।" सन्यासी ने जवाब दिया, "यदि ऐसी बात है तो तुम्हें वास्तव में अपनी माँ का भरोसा करना चाहिये, लेकिन मैं तुमसे सचसच कहता हूँ कि तुम बड़ी भूल कर रहे हो। इस बात का कभी भी विश्वास न करो कि तुम्हारी माँ, तुम्हारी स्त्री या तुम्हारे लड़के तुम्हारे लिये अपने प्राणों का बलिदान कर देंगे। यदि चाहो तो परीक्षा कर सकते हो। घर जाकर पेट की पीड़ा का बहाना करो और ज़ोर ज़ोर चिल्लाओ। मैं आकर तुमको एक तमाशा दिखाऊँगा। ब्राह्मण के मन में बात आ गई और उसने दर्द का बहाना किया। डाक्टर, वैद्य, हकीम सब बुलाये गये लेकिन दर्द नहीं मिटा। बीमार की माँ, स्त्री और लड़के मारे रंज के परेशान थे। इतने में सन्यासी महाराज भी पहुँच गये। उन्होंने कहा 'बीमारी तो बड़ी गहरी है, जब तक बीमार के लिये अपनी कोई जान न देदे तब तक वह अच्छा नहीं होने का।"

इस पर सब भौचक्के रह गये। सन्यासी ने माँ से कहा, "बूढ़ी माता, तुम्हारे लिये जीवित रहना और मरना एक समान है, इसलिये यदि तुम अपने कमाऊ पूत के लिये अपनी जान दे दो तो मैं उसे अच्छा कर सकता हूँ। अगर तुम माँ होकर अपनी जान नहीं दे सकती तो फिर अपनी जान और दूसरा कौन देगा?

बुढ़िया स्त्री रोकर कहने लगी, "बाबा जी, आपका कहना तो सत्य है, मैं अपने प्यारे पुत्र के लिये प्राण देने को तैय्यार हूँ, लेकिन ख्याल

यही है कि ये छोटे छोटे बच्चे मुझसे बहुत लगे (परचे) हैं, मेरे मरने से इनको बड़ा दुःख होगा। अरे मैं बड़ी अभागिनी हूँ कि अपने बच्चे के लिये अपनी जान नहीं दे सकती।" इतने में स्त्री भी रोती रोती अपने सास ससुर की ओर देखकर बोल उठी, "माँ, तुम लोगों की वृद्धावस्था देखकर मैं भी अपने प्राण नहीं दे सकती।" सन्यासी ने घूम कर स्त्री से कहा, "पुत्री, तुम्हारी माँ तो पीछे हट गई, लेकिन तुम तो अपने प्यारे पति के लिये अपनी जान दे सकती हो।" उसने उत्तर दिया "महाराज, मैं बड़ी अभागिनी हूँ, मेरे मरने से मेरे माँ बाप मर जायंगे इसलिये मैं यह हत्या नहीं ले सकती।" इस प्रकार सब लोग जान न देने के लिये बहाने करने लगे। सन्यासी ने तब रोगी से कहा, "क्यों जी, देखते हो न, कोई तुम्हारे लिये जान देने को तैयार नहीं है। "कोई किसी का नहीं है" मेरे इस कहने का मतलब अब तुम समझे कि नहीं।" ब्राह्मण ने जब यह हाल देखा तो कुटुम्ब को छोड़कर वह भी सन्यासी के साथ वन को चला गया।

१७३. मन का दुष्ट वासनाओं में रहना इस प्रकार है जिस प्रकार उच्चकुलोत्पन्न ब्राह्मण का अछूतों के साथ रहना अथवा सज्जनों का नगर के गन्दे महल्ले में रहना।

१७४. जिस प्रकार पानी का प्रभाव पत्थर में नहीं पड़ सकता उसी प्रकार धार्मिक उपदेशों का प्रभाव बद्ध जीवों पर नहीं पड़ता है।

१७५. जिस प्रकार कील पत्थर में नहीं गाड़ी जा सकती ज़मीन में आसानी से गाड़ी जा सकती है, उसी प्रकार साधुओं के उपदेशों का बद्ध जीवों पर कोई प्रभाव नहीं होता, भक्तों पर होता है।

१७६. जिस प्रकार मिट्टी पर निशान फौरन उठ आता है, पत्थर पर नहीं उठता, उसी प्रकार भक्तों के हृदयों में धार्मिक शिक्षाओं का प्रभाव पड़ता है, बद्ध जीवों के हृदयों पर नहीं।

१७७. जिस प्रकार छोटे लड़के और छोटी लड़की को वैवाहिक

सुख या प्रेम का ज्ञान नहीं होता उसी प्रकार सांसारिक मनुष्य को ईश्वर के सुख की कल्पना नहीं होती।

१७८. जब तक शीशे में मिट्टी लगी रहती है तब तक सूर्य्य की किरणों का प्रकाश उस पर नहीं पड़ता, उसी प्रकार जब तक हृदय में अपवित्रता भरी रहती है और आँखों के सामने माया का परदा लटकता रहता है तब तक ईश्वर की ज्योति कभी दिखलाई नहीं पड़ सकती। जिस प्रकार मिट्टी पोंछ डालने से शीशे में किरणें दिखलाई देने लगती हैं उसी प्रकार अपवित्रता और माया को दूर कर देने से हृदय में ईश्वर दिखलाई देने लगता है।

१७९. कमानी की कुर्सी पर (अथवा कोंच पर) बैठने से वह नीचे दब जाती है लेकिन उठ जाने पर वह फिर पूर्ववत् उठ जाती है। सांसारिक लोगों की भी यही दशा है। जब तक वे उपदेशकों के उपदेशों को सुनते रहते हैं, तब तक उनके हृदय में धार्मिक भाव भरे रहते हैं। लेकिन जब वे अपने काम में लग जाते हैं तो ऊँचे और उत्तम विचार उनके हृदय से निकल जाते हैं और पहिले की तरह वे फिर अपवित्र बन जाते हैं।

१८०. लोहा जब तक तपाया जाता है तब तक लाल रहता है। लेकिन जब बाहर निकाल लिया जाता है तो काला पड़ जाता है। यही दशा सांसारिक मनुष्य की भी है। जब तक वे मन्दिरों में अथवा अच्छी संगति में बैठते हैं तब तक उनमें धार्मिक विचार भी रहते हैं; किन्तु जब वे उनसे अलग हो जाते हैं तो वे फिर धार्मिक विचारों को भूल जाते हैं।

१८१. सांसारिक मनुष्यों की सबसे अच्छी पहिचान यह है कि जिन जिन बातों में धार्मिकता होती है उन उन बातों से वे घृणा करते हैं। उनको भजन, ईश्वर का संकीर्तन स्वयं अच्छा नहीं लगता और चाहते हैं कि दूसरे भी उन्हें नापसन्द करें। जो ईश्वर की प्रार्थना की हँसी

उड़ाते हैं और सब धर्मों और भक्तों की निन्दा करते हैं वे सांसारिक पुरुष नहीं हैं तो और हैं क्या ?

१८२. मगर का चमड़ा इतना मोटा और चिकना होता है कि उस पर कोई शस्त्र नहीं घुस सकता। उसी प्रकार सांसारिक मनुष्यों को उपदेश देने से उन पर कोई प्रभाव नहीं होता।

१८३. पापी मनुष्य का हृदय छल्लेदार बाल की तरह होता है। जिस प्रकार छल्लेदार बाल सीधा करने से सीधा नहीं होता, उसी प्रकार पापी मनुष्य का हृदय भी आसानी से पवित्र नहीं बनाया जा सकता।

१८४. धीवरों की स्त्रियों का एक झुण्ड दूर के बाज़ार से घर को लौट रहा था। रास्ते में रात हो गई और ज़ोर से पानी और पत्थर पड़ने लगा। वे भागकर पास रहनेवाले एक माली के घर चली गईं। माली ने एक कमरे में खूब फूल इकट्ठे कर रक्खे थे। उसने वही कमरा उन स्त्रियों को रात भर सोने के लिये दिया। कमरा इस क़दर महक से गमक रहा था कि बड़ी देर तक उनको नींद न आई। अंत में एक ने कहा, "आओ, इस मछली के पीपे को अपनी अपनी नाक में लगालें तब फूल की महक न मालुम होगी और निद्रा भी ख़ूब आवेगी।" यह बात सब को पसन्द आई और सब ने नाक में पीपे लगा लिये और तुरन्त सोने लगीं। सचमुच बुरी आदतों का प्रभाव लोगों पर ऐसा ही पड़ता है।

१८५. छोटे छोटे बच्चे बिना किसी भय या रुकावट के मकान के एक कमरे में खिलौनों के साथ खेलते रहते हैं लेकिन जब उनकी माँ उस कमरे में आती है तो खिलौनों को फेंक कर वे "अम्मा, अम्मा" कहते हुये माँ की ओर दौड़ते हैं; उसी प्रकार ऐ मनुष्यो, तुम भी इस भौतिक संसार में छोटे छोटे बच्चों की तरह बिना भय या चिन्ता के धन, मन और कीर्ति रूपी खिलौनों के साथ खेल रहे हो, जब तुमको जगन्माता

का एक बार दर्शन हो जायगा तो धन, मान और कीर्ति को छोड़कर तुम उसकी ओर दौड़ोगे।

१८६. किसी ने कहा, "जब मेरा बेटा हरीश बड़ा होगा, तो मैं उसका विवाह करूंगा और फिर कुटुम्ब का भार उस पर सौंपकर मैं सन्यास ले लूंगा और फिर योगाभ्यास करूंगा।" इस पर भगवान ने कहा "बेटा तुमको सन्यासी होने का कभी भी अवसर न मिलेगा। तुम अभी कहते हो कि हरीश मेरा साथ नहीं छोड़ना चाहते, वे मुझसे बहुत हिल गये हैं। कल तुम फिर यह कहने लगोगे कि जब हरीश के लड़का होगा और उसका विवाह हो जायगा तब सन्यास लूंगा। इस प्रकार न तुम्हारी इच्छाओं का अन्त होगा और न तुम सन्यासी हो सकोगे।"

१८७. ज्ञान से समान भाव (unity) का विचार होता है और अज्ञान से भेदभाव (diversity) का।

१८८. जिस प्रकार पुल के नीचे पानी एक ओर से आता है और दूसरी ओर से बह जाता है, उसी प्रकार धार्मिक उपदेश सांसारिक मनुष्यों के दिमागों में एक कान से आते हैं और दूसरे कान से बिना कोई असर डाले निकल जाते हैं।

१८९. जिस प्रकार कबूतर के कोठे (पेट) में चुगे हुये दाने भरे रहते हैं, उसी प्रकार सांसारिक मनुष्यों से बातचीत करते समय तुमको यह प्रत्यक्ष मालूम होगा कि उनके हृदय में सांसारिक विचार और सांसारिक वासनायें भरी हुई हैं।

१९०. जब फल आप से आप पक कर ज़मीन पर गिर पड़ता है तो वह बड़ा मीठा होता है, लेकिन जब एक कच्चा फल तोड़कर पकाया जाता है तो उसमें इतनी मिठास नहीं होती। जब मनुष्य संसार भर के प्राणियों में एकही आत्मा को देखता है तभी उसमें जातिभेद का भाव नहीं रह जाता, लेकिन जब तक उसमें यह ज्ञान नहीं होता और प्राणियों में

छोटे बड़े का भेदभाव रहता है तब तक पुरुषों का जातिभेद का विचार करना ही पड़ता है। इस दशा में भी यदि मनुष्य जातिभेद न मानने और स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने का बहाना करता है वह पकाया हुआ कच्चा फल नहीं है तो और क्या है?

१६१. जब आंधी चलती है तो पीपल और बट के वृक्ष एक ही तरह दिखलाई देते हैं, उसी प्रकार जब मनुष्य के अंतः-करण में सच्चे ज्ञान की आँधी चलने लगती है तो उसे जात पांत का भेद नहीं मालूम होता।

१६२. कच्चा घड़ा जब फूटता है तो उसकी मटी से कुम्हार फिर दूसरा घड़ा जब तैयार करता है, लेकिन जब पक्का घड़ा फूटता है तो उसकी खपड़ी से वह दूसरा घड़ा नहीं बनाता; उसी प्रकार जीवन भर अज्ञानी रहकर जब मनुष्य मरता है तो उसका पूर्वजन्म होता है, लेकिन जब वह पूर्ण ज्ञानी होकर मरता है तो उसकापुनर्जन्म नहीं होता है।

१६३. उबाला हुआ धान यदि खेत में बोया जाय तो वह नहीं जमता, लेकिन कच्चा धान जब बोया जाता है तो वह उगता है; उसी प्रकार जब मनुष्य सिद्ध होकर मरता है तो उसका पुनर्जन्म नहीं होता लेकिन जब वह असिद्ध (अज्ञानी) होकर मरता है तो जब तक वह सिद्ध नहीं हो जाता उसका पुनर्जन्म बार बार होता रहता है।

१६४. धान के भीतर के चावल का महत्व अधिक है क्योंकि उसी से पौदा उगता है, धान की भूसी का कोई महत्व नहीं है क्योंकि उससे पौदा नहीं उगता। तथापि यदि भूसी से अलग किया हुआ चावल बोया जाय तो वह उग नहीं सकता। उगने के लिये भूसी मिला हुआ चावल (यानी धान) बोना ही पड़ेगा। अतएव चावल की उपज में (व्यर्थ होती हुई) भूसी से भी सहायता मिलती है। उसी प्रकार धर्म की वृद्धि के लिये धार्मिक कृत्यों को करने की आवश्यकता है। वे सत्य के तत्वों

को धारण करने वाले पात्र हैं, और मुख्य तत्व हाथ लगने तक हरेक को उनका (धार्मिक-कृत्यों का पालन करना चाहिये।

१६५. बालक के हृदय का प्रेम पूर्ण और अखंड है। जब उसका विवाह हो जाता है तो आधा प्रेम उसका स्त्री की ओर लग जाता है। जब उसके बच्चे हो जाते हैं तो चौथाई प्रेम और उन बच्चों की ओर लग जाता है। बचा हुआ चौथाई प्रेम पिता, माता, मान, कीर्ति, वस्त्र, और अभिमान में बँटा रहता है। ईश्वर की ओर लगाने के लिये उसके पास प्रेम बचता ही नहीं। अतएव बालपन से ही मनुष्य का अखंड प्रेम ईश्वर की ओर लगाया जाय तो वह उस पर प्रेम लगा सकता है और उसे (ईश्वर को) प्राप्त भी कर सकता है। बड़े हो जाने पर ईश्वर की ओर प्रेम लगाना फिर कठिन हो जाता है।

१६६. जब तोता बुड्ढा हो जाता है और जब उसका गला मोटा पड़ जाता है तो उसे गाना नहीं सिखलाया जा सकता। वह गाना उसी समय सीख सकता है जब वह बच्चा हो और उसका कंठ न फूटा हो; उसी प्रकार बुढ़ापे में ईश्वर को ओर मन लगाना कठिन है। ईश्वर की ओर मन जवानी ही में लगाया जा सकता है।

१६७. बांस जब तक छोटा होता है तब तक वह हर ओर मोड़ा जा सकता है लेकिन जब वह बढ़ जाता है तो जब उसे मोड़ना होता है तो वह टूट जाता है। उसी प्रकार ईश्वर की ओर जवानों के दिलों को मोड़ना सहल है लेकिन बुड्ढों के दिलों को मोड़ना कठिन है। उनके दिल तो पकड़ में आते ही नहीं।

१६८. जब एक सेर दूध दो सेर पानी मे मिलाया जाता है तो उसे औटा कर खोर बनाने में बड़ा समय और परिश्रम लगता है; उसी प्रकार सांसारिक मनुष्यों में गन्दे विचार इतने अधिक भरे रहते हैं कि उन्हें निर्मूल करने और उनकी जगह पर पवित्र विचार भरने में बड़े समय और परिश्रम की आवश्यकता होती है।

१९९. सरसों के दाने जब बंधे हुये बंडल से नीचे छितरा जाते हैं तो उनका इकट्ठा करना कठिन है, उसी प्रकार जब मनुष्य का मन संसार की अनेक प्रकार की बातों में दौड़ता फिरता है, तो उसको रोक कर एक ओर लगाना कोई सरल बात नहीं है।

२००. क्या सब मनुष्य ईश्वर को दर्शन कर सकेंगे? जिस प्रकार किसी मनुष्य को भोजन ९ बजे सबेरे मिलता है, किसी को दोपहर को, किसी को २ बजे और किसी को सूर्य डूबने पर; कोई भूखा नहीं रह जाता; उसी प्रकार किसी न किसी समय चाहे इस जीवन में हो अथवा अन्य कई जन्मों में, ईश्वर के दर्शन सब मनुष्य अवश्य कर सकेंगे।

२०१. प्रत्येक मनुष्य को अपने धर्म पर चलना चाहिये, ईसाइयों को ईसाई धर्म पर, और मुसल्मानों को मुसल्मानी धर्म पर चलना चाहिये। हिन्दुओं के लिये आर्य्य ऋषियों का बतलाया हुआ पुराना हिन्दू धर्म सर्वोत्तम है।

२०२. दुःख के आंसू और सुख के आंसू एक ही आंख के दो भिन्न २ कोनों से निकलते हैं। दुःख के आंसू आंख के नाक वाले कोने से निकलते हैं और सुख के आंसू आंख के बाहरी तरफ वाले कोने से।

२०३. आजकल के धर्मोपदेशक धर्म का प्रचार करने के लिये जिस प्रणालो को काम में लाते हैं उसके बारे में आपका क्या मत है?

यह प्रणाली उसी प्रकार (निरर्थक) है जिस प्रकार भोजन एक ही मनुष्य के पेट भरने को हो और उसी के भरोसे पर सौ मनुष्य का निमंत्रण किया जाय। आजकल के धर्मोपदेशकों का आध्यात्मिक ज्ञान बहुत परिमित होता है। उन्हें सच्चे धर्मोपदेशक नहीं मानना चाहिये।

२०४. सच्चा उपदेश किस प्रकार का होता है?

दूसरों को उपदेश देने की अपेक्षा यदि मनुष्य उसी समय में स्वयं ईश्वर की अराधना करे तो मानों उसने काफी उपदेश दिया। सच्चा उपदेशक वही है जो स्वयं मुक्त होने का प्रयत्न करता है। न मालूम कहाँ

से सैकड़ों मनुष्य उसके पास उपदेश लेने के लिये स्वयं जमा हो जाते हैं। जब गुलाब फूलता है तो मधुमक्खियां बिना बुलाये आप से आप सैकड़ों की तादाद में उसके चारों ओर जमा हो जाती हैं।

२०५. स्मशान भूमि में मुरदा चुपचाप पड़ा रहता है लेकिन उसके चारों ओर सैकड़ों गिद्ध आप से आप इकट्ठे हो जाते हैं। उनको कोई बुलाने नहीं जाता।

२०६. दीपक जलाया गया कि पतिङ्गे पहुँचे और गिर गिर करके उन्होंने अपने प्राण देना शुरू किया। दीपक उनको बुलाने नहीं जाता। सच्चे विद्वान उपदेशकों का उपदेश इसी प्रकार का होता है। वे लोगों से कहते नहीं फिरते कि तुम लोग हमारे उपदेश को आकर सुनो बल्कि सैकड़ों न मालुम कहाँ से स्वयं बिना बुलाये उनके पास आकर इकट्ठा होते हैं।

२०७. जहाँ मिठाई या चीनी रहती है वहाँ चीटियाँ स्वयं पहुँचती हैं। चीनी बनाने की कोशिश करो, चीटियाँ स्वयं तुम्हारे पास पहुँचेंगी।

२०८. जिस घर के लोग जागते रहते हैं उस घर में चोर नहीं घुस सकते, उसी प्रकार यदि तुम (ईश्वर पर भरोसा रखते हुए) हमेशा चौकन्ने रहो तो बुरे विचार तुम्हारे हृदय में न घुस सकेंगे।

२०९. चिड़िया जब उड़ जाती है तो पिंजड़े की कोई परवाह नहीं करता, उसी प्रकार जीवरूपी चिड़िया जब उड़ जाती है तो फिर शेष रहे हुये मुरदे की कोई परवाह नहीं करता।

२१०. जिस प्रकार बिना तेल के दीपक नहीं जल सकता, उसी प्रकार बिना ईश्वर के मनुष्य अच्छी तरह नहीं जा सकता।

२११. जिस प्रकार शिकार किया गया बन्दर शिकारी के पास मरता है, उसी प्रकार मनुष्य भी सौन्दर्य का शिकार होकर उसी के पास मरता है।

२१२. एक दुराचारिणी स्त्री जब अपने धर्मात्मा पति को मारती

है और उस पर अपना कुत्सित प्रभाव डालने का प्रयत्न करती है तो क्या होता है ?

जिस प्रकार पके आम को दबाने से गुठली और रस बाहर निकल जाते हैं, केवल छिलका हाथ में रहता है; उसी प्रकार धर्मात्मा पति का मन तो ईश्वर की ओर रहता है, उसका शरीर अलबत्ते स्त्री के आधीन रहता है।

२१३. पैसे से केवल रोटी दाल मिल सकती है। वह रक्त मांस नहीं हो सकता। अतएव जीवन का एक ही मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना नहीं होना चाहिये।

२१४. हवा चन्दन के वृक्ष से भी गुजरती है और सड़े हुये मुरदे पर से भी गुज़रती है लेकिन वह किसी से मिलती नहीं, दोनों प्रकार की गन्ध से अलग रहती है। उसी प्रकार मुक्त मनुष्य संसार में रहते हैं लेकिन सांसारी पुरुषों में मिल नहीं जाते।

२१५. यदि तुम डोरे को सुई के नोक में डालना चाहते हो तो ऐसा करने से पहिले डोरे के सिरे को बट लो और उस पर से डोरे के तन्तुओं को नोच डालो इसी प्रकार यदि तुम अपना मन और अपना दिल ईश्वर में लगाना चाहते हो तो विनयशील और नम्र बनो और वासनाओं के तन्तुओं को नोच कर फेंक दो।

२१६. किसी स्थान में एक सांप रहता था। उसके पास तक जाने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ती थी क्योंकि जो कोई उसके पास जाता उसे वह काट खाता था। संयोगवश एक महात्मा उस ओर से निकले। सर्प काटने के लिये उनके पीछे दौड़ा। परन्तु ज्योंही महात्मा के सामने पहुँचा त्योंही उनकी नम्रता को देख कर उसकी कटुता जाती रही। सर्प को देखकर महात्मा ने कहा, "मित्र, क्या तुम मुझे काटने का विचार कर रहे हो ?" सांप ने सर लटका लिया और चुपचाप खड़ा रहा। महात्मा ने कहा, "मित्र, अब किसी को मत काटना।" सांप ने मान लिया और

महात्मा जी चले गये। उस दिन से सांप ने काटना छोड़ दिया और शांति से बिल में रहने लगा। थोड़े दिनों के बाद लोगों ने समझा कि सांप का विष निकल गया है इसलिये वे उसे कष्ट देने लगे। कोई ढेले फेंकने लगा, कोई उसकी पूछ पकड़ कर निर्दयता से घसीटने लगा। उसे अब अपार कष्ट होने लगा। संयोगवश वे ही महात्मा उसी मार्ग से होकर फिर निकले। सांप की दुर्दशा देखकर उन्हें बड़ी दया आई। उन्होंने उसका कारण पूछा। सांप ने उत्तर दिया, "महात्मन् जिस समय से आपने शिक्षा दी है उसी समय से मैं किसी को नहीं सताता हूँ परन्तु खेद है कि वे मुझे ही कष्ट देने लगे हैं।" महात्मा ने कहा, "अफसोस मित्र, मैंने कहा तो अवश्य था कि तुम किसी को काटना नहीं परन्तु यह नहीं कहा था कि किसी को डरवाना भी नहीं। तुम किसी को काटो नहीं परन्तु फुफकारते अवश्य रहो, ताकि लोग, तुमसे डरते रहें और तुमको हानि न पहुँचावें।"

२१७. (भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः) इसलिये अगर तुम बड़े होना चाहते हो तो नम्र और सरल बनो।

२१८. तराजू के जिस पलड़े में बोझा होता है वह हमेशा नीचे रहता है और जिसमें बोझा नहीं रहता वह ऊपर उठा रहता है। उसी प्रकार गुणी और योग्य पुरुष हमेशा नम्र और सरल रहता है और मूर्ख हमेशा अभिमान में चूर रहता है।

२१९. महात्मा लोग ईश्वर के नज़दीकी सम्बन्धी हैं। वे उसके मित्र और घर के खास प्राणी हैं। और दूसरे संसार के साधारण पुरुष तो उसके केवल उत्पन्न किये हुये प्राणी हैं।

२२०. जो लोग संसार में रहते हुये मोक्ष पाने का प्रयत्न करते हैं वे उन सिपाहियों की तरह हैं जो क़िले के पीछे छिपकर शत्रु से लड़ते हैं। और जो ईश्वर की खोज में संसार को छोड़ देते हैं वे उन सिपाहियों की तरह हैं जो खुले मैदान में शत्रु से लड़ते हैं। क़िले

के पीछे से शत्रु से लड़ना खुले मैदान लड़ने से अधिक सरल और सुरक्षित है।

२२१. जगन्माता से ऐसी प्रार्थना करो कि "हे माता, मुझको एकनिष्ट भक्ति और अचल श्रद्धा दे।"

२२२. जिस घर में सांप अधिक हों उसमें रहनेवाला मनुष्य जिस प्रकार बड़ा सावधान रहता है उसी प्रकार संसार में रहने वाले मनुष्यों को विषयवासना और लोभ में पड़ने से सावधान रहना चाहिये।

२२३. यदि घड़े के पेंदे में एक छोटा सा भी छेद होता है तो सब पानी बह जाता है, उसी प्रकार साधन में यदि किंचित भी सांसारिकता रही तो उसके सब प्रयत्न विफल होंगे।

२२४. ईश्वर कहता है, "मैं काटने वाला साँप हूँ और मैं ही साँप के विष को झाड़ने वाला बाजीगर हूँ; दोषी ठहराने वाला न्यायाधीश (जज) मैं हूँ और न्यायाधीश के हुक्म से दण्ड देने वाला सेवक मैं हूँ।"

२२५. ईश्वर चोर के हृदय में प्रेरणा करता है कि जाओ और चोरी करो और साथ ही घर के लोगों से कहता है कि जागते रहो तुम्हारे घर में चोर चोरी करने वाले हैं। ईश्वर सब कुछ करता है।

२२६. सात व्यक्तियों ने ईश्वर के लिये अपने गुरुओं की आज्ञा का उल्लंघन किया। वे सातों ये हैं:—

(१) भरत (२) प्रह्लाद (३) शुकदेव (४) विभीषण (५) परशुराम (६) बलि (७) और गोपियाँ।

२२७. जिस प्रकार थियेटर में एक ही मनुष्य नाना प्रकार के भेष धारण करता है। उसी प्रकार इस संसार में ईश्वर भी नाना प्रकार के भेष धारण किये हुये हैं। और जिस प्रकार एक ही भेष नाट्यशाला में अनेक लोग धारण कर सकते हैं उसी प्रकार इस संसार में अनेक तरह

प्राणी मानवी भेष धारण किये हुये हैं। कुछ तो फाड़कर खा जाने वाले भेड़ियों के सदृश हैं, कुछ रीछ की तरह भयानक हैं, कुछ लोमड़ी की तरह धूर्त हैं और कुछ विषधर साँप हैं। यद्यपि वे मनुष्य हैं किन्तु गुण रखते हैं पशुओं के।

२२८. सन्यासी किसे होना चाहिये ?

उसे जो संसार को एकदम छोड़ देता है और जिसे यह भी चिन्ता नहीं रहती कि पहिनने को कपड़े और भोजन कल कहाँ से मिलेंगे। वह उस मनुष्य की तरह है जो एक ऊंचे वृक्ष के सिरे पर चढ़ जाता है और जरूरत पड़ने पर बिना बिचारे कि मेरे प्राण रहेंगे या नहीं, मेरी हड्डियाँ टूटेंगी या न टूटेंगी, एकदम जमीन पर गिर पड़ता है।

२२९. साँप बड़ा ज़हरीला होता है। कोई जब उसे पकड़ता है तो उसे वह काट खाता है। लेकिन वह मनुष्य जो साँप के विष को मंत्र से झाड़ना जानते हैं, उस साँप को केवल पकड़ ही नहीं लेता बल्कि बहुत से साँपों को गहनों की तरह गरदन और हाथ में लटकाये रहता है। उसी प्रकार जिसने आध्यत्मिक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उस पर काम और लोभ का विष नहीं चढ़ता।

२३० शान्ति और सद्‌गुणयुक्त जीवन व्यतीत करने के लिये लोगों की प्रशंसा और निन्दा पर ध्यान न दो।

२३१. सोने और पीतल को कसौटी पर रगड़ने से मालुम हो जाता है कि कौन सोना है और पीतल है। उसी प्रकार संकट और आपत्ति की कसौटी पर रगड़ने से सच्चे और ढोंगी साधुओं की परीक्षा होती है।

२३२. संसार में रहो लेकिन सांसारिक मत बनो। किसी कवि ने सच कहा है, "मेढक को साँप के साथ नचाओ लेकिन ख्याल रक्खो कि साँप मेढ़क को निकलने न पावे।"

२३३. एक साधू दिन रात झाड़ के शीशे में देख कर हमेशा

हँसता था। हँसने का कारण यह था कि शीशे के द्वारा वह लाल, पीले अनेक प्रकार के रंग देखता था और वास्तव में रंग नहीं थे, उसी प्रकार वह समझता था कि वह दुनिया भी रंग बिरंगी है लेकिन वास्तव में है कुछ नहीं।

२३४. एक ने कहा, 'मूल का स्वभाव कभी भी बदलने वाला नहीं है। दूसरे ने तड़ से उत्तर दिया, "जब आग कोयले में घुस जाती है तो वह उसके स्वाभाविक कालेपने को नष्ट कर देती," भगवान ने कहा है "ज्ञान की अग्नि से मन जब प्रज्वलित हो जाता है तो उसका मूल स्वभाव नष्ट हो जाता है और कोई प्रतिबन्ध शेष नहीं रह जाता।

२३५. जिस बर्तन में प्याज़ का रस रक्खा जाता है उसकी महक नहीं जाती चाहे वह सैकड़ों बार धोया जाय। उसी प्रकार अहंमन्यता (अहङ्कार) भी एक ज़बरदस्त दुराग्रह है वह समूल नष्ट नहीं होता।

२३६. अष्टकाष्ट के खेल की तरह इस संसार में जो कोई गुरू और इष्टदेव में श्रद्धा रखकर भक्ति का अभ्यास करता है उसका जीवन सुखी रहता है और उसके मार्ग में विघ्न नहीं आते।

२३७. अहंकार (ego-hood) की कल्पना किस प्रकार नष्ट की जा सकती है? ऐसा करने के लिये लगातार अभ्यास की आवश्यकता है। धान से चावल निकालते समय हमेशा इस बात के देखने की ज़रूरत है कि चावल ठीक तौर पर भूसी से अलग हो रहा है या नहीं, धान ठीक तौर पर चलाया तो जा रहा है, मूसर के नीचे का भाग कांड़ी में ठीक तौर पर गिर तो रहा है। इस प्रकार सब बातों पर ध्यान देते हुये धान जब बड़ी देर तक कूटा जाता है तब कहीं चावल निकलता है। उसी प्रकार पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके अहंकार नष्ट करने के लिये आवश्यकता है कि मनुष्य कभी कभी जांच किया करे कि कुवासनाओं को तो मैंने जीत लिया है, मेरे हृदय से प्रेम का श्रोत तो अब बहने लगा है, अरे यह शरीर क्या है? चमड़े और हड्डियों का बना हुआ एक पिंजड़ा है। शरीर

के भीतर क्या भरा है ? खून, पित्त कफ और मल। इतनी बुरी वस्तु का मैं अभिमान क्यों करता हूँ ? अरे आज से मैं अब इस शरीर का या इस से सम्बन्ध रखने वाली दूसरी चीज़ों का घमण्ड न करूंगा।

२३८. एकबार कोई पहुँचे हुए साधू रानी राशमणि के कालीजी के मंदिर में आये जहांभगवान (परमहंस रामकृष्ण) रहते थे। एक दिन उनको कहीं से भोजन न मिला और योंकि उनको भूक लग रही थी लेकिन उन्होंने किसी से भोजन का सवाल भी नहीं किया। थोड़ी दूर पर एक कुत्ता जूठी रोटी के टुकड़े खा रहा था। वे घट दौड़ कर उसके पास गये और उसको छाती से लगा कर बोले, " भइया, मुझे बिना खिलाये तुम क्यों खा रहे हो ?" और फिर उसी के साथ खानेलगे भोजन के अनन्तर वे फिर कालीजी के मंदिर में चले आये और इतनी भक्ति के साथ वे कालीजी की प्रार्थना करने लगे कि मन्दिर में सन्नाटा छा गया। प्रार्थना समाप्त करके जब वे जाने लगे तो भगवान (परमहंस रामकृष्ण) ने अपने भतीजे हृदय मुकर्जी को बुला कर कहा, "बच्चा इस साधू के पीछे २ जाओ और जो वह कहे उसे मुझसे कहो, हृदय उसके पीछे २ जाने लगा। साधु ने घूमकर उससे पूछा, कि तू मेरे पीछे २ क्यों आ रहा है ? हृदय ने कहा 'महात्मा जी मुझे कुछ शिक्षा दिजिये।" साधु ने उत्तर दिया, "जब तू इस गन्दे घड़े के पानी को और गंगाजल को समान समझेगा और जब इस बांसुरी की आवाज़ और जनसमूह की कर्कश आवाज तुम्हारे कान को एक समान मधुर लगेगी, तब तुम सच्चे ज्ञानी बन सकोगे।" हृदय ने लौटकर परमहंस जी से कहा। परमहंस जो बोले," उस साधु को वास्तव में ज्ञान और भक्ति की सच्ची कुंजी मिल चुकी है।" पहुँचे हुये साधु बालक, पिशाच, पागल और इसी तरह के और २ वेषों में घूमा करते हैं।

२३९. संसार के झंझटों से बंधा हुआ मनुष्य स्त्री और धन के मोह को आसानी से रोककर ईश्वर की ओर अपना मन नहीं

लगा सकता चाहे इस मोह में उसे कितने ही दुःखों को क्यों न भोगना पड़े।

२४०. मनुष्य को अच्छा गुरु भी मिल जाय और वह अच्छे आदमियों की सङ्गति में उठे बैठे भी किन्तु जब तक उसका मन चंचल रहता है तब तक उसे कोई लाभ नहीं हो सकता।

२४१. भगवान (श्रीरामकृष्ण) सब धर्मों और पंथों के दुराग्रह से चिढ़ते थे। वे कहा करते थे कि हरेक स्त्री पुरुष को अपने धर्म पर अटल श्रद्धा रखनी चाहिये लेकिन हठ और दुराग्रह से दूर रहना चाहिये।

२४२. यदि मनुष्य को विश्वास है कि जिन मूर्तियों की पूजा वह करता है उनमें सचमुच ईश्वर है तो उसे उसका फल मिलता है, लेकिन यदि वह केवल यही समझता है कि मूर्तियाँ पत्थर और मिट्टी की बनी हुई हैं, (उनमें ईश्वर नहीं है) तो ऐसी मूर्तियों की पूजा से उसे कोई लाभ नहीं हो सकता।

२४३. एक बार एक नैय्यायिक ने भगवान रामकृष्ण से पूछा, "ज्ञान, ज्ञाता और ज्ञेय क्या है।" भगवान ने उत्तर दिया, 'ऐ भलेमानुस, पांडित्य के ये सूक्ष्म भेद मुझे नहीं मालुम, मैं तो केवल आत्मा और जगन्माता को जानता हूँ।"

२४४. ईश्वर, उसके वचन और उसके भक्त सब एक ही हैं।

२४५. जरीब से नाप नाप कर और मेंड़ बना बना कर मनुष्य खेतों को बांट सकता है लेकिन सर के ऊपर आसमान को कोई बांट नहीं सकता। अभेद्य आकाश सर्वत्र व्याप्त है। उसी प्रकार अज्ञानी मनुष्य मूर्खतावश कहता है कि मेरा धर्म सब धर्मों से अच्छा है, सच्चा धर्म केवल मेरा वही धर्म है। किन्तु जब उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश पड़ जाता है तब उसे मालुम होता है कि सब धर्म और पन्थों के टंटे और बखेड़ों के ऊपर एक ही अखंड, सनातन, सच्चिदानन्द परमेश्वर अधिष्ठित है।

२४६. पिता की आज्ञा से देशनिर्वासित होकर राम सीता और लछमण बन को गये। राम आगे चलते थे सीताजी बीच में और लछमणजी सब के पीछे। लछमणजी हमेशा रामजी का दर्शन करना चाहते थे; लेकिन चूंकि सीताजी बीच में आ जाती थीं इसलिये वे दर्शन नहीं कर सकते थे। तब उन्होंने सीताजी से हाथ जोड़कर कहा, मां जरा एक बगल से चलो।" जब सीताजी बगल से चलने लगीं तो लछमण जी रामजी के दर्शन कर सके और उनकी इच्छा पूरी हुई। उसी प्रकार ब्रह्म, माया और जीव की भी रचना है। जब तक माया नहीं हट जाती तब तक आत्मा को ईश्वर के दर्शन नहीं होते।

२४७. मिट्टी के एक घड़े में पानी भर कर अगर तुम उसे ताक़ में रख दो तो थोड़े दिनों में पानी सूख जायगा; लेकिन अगर उसे पानी के भीतर रखदो तो जब तक वह वहां रक्खा रहेगा उसका पानी नहीं सूखेगा। ईश्वर के प्रति तुम्हारे प्रेम का यही हाल है। यदि पहिले एक बार तुम अपने अंतःकरण को ईश्वर के प्रेम से भरलो और फिर अपने घरेलू धन्धों में लिप्त होकर उसे भूल जाओ तो थोड़े समय में तुम्हारा भरा हुआ अमूल्य प्रेम ख़ाली हो जायगा। लेकिन यदि वही प्रेम से भरे हुये हृदय को ईश्वर के पवित्र प्रेम व दिव्य भक्ति में डुबाये रहो तो पूर्ण विश्वास रक्खो वह हमेशा ईश्वरीय प्रेम से लबालब भरा रहेगा।

२४८. तुम जब ध्यान करने बैठते हो तो तुम्हारा मन चंचल क्यों हो जाता है?

मक्खियां बाज़ वक्त हलवाइयों की दूकान में रक्खी हुई खुली मिठाइयों पर बैठती हैं। एक भंगी मैले का टोकरा लेकर जब दूकान के सामने से होकर निकलता है तो वे झट मिठाइयों को छोड़ कर टोकरे में बैठ जाती हैं। शहद की मक्खियां निकृष्ट वस्तुओं पर कभी नहीं बैठतीं, वे सदैव फूलों ही का रस पान किया करती हैं। सांसारिक मनुष्य साधा-

रण मक्खियों की तरह हैं। थोड़ी देर तक तो वे परमात्मा का ध्यान करते हैं किन्तु फिर वे विवश होकर उच्छिष्ट पदार्थों पर आ गिरते हैं। परमहंस मधुमक्खियों की तरह हैं। वे परमात्मा के ध्यानरूपी रस का पान सदैव करते रहते हैं, कभी उच्छिष्ट पदार्थों पर नहीं गिरते।

पूर्णबद्ध प्राणी उस कीड़े की तरह है जो कूड़े में पैदा होता है और कूड़े ही में मरता है; उसे किसी अच्छी वस्तु की कल्पना नहीं होती। साधारण बद्ध प्राणी उस मक्खी की तरह है जो कभी कूड़े पर बैठती है और कभी मिठाई पर। मुक्त प्राणी शहद की मक्खी की तरह है जो सिवाय शहद के दूसरी चीज़ को नहीं पीती।

२४९. सांसारिक मनुष्यों का हृदय गोबरैले की तरह होता है। गोबरैला हमेशा गोबर में रहना पसन्द करता है। यदि संयोगवश कोई उसे उठाकर कमल के फूल में रखदे तो उसकी खुबशू से वह मर जाता है। सांसारिक मनुष्य भी उसी तरह विषयवासना से दूषित वायुमण्डल को छोड़ कर दूसरी जगह एक क्षण भर भी नहीं रह सकते।

२५०. जिस प्रकार समुद्र के बीच में किसी जहाज़ के मस्तूल की चोटी में रहता हुआ पक्षी एक ही स्थान में रहने से ऊबकर और घबड़ाकर दूसरे स्थान की खोज में उड़ता है लेकिन कोई स्थान न पाकर थक कर वह फिर उसी मस्तूल वाले स्थान को वापस आता है; उसी प्रकार एक साधारण मुमुक्षु अपने अनुभवी और शिष्य के हित चाहने वाले गुरु की दीक्षा के अभ्यास से घबड़ा कर निराश हो जाता है और अपने गुरु पर अविश्वास करके दूसरे गुरू की खोज में संसार भर चक्कर लगाता है लेकिन अन्त में वह अपने पहले गुरू के पास व्याकुल होकर फिर लौटता है और इस बार गुरू के प्रति उसकी भक्ति बढ़ जाती है।

२५१. जो पुरुष संसार में रहता है लेकिन उसके मोह से अलग रहता है, ऐसे पुरुष की स्थिति कैसी होती है? वह यातो पानी में कमल

की तरह है या दलदल में मछली की तरह। पानी न तो कमल को भिगो सकता है और न दलदल मछली के शरीर को गन्दा कर सकता है।

२५२. जिस प्रकार एक गहरे कुयें के मुंह के पास खड़े होने से आदमी को डर लगा रहता है कि ऐसा न हो मैं कुयें में गिर पड़ूं, उसी प्रकार संसार में रहने वाले पुरुषों को प्रलोभनों में फंस जाने का डर रहता है इसलिये उन्हें सदैव चौकन्ने रहना चाहिये। जो संसार के प्रलोभन रूपी गहरे कुयें में एक बार गिर जाते हैं वे फिर उसमें से सुरक्षित और अदूषित मुशकिल से निकल सकते हैं।

२५३. जीवात्मा और परमात्मा का मिलाप मिनट और घंटे वाली सुइयों के हर घंटे में होने वाले मिलाप की तरह है। वे एक दूसरे से बंधे हुये हैं सुअवसर आते ही वे एक दूसरे से मिल जाते हैं।

२५४. मनुष्य को वैराग्य की शिक्षा किस प्रकार मिल सकती है?

एक स्त्री ने एक बार अपने पति से कहा, "प्राण प्यारे' मुझे अपने भाई की बड़ी चिन्ता रहती है। कई सप्ताहों से वह सन्यासी होने का बिचार कर रहा है और उसके लिये तैयारी भी कर रहा है। नाना प्रकार की वासनाओं को वह धीरे धीरे छोड़ रहा है" पति ने उत्तर दिया, "प्राण प्रिये, तुम अपने भाई की चिन्ता न करो' वह कभी सन्यासी नहीं हो सकता। जो सन्यासी होने के लिये चिरकाल तक सोचता है वह कभी सन्यासी हो नहीं सकता। स्त्री ने फिर पूछा कि मनुष्य सन्यासी कैसे हो सकता है? पति ने उत्तर दिया, "देखो मैं तुम्हें दिखलाता हूँ कि मनुष्य किस प्रकार सन्यासी हो सकता है, उसने अपने लम्बे अंगरखे को फाड़ डाला और उसके टुकड़े की लंगोटी लगा कर अपनी स्त्री से कहा, "आज से तुम और दूसरी स्त्रियां मेरे लिये माता के समान हैं" और फिर जंगल का रास्ता पकड़ा और वहां से फिर नहीं लौटा।

२५५. वैराग्य कितने प्रकार का होता है। साधारणतया दो प्रकार

का (१) उत्कट (२) और मध्यम। उत्कट वैराग्य एक ही रात में एक बड़े तालाब को खोद कर उसको उसी समय पानी से भर देने के सदृश है। मध्यम वैराग्य तालाब को धीरे धीरे खोदना है। कोई नहीं कह सकता वह पूरा खोदा जाकर कब पानी से भरा जायगा।

२५६. संसार में आसक्त हुये मनुष्य का क्या लक्षण है? वह एक पात्र में बंधे हुये नेवले की तरह रहता है। नेवले का मालिक ऊँचाई पर दीवाल में एक पात्र लगा देता है, रस्सी का एक सिरा नेवले के गले में बांध देता है और दूसरे सिरे में एक भारी वज़न बांध देता है। पात्र से बाहर निकल कर नेवला इधर उधर खेलता है लेकिन जब घबड़ाने लगता है तो दौड़ कर उसी पात्र में छिपता है लेकिन दूसरे सिरे में बंधा हुआ वज़न उसे उस सुरक्षित स्थान से खींचता है। उसी प्रकार संसार के दुखों और संकटों से त्रस्त होकर मनुष्य संसार से उड़ कर ईश्वर के समक्ष जाने का प्रयत्न करता है लेकिन संसार के प्रलोभन उसको खींचकर सांसारिक दुखों और संकटों में फिर खड़ा कर देते हैं।

२५७. एक मछुवाहे ने मछलियों को पकड़ने के लिये नदी में जाल फेंका। मछलियाँ उसमें ऐसी फँसीं जो उसी में शांत पड़ी हुई थीं, उसमें से निकलने की कोशिश भी नहीं कर रही थीं, कुछ ऐसी थीं जो उछलती कूदती थीं लेकिन बाहर निकल नहीं सकती थीं; कुछ मछलियाँ ऐसी भी थीं जो सड़ासड़ जाल से निकल कर भाग रही थीं। संसारी मनुष्य भी इसी प्रकार तीन प्रकार के होते हैं।

(१) मोक्ष के लिये प्रयत्न न करने वाले बद्ध।

(२) मोक्ष के लिये प्रयत्न करने वाले मुमुक्षु।

और (३) मुक्त

२५८. सवेरे का भाँया हुआ मक्खन दिन में भाँये गये मक्खन से उत्तम होता है। भगवान परमहंस अपने नवजवान शिष्यों से कहा करते

थे, "तुम लोग सवेरे निकाले हुये मक्खन की तरह हो और संसारी गृहस्थ शिष्य दिन में निकाले हुये मक्खन की तरह।"

२५६. ईश्वर कहां है और वह किस तरह मिल सकता है ?

मोती गहरे समुद्र में होते हैं। उनको पाने के लिये गहरी डुबकी लगानी पड़ेगी और बड़ा प्रयत्न करना होगा। इस संसार में ईश्वर के प्राप्त करने का भी यही हाल है।

२६०. (इस पंचभौतिक शरीर में ईश्वर किस प्रकार रहता है ?) इस प्रकार रहता है जिस प्रकार पिचकारी का डंडा पिचकारी में रहता है। वह शरीर में रहता है लेकिन उससे बिलकुल अलग है।

२६१. परमेश्वर के केवल नाम ही से जिसके रोंगटे खड़े हो जाँय और जिसकी आँखों से प्रेम के आँसू बहने लगें उसका यह अन्तिम जन्म समझना चाहिये।

२६२. हवा में उड़ने वाली अनेकों पतंगों में से दो ही एक डोरी तोड़ कर मुक्त होती है; उसी प्रकार सैकड़ों साधकों में से एक दो ही भव-बंधन से मुक्त होते हैं।

२६३. पराभक्ति (अत्युत्कृष्ट प्रेम) क्या है ? पराभक्ति (अत्युत्कृष्ट प्रेम) में उपासक ईश्वर को सब से अधिक नज़दीकी सम्बन्धी समझता है। ऐसी भक्ति गोपियों को श्रीकृष्ण पर थी। वे उसे जगन्नाथ नहीं कहती थीं बल्कि गोपीनाथ कहकर पुकारती थीं।

२६४. संपत्ति और विषयभोग में लगा हुआ मन खपड़ी में चिपटी हुई सुपारी की तरह है। जब तक सुपारी नहीं पकती तब तक अपने ही रस से वह खपड़ी में चिपटी रहती है। लेकिन जब रस सूख जाता है तो सुपारी खपड़ी से अलग हो जाती है और खड़खड़ाने से उसकी आवाज़ सुनाई पड़ती है। उसी प्रकार संपत्ति और सुखोपभोग का रस जब सूख जाता है तब मनुष्य मुक्त हो जाता है।

२६५. सात्विक, राजसिक और तामसिक पूजाओं में क्या भेद है ?

जो पुरुष विना अहंकार और दिखलावा के सच्चे हृदय से ईश्वर की उपासना करता है वह सात्विक पूजक कहलाता है। जो ईश्वर की पूजा का उत्सव मनाने के लिये झांकी सजाता है, कीर्तन कराता है, ब्राह्मणों और मित्रों को भोजन कराता है वह राजसिक पूजक है। और जो सैकड़ों निरपराध बकरों और भेड़ों का बलिदान करता है, मद्य मांस लोगों को खिलाता पिलाता है और पूजा के बहाने नाच देखने और गाना सुनने में मस्त रहता है वह तामसिक पूजक है।

२६६. मन मनुष्य को मूर्ख और बुद्धिमान बनाता है और मन ही मनुष्यों को संसार से बांधता और मुक्त करता है। मन ही से मनुष्य धर्मात्मा बनता है और मन ही से वह पतित होता है। जिसका मन ईश्वर के चरणों में लगा हुआ है उसे किसी भी पूजा और आध्यात्मिक साधन को आवश्यकता नहीं है। (गीता में श्रीकृष्ण जी ने कहा है—मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयोः)

२६७. उस सन्यासी की क्या दशा होती है जो विश्वास से नहीं बल्कि संसार से क्षण भर के लिये ऊब कर सन्यासी हो जाते हैं ?

जो पुरुष पिता, माता अथवा स्त्री से न पटने के कारण सन्यासी हो जाता है उसे वैरागी (ascectiby disgust) सन्यासी कहते हैं। उसका वैराग्य क्षणिक होता है। धनी पुरुष के यहां जब उसे अच्छे वेतन की नौकरी मिल जाती है तो वह अपने वैराग्य को भूल जाता है।

२६८. कोई भी बात क्या एक बारगी नहीं हो सकती ?

साधारण नियम तो यह है कि पूर्णता प्राप्त करने के लिये मनुष्य को वर्षों पहिले से तैयारी करनी पड़ती है। बाबू द्वारिकानाथ मित्र एक दिन में हाईकोर्ट के जज नहीं बना दिये गये थे। हाईकोर्ट के जज होने के पहिले उन्हें कई वर्ष परिश्रम और अध्ययन करना पड़ा था। जो उनकी तरह परिश्रम करने के लिये और दुख झेलने के लिये तैयार नहीं हैं वे छोटे २ ऐसे वकील बने रहेंगे जिनको मुकदमे भी नहीं मिलते।

तथापि परमेश्वर की कृपा से कालीदास की तरह कभी २ एक दम उन्नति होती है। कालीदास एक अपढ़ गँवार थे लेकिन माँ सरस्वती की कृपा से हिन्दुस्तान के सब से बड़े कवि हो गये।

२६९. भक्ति का प्रचण्ड स्वरूप क्या है ?

ज़ोर ज़ोर से हमेशा "जै काली की" कहना और हाथ उठा कर पागल की तरह नाच नाच कर "हरी बोलो हरी बोलो" कहना प्रचण्ड भक्ति का लक्षण है। कलियुग में प्रचण्ड भक्ति की अधिक आवश्यकता है। सौम्य ध्यान की अपेक्षा इससे फल जल्दी मिलता है, स्वर्ग का राज्य (सुख) एक दम जोरों के साथ हमला करके ले लेना चाहिये।

२७०. मनुष्य को अपने विचार और हेतु के अनुसार फल मिलता है ईश्वर तो कल्प वृक्ष है जिससे उसके भक्त जो चाहें सो पा सकते हैं। एक दरिद्र का लड़का अपने परिश्रम से हाईकोर्ट का जज होकर सोचता है, "अब मुझे बड़ा सुख है; मैं सीढ़ी के सब से ऊपर वाले डंडे तक पहुँच गया हूँ। वाह वाह ! अब तो सब कुछ ठीक है।" परमेश्वर उसको उत्तर देते हैं, "जैसे इस समय तुम हो, वैसे ही बने रहो।" लेकिन जब वह पेन्शन लेकर अपने गुजरे हुये जीवन पर एक दृष्टि डालता है तो वह एक "आह" की सांस भर कर कहता है, "अरे, यह मैंने क्या किया ? मैंने अपना सारा जीवन व्यर्थ ही गँवा दिया।" उस समय परमेश्वर भी उसको उत्तर देते हैं; अरे सचमुच तुमने यह क्या किया ? (अर्थात् कुछ नहीं किया, व्यर्थ में जीवन को नष्ट कर दिया)"

२७१. अपनी स्त्री के साथ रह कर तुम गार्हस्थ जीवन क्यों नहीं व्यतीत करते ?

भगवान (परमहंस रामकृष्ण) बोले, "देव कार्तिक ने एक दिन अपने नाखून से एक बिल्ली को खरबोट दिया। घर जाकर वे क्या देखते हैं कि उनकी माँ के गाल पर खरबोटने का चिन्ह बन गया है। आश्चर्य में आकर उन्होंने पूछा, "प्यारी माता; तुम्हारे गाल में यह चिन्ह कैसे

पड़ गया ?' जगन्माता ने उत्तर दिया, "बेटा यह तुम्हारी करतूत है। तुमने नाखून से खरबोट लिया है।" कार्तिकेय ने फिर पूछा, "माता मुझे स्मरण नहीं है कि मैंने कब खरबोटा है।" माता ने उत्तर दिया, "क्यों बेटा, क्या आज बिल्ली को खरबोटना तुम भूल गये ?" कार्तिकेय ने कहा, "नहीं भूला परन्तु तुम्हारे तो नहीं खरबोटा, यह चिन्ह तुम्हारे गाल पर कैसे आया ?" माता ने उत्तर दिया, "पुत्र, संसार में मेरे सिवा कोई नहीं है। यदि तुम किसी को कष्ट देते हो तो समझ लो कि तुम मुझे कष्ट दे रहे हो।" कार्तिकेय यह उत्तर सुन कर अवाक् रह गये और उस दिन उन्होंने प्रण किया कि मैं विवाह न करूँगा। विवाह करूँ किसके साथ संसार की सब स्त्रियाँ तो मेरी माँ हैं।" मैं भी कार्तिकेय की तरह प्रत्येक स्त्री को अपनी माता समझता हूँ।

२७२. जिसे मछली फँसाने की उत्सुकता है और जो यह जानना चाहता है कि अमुक तालाब में मछलियाँ हैं या नहीं, वह जानने के पहिले उन लोगों से दरियाफ़्त करता है जिन्होंने उस तालाब में मछली फँसाया है, क्या उस तालाब में मछली हैं ? उसको पकड़ने के लिये किस प्रकार के चारे की आवश्यकता पड़ेगी। वह फिर बंसी लेकर उस तालाब को जाता है और उसे फेंक कर घण्टों धैर्य के साथ बैठता है। तब कहीं वह बड़ी और सुन्दर मछली फँसा पाता है। उसी प्रकार साधु और सन्तों के वचनों पर विश्वास करके और मन रूपी बंसी में भक्ति-रूपी चारा लगाकर मनुष्य को ईश्वर रूपी मछली को अंतःकरण में फँसाने का प्रयत्न करना चाहिये। धैर्य के साथ लगातार बहुत समय तक जब प्रतीक्षा की जायगी तब कहीं (ईश्वररूपी) दिव्य मछली फँस सकेगी।

२७३. मछली चाहे जितनी गहराई में हों और तालाब के चाहे जिस कोने में हों, जब सुन्दर महकदार बढ़िया चारा फेंका जाता है तो वे चारों ओर से दौड़ती हैं। उसी प्रकार उसके अन्तःकरण में भक्ति

और श्रद्धा का चारा लगा हुआ है, ईश्वर उसकी ओर तत्काल दौड़ते हैं।

२७४. जिस मनुष्य को भूत लगता हो, यदि उसे मालूम हो जाय कि मुझे भूत लगता है तो भूत उसे तुरन्त छोड़ देगा। उसी प्रकार माया रूपी भूत से परेशान किये हुये जीव को यदि मालुम हो जाय कि माया मुझ पर अपना अधिकार जमाये हुये है तो माया उसे तुरन्त छोड़ देगी।

२७५. दाद को जितना खुजलाते जावो उतनी खुजली और बढ़ती जाती है और उससे उतना ही आनन्द भी मिलता है; उसी प्रकार ईश्वर के गुणानुवाद करने वाले भक्तों को अधिकाधिक आनन्द होता है।

२७६. दाद के खुजलाने में पहिले जितना सुख होता है उतना ही खुजलाने के बाद असह्य दुख मिलता है। उसी प्रकार संसार के सुख पहिले बड़े सुखदायक मालुम होते हैं। लेकिन पीछे से उनसे असह्य और अकथनीय दुख मिलता है।

२७७. मंत्र से पूत किये हुये राई के दानों (mustard seeds) को रोगी पर फेंकने से उसका भूत उतरता है किन्तु यदि भूत दानों ही में समा गया हो तो फिर वह किसी प्रकार उतारा नहीं जा सकता है। उसी प्रकार जिस हृदय से तुम ईश्वर का चिन्तन करते हो यदि वह संसार के दुर्वासनाओं से दूषित हो गया हो तो फिर तुम ऐसे दूषित हृदय से किस प्रकार सफलतापूर्वक भगवान की भक्ति कर सकते हो ?

२७८. नाव पानी में रह सकती है परन्तु पानी नाव में नहीं रह सकता। उसी प्रकार मुमुक्षु संसार में रह सकता है लेकिन संसार को मुमुक्षु में नहीं रहना चाहिये।

२७९. जो अपने गुरू को केवल साधारण मनुष्य समझता है उसे उसकी प्रार्थना और भक्ति का क्या फल मिल सकता है ? हम लोगों को अपने गुरू को साधारण मनुष्य नहीं समझना चाहिये। ईश्वर के दर्शन

होने से पूर्व शिष्य को पहिले अपने गुरू का ईश्वरी दर्शन होता है और फिर गुरू स्वयं ईश्वर स्वरूप बनकर शिष्य को परमेश्वर का दर्शन करवाता है तब शिष्य को गुरू और परमेश्वर एक ही दिखलाई पड़ते हैं। शिष्य जो वर मांगता है गुरू उसे देता है। इतना ही नहीं बल्कि गुरू शिष्य को निर्वाण के परम सुख तक पहुँचा देता है।

जो जो शिष्य मांगता है वह सब गुरू देता है।

२८०. प्रार्थना (prayer) का भी क्या कोई फल मिलता है? जी हां, मिलता है। जब मन और वाणी एक ही में मिल जाते हैं तब प्रार्थना का फल मिलता है। उस मनुष्य को प्रार्थना का कोई फल नहीं मिलता जो मुंह से तो कहता है, "हे प्रभो, यह सब कुछ तेरा है" लेकिन वास्तव में उसी समय सोचता रहता है कि यह सब कुछ मेरा है।

२८१. एक स्थान चारों ओर ऊंची दीवाल से घिरा था। लोगों को नहीं मालूम था कि वहां क्या है। एक बार चार मनुष्यों ने सीढ़ी लगाकर उसे देखने का विचार किया। पहिला मनुष्य जब चढ़कर दीवाल पर पहुँचा तो वह मारे प्रसन्नता के फूला न समाया और भीतर कूद पड़ा। दूसरा मनुष्य भी दीवाल पर चढ़ गया और वह भी मारे प्रसन्नता के भीतर कूद पड़ा। तीसरे ने भी ऐसा ही किया। जब चौथा चढ़ कर दीवाल पर पहुँचा तो उसने देखा कि दीवाल के अन्दर एक विशाल रमणीक बाग है, उसमें अनेकों प्रकार के पेड़ और फल लगे हुये हैं। उसके भी जी में आया कि भीतर कूद पड़ूं लेकिन उसने अपनी इच्छा रोक ली और सीढ़ी से नीचे उतर कर उसने उस शानदार बाग़ का समाचार दूसरे लोगों को बतलाया। ब्रह्म दीवाल से घिरा हुआ बाग है। जो उसे देख लेते हैं वे अपने अस्तित्व को भूलकर उसी में एकदम लीन हो जाते हैं। संसार के साधू और भक्त इसी श्रेणी में हैं। लेकिन जो भक्त मनुष्य जाति के उद्धारक होते हैं वे ईश्वर के दर्शन करते हैं और दूसरों को भी दिव्य दर्शन का आनन्द देने के लिये पाये हुये निर्वाण पद को

अस्वीकार कर देते हैं और मानव जाति को उपदेश देकर ध्येय स्थान तक पहुँचाने के लिये खुशी से पुनर्जन्म लेकर उसके दुखों को सहन करते हैं।

२८२. शुद्ध ज्ञान और शुद्ध भक्ति दोनों एक ही हैं।

२८३. जिस प्रकार बालक अपनी मां से रो रो कर और तंग करके खिलौने और पैसे लेता है और माँ को देना ही पड़ता है उसी प्रकार जो ईश्वर को अपना सर्व प्रिय मित्र समझ कर उसके दर्शन के लिये सचाई के साथ भीतर ही भीतर रोते हैं उन्हें ईश्वर का दिव्य दर्शन अन्त में मिलता अवश्य है। इस प्रकार के सच्चे और आग्रही (inportunate) भक्तों के सामने से ईश्वर छिपे नही रह सकते।

२८४. हे दिल, तू सचाई के साथ सर्व शक्तिमती आदि-माता को ज़ोर से बुलाओ, तो वह दौड़ कर तेरे पास अवश्य पहुँचेगी। जब मनुष्य मन और हृदय से ईश्वर को बुलाता है तो वह बिना आये रह नहीं सकता है।

२८५. ज़मींदार चाहे जितना धनी क्यों न हो किन्तु जब उसकी दीन प्रजा प्रेम के साथ उसके सामने एक तुच्छ भेंट भी रखती है तो वह उसे स्वीकार करता है। उसी प्रकार ईश्वर सर्व शक्तिमान और पूर्ण है सामर्थ सम्पन्न है तथापि वह अपने सच्चे भक्त की छोटी से छोटी भेंट को भी बड़े आनन्द और सन्तोष के साथ स्वीकार करता है।

२८६. जब भगवान रामचन्द्र जी का जन्म हुआ तो केवल सात ऋषियों को मालूम हुआ था कि वे परमेश्वर के अवतार हैं। उसी प्रकार जब ईश्वर का अवतार होता है तो केवल थोड़े से मनुष्य उसके दैवी स्वरूप को पहिचान सकते हैं।

२८७. घण्टे की आवाज़ जब तक सुनाई पड़ती है तब तक वह साकार रहता है लेकिन जब सुनाई नहीं पड़ता तो ऐसा मालूम होता है

गोया वह निराकार हो। ईश्वर के साकार और निराकार होने का भी यही हाल है।

२८८. जिस प्रकार कृत्रिम फल या कृत्रिम हाथी को देखकर असली फल और असली हाथी का स्मरण हो आता है उसी प्रकार मूर्त्तियों की पूजा करने से निराकार और शाश्वत ईश्वर का स्मरण होता है।

२८९. केशवचन्द्रसेन मूर्त्तिपूजा के कट्टर विरोधी थे। भगवान रामकृष्ण ने एक बार उनसे कहा, इन मूर्तियों से हृदय में कीचड़, मिट्टी, पत्थर, भूसा आदि की भावना क्यों पैदा होती है? अरे! क्या तुम उसी प्रकार इन्हीं मूर्तियों में शाश्वत आनन्द मूर्ति, सर्वज्ञ जगन्माता की भावना नहीं कर सकते। इन मूर्तियों को शाश्वत, निराकार और सर्वज्ञ परमेश्वर का साकार स्वरूप समझो।

२९०. छोटे अक्षर लिखने के पूर्व हरेक व्यक्ति को पहिले बड़े बड़े अक्षर लिखने का अभ्यास करना पड़ता है उसी प्रकार मन को एकाग्र करने के लिये पहिले साकार मूर्ति का ध्यान करना होगा। जब साकार में ध्यान लगने लगेगा तो फिर निराकार ईश्वर में ध्यान लगाना सहल हो जायगा।

२९१. निशाना लगाने वाला पहिले बड़ी बड़ी चीजों पर निशाना लगाना सीखता है। धीरे २ सतत अभ्यास के पश्चात् वह फिर छोटी २ चीज़ों में भी निशाना सफलतापूर्वक लगाने लगता है उसी प्रकार साकार मूर्तियों में मन को जब एकाग्र होने का अभ्यास पड़ जाता है तो निराकार में ध्यान लगाना फिर मन के लिये आसान हो जाता है।

२९२. जिस प्रकार एक ही पदार्थ से—उदाहरणतः चीनी से—नाना प्रकार के पशु और पक्षियों के स्वरूप (खिलौने) बनाये जा सकते है, उसी प्रकार जगन्माता भी भिन्न २ युगों में, भिन्न २ देशों में, भिन्न २ नाम और रूप से पूजी जाती है।

२९३. भिन्न २ पंथ एकही ईश्वर तक पहुँचने के भिन्न २ मार्ग हैं। (कलकत्ते के समीप) काली घाट के काली जी के मन्दिर को पहुँचने के लिये भिन्न २ अनेक मार्ग हैं उसी प्रकार ईश्वर के घर तक पहुँचने के लिये भिन्न २ अनेक मार्ग हैं। प्रत्येक धर्म मनुष्यों को ईश्वर तक पहुँचाने के लिये इन मार्गों में से एक मार्ग है।

२९४. एक ही पदार्थ से उदाहरणतः सोने से—नाना प्रकार के गहने बनवाये जा सकते हैं उसी प्रकार एकही ईश्वर भिन्न भिन्न देशों में भिन्न भिन्न स्वरूपों में पूजा जाता है। कुछ लोग उसको पिता कहते हैं, कुछ माता कहते हैं, कुछ अपना मित्र बनाते हैं, कुछ अपनी प्रेमिका बनाते हैं, कुछ उसे अपना सर्वस्व समझते हैं और उसे अपना बच्चा मानते हैं। लोग उसे चाहे जो मानें लेकिन पूजा भिन्न भिन्न रिश्तों से एक ही ईश्वर की होती है।

२९५. एक धनी व्यापारी किसी ग़रीब ब्राह्मण का शिष्य था। वह अत्यन्त कृपण था। एक दिन उस ब्राह्मण ने अपने पत्रे को लपेटने के लिये एक छोटा सा कपड़े का टुकड़ा माँगा। व्यापारी ने कहा, "गुरूजी मुझे शोक है कि इस समय मेरे पास कोई टुकड़ा नहीं है। यदि कुछ घण्टे पहिले आप माँगते तो मैं दे देता, ख़ैर कोई हर्ज नहीं, मैं आप का ख्याल रक्खूँगा। आप कभी कभी स्मरण करवाते रहियेगा।" ब्राह्मण बेचारा निराश होकर चला गया। व्यापारी की स्त्री ने कहीं परदे की आड़ से सुन पाया। उसने तुरन्त ब्राह्मण को बुला भेजा और कहा, "महाराज, आप क्या माँग रहे थे?" ब्राह्मण देवता ने सब समाचार ज्यों का त्यों कह सुनाया। स्त्री ने कहा "अच्छा आप घर जाइये, कल आप को सवेरे कपड़ा मिल जायगा।" व्यापारी जब दूकान बन्द करके रात को घर पहुँचा तो स्त्री ने उससे पूछा कि क्या आप दूकान बन्द कर चुके? उसने कहा, हाँ, कहो क्या काम है? स्त्री ने कहा, "इसी वक्त जाकर दो सब से बढ़िये कपड़े के टुकड़े लाओ।" व्यापारी ने कहा,

"जल्दी क्या है सवेरे मिल जायगा।" स्त्री ने कहा, "देना है तो अभी दो नहीं तो फिर मुझे कोई ज़रूरत नहीं है।" अब बेचारा व्यापारी कर ही क्या सकता था। गुरूजी थोड़े ही थे कि वादा करके टाल देते, अरे यह तो महल की गुरू थी जिसकी आज्ञा तुरन्त मानना ही चाहिये नहीं तो घर में झगड़ा कौन मोल ले। व्यापारी इतनी रात को दूकान गया और दो टुकड़े लाकर उसे दे दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल स्त्री ने कपड़े उस ब्राह्मण के पास भेज दिये और कहला भेजा कि अब जिस चीज़ की आवश्यकता आप को हो वह आप मुझसे माँगा कीजिये और वह आपको शीघ्र मिल जाया करेगी। कहने का तात्पर्य यह कि जो लोग परमेश्वर की आराधना पिता के नाते करते हैं उनकी अपेक्षा माता के नाते उसकी आराधना करने वालों की प्रार्थना के सफल होने में अधिक संभावना है।

२६६. एक ब्राह्मण एक बाग़ लगा रहा था। रात दिन वह उस बगीचे की देख रेख करता था। एक दिन उस बाग में एक गाय घुस गई और उसने ब्राह्मण द्वारा खूब सुरक्षित किये हुये पौधों में से आम के एक पौधे को नष्ट कर दिया। यह देखकर ब्राह्मण को बड़ा क्रोध आया और उसने गाय को इतने ज़ोर ज़ोर से पीटा कि वह बेचारी मर गई। गोहत्या की ख़बर बिजली की तरह गाँव भर में फैल गई। ब्राह्मण वेदान्ती था, लोग जब उसे बुरा भला कहने लगे तो उसने उत्तर दिया, "वाह वाह! मैंने थोड़ी गाय को मारा है। मेरे हाथ ने गाय को मारा है। हाथ का देवता इन्द्र है। इसलिये गोहत्या का पातक इन्द्र को लगाना चाहिये मुझे नहीं।" ब्राह्मण की बात को इन्द्र ने स्वर्ग ही में सुन लिया। वे एक वृद्ध ब्राह्मण का भेष रखकर बगीचे के स्वामी के पास गये और पूछा, "महाराज! यह बाग किसका है?" ब्राह्मण ने कहा, "मेरा" इन्द्र ने कहा, यह बाग तो बड़ा सुन्दर है, आपका माली बड़ा चतुर है। देखो तो उसने कैसी खूबसूरती के साथ इन वृक्षों को

लगाया है। "ब्राह्मण ने उत्तर दिया", वाह वाह वह भी मेरा ही काम है। ये सब वृक्ष मेरी देख रेख में और मेरे कथनानुसार लगाये गये हैं। इन्द्र ने कहा, "यह तो बड़ी अच्छी बात है। हाँ यह तो बतलाइये यह सड़क किसने बनाई है। यह बड़ी उत्तम रीति से तैय्यार की गई है।" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "सब कुछ मैंने ही किया है।" इन्द्र ने तब हाथ जोड़ कर कहा, "महाराज, जब इस बाग की सब वस्तुयें आपकी हैं और उनके बनवाने का श्रेय आप ले रहे हैं तो गोहत्या करने का पाप आप बेचारे इन्द्र के सर पर क्यों मढ़ रहे हैं?"

२६७. एक चोर आधीरात को किसी राजा के महल में घुसा और राजा को रानी से यह कहते सुना कि मैं अपनी कन्या का विवाह उस साधू से करूँगा जो नदी के किनारे रहते हैं। चोर ने विचारा कि यह अच्छा अवसर है। कल मैं भगवा वस्त्र पहिन कर साधुओं के बीच बैठ जाऊँगा। सम्भव है राजकन्या का विवाह मेरे ही साथ हो जाय। दूसरे दिन उसने ऐसा ही किया। राजा के कर्मचारी सब साधुओं से राजकन्या को विवाहने की प्रार्थना करने लगे लेकिन किसी ने स्वीकार नहीं किया। तब वे चोर सन्यासी के पास गये और वही प्रार्थना उन्होंने उससे भी की लेकिन उसने भी कोई उत्तर नहीं दिया। कर्मचारी लौटकर राजा के पास गये और उससे कहा कि महाराज, और तो कोई साधू राजकन्या के साथ विवाह करना स्वीकार नहीं करता। एक युवा सन्यासी अवश्य है सम्भव है वह विवाह करने पर तैय्यार हो जाय। राजा उसके पास स्वयं गया और राजकन्या के साथ विवाह करने का उससे अनुरोध किया। राजा के स्वयं जाने से चोर का हृदय एक दम बदल गया। उसने सोचा, "देखो तो अभी तो सन्यासियों के केवल कपड़े पहिनने का यह परिणाम हुआ है कि इतना बड़ा राजा मुझ से मिलने के लिये स्वयं आया है। यदि मैं वास्तव में एक सच्चा सन्यासी बन जाऊँ तो न मालुम आगे अभी और कैसे अच्छे अच्छे परिणाम देखने में आवें। इन

विचारों का उस पर ऐसा अच्छा प्रभाव पड़ा कि उसने विवाह करना अस्वीकार कर दिया और उस दिन से एक सच्चा साधू बनने के प्रयत्न में लगा। उसने विवाह जन्म भर न किया और अपनी साधनाओं से एक पहुँचा हुआ सन्यासी हुआ। अच्छी बात की नकल से ही कभी कभी अनपेक्षित और अपूर्व फल की प्राप्ति होती है।

२६८. एक बार अर्जुन के मन में ऐसा गर्व हुआ कि श्रीकृष्ण का मुझ ऐसा सखा और भक्त कोई दूसरा नहीं है। त्रिकालदर्शी कृष्ण चट इस बात को ताड़ गये। वे उसे घुमाने के लिये एक जंगल को ले गये। वहां अर्जुन ने एक विचित्र ब्राह्मण को देखा जिसके बगल में तीव्र धार वाली एक तलवार लटक रही थी लेकिन वह सूखे फल खाकर कालक्षेप करता था। अर्जुन ने तुरन्त समझ लिया कि यह सदाचारी ब्राह्मण विष्णु का सच्चा भक्त है। जीवहिंसा से उसे यहां तक घृणा है कि वह हरी घास तक खाना नापसन्द करता है। वह केवल सूखी घास और सूखे फल खाकर अपना जीवन व्यतीत करता है। किन्तु यह बात अर्जुन के समझ में न आई कि वह अहिंसा का तो इतना भारी पुजारी है लेकिन फिर यह तलवार क्यों बांधे फिरता है। परेशान होकर अर्जुन ने कृष्ण से पूछा, "भगवान, क्या बात है? जीव हिंसा से उसे यहां तक घृणा है कि वह हरी घास तक नहीं खाता लेकिन तलवार लटकाये घूमता है।" कृष्ण ने कहा कि तुम स्वयं उससे इसका कारण पूछो। अर्जुन तब ब्राह्मण के पास गया और उससे पूछा, "साधु महाराज, आप किसी की हत्या नहीं करते आप सूखे फल खाते हैं। तब आप इस तलवार को क्यों लिये २ घूमते हैं?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "चार मनुष्यों को मारने के लिये यदि संयोग-वश उनसे भेंट हो गई तो।" अर्जुन ने पूछा; पहिला कौन है?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "लबाड़ नारद।" अर्जुन ने कहा, "उसने कौन सा पाप किया है?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "जरा उसकी धृष्टता को

तो देखो। वह मेरे प्रभू को अपने गाने बजाने से सदा जगाता रहता है। उसे उनके आराम और तकलीफ का कुछ ख्याल ही नहीं है। दिन रात, समय, बे समय प्रभू की शान्ति को स्तुति और प्रार्थना से भंग करता रहता है।" अर्जुन ने पूछा, "महाराज दूसरा कौन है?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "धृष्ट द्रौपदो।" अर्जुन ने कहा, "उसका क्या अपराध?" ब्राह्मण ने कहा," ज़रा उस स्त्री की धृष्टता को तो देखो, उसने मेरे प्रभू को उसी समय, बुलाया जब कि वे भोजन को बैठ रहे थे। भोजन छोड़ कर वे काम्यवन को भागे गये और पाण्डवों को दुर्वासा के श्राप से बचाया उस अबला ने केवल इतना ही नहीं किया बल्कि मेरे प्रभू को ख़राब ख़राब भोजन भी कराया। अर्जुन ने पूछा, "महाराज तीसरा कौन है?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "निर्दयी प्रहलाद। वह निर्दयी था कि खौलाये हुये कड़ाहे में ईश्वर को डलवाने में या हाथी के पैर के नीचे उनको कुचलाने में अथवा खम्भे में बंधवाने में उसको दया नहीं आई। अर्जुन ने पूछा "चौथा कौन है?" ब्राह्मण ने कहा "अर्जुन" अर्जुन ने पूछा, "उसने क्या अपराध किया है?" ब्राह्मण ने कहा, "उसकी धृष्टता तो जरा देखो, उसने कुरुक्षेत्र के युद्ध में मेरे भगवान को अपना सारथी बनाया है" ब्राह्मण की भक्ति और उसके प्रेम को देखकर अर्जुन दङ्ग रह गया। उस दिन से उसका अहङ्कार जाता रहा और उसने यह विचार छोड़ दिया कि मैं ईश्वर को सबसे अधिक प्यार करता हूँ।

२९९. सदैव ऐसा समझो कि कुटुम्ब की चिन्तायें मेरी नहीं हैं, ईश्वर की हैं। मैं ईश्वर का नौकर हूँ, उसकी आज्ञा पालन करने के लिये मेरा जन्म हुआ है। जब ऐसी भावना मन में दृढ़ हो जायगी तो फिर कोई ऐसी बात शेष न रहेगी जिसे मनुष्य "अपनी" कह सके।

३००. भगवान रामकृष्ण कहा करते हैं, "मेरी दी हुई आज्ञा का पालन क्या तुम पूर्णतया कर सकोगे?" मैं तुमसे सच सच कहता

हूँ कि मेरी आज्ञा का तुमने यदि सोलहवाँ हिस्सा भी पालन किया तो तुम्हें मोक्ष अवश्य मिलेगा।

२०१. अच्छा फौलाद बनाने के लिये लोहा भट्टी में कई बार तपाया जाता है और खूब अच्छी तरह पीटा जाता है। तब कहीं उसकी तेज़ तलवार बन सकती है और वह किसी भी ओर मोड़ा जा सकता है उसी प्रकार मनुष्य भी जब दुख की भट्टी में कई बार तपाया जाता है और संसार की मार उस पर पड़ती है तब कहीं वह पवित्र हृदय बनता है और भगवतपद में लीन होता है।

२०२ एक पेड़ में एक यक्ष रहता था। उसके नीचे से एक दिन एक नाई गुज़रा। उसने किसी को कहते सुना कि क्या तुम अशर्फियों से भरे सात घड़े स्वीकार करोगे ? नाई ने चारों ओर देखा लेकिन उसे कोई दिखलाई न पड़ा। अशर्फियों के घड़ों ने उसके लोभ को बढ़ाया और उसने ज़ोर से चिल्लाकर उत्तर दिया कि हां मैं स्वीकार करूँगा। उत्तर मिला कि घर जाओ, मैंने ७ घड़े तुम्हारे घर पहुँचा दिये हैं। इसकी सचाई की परीक्षा करने के लिये नाई तेज़ी से दौड़ कर घर गया। जब कि वह घर पहुँचा तो उसे सात घड़े दिखलाई पड़े। उसने उन्हें खोलकर देखा तो ६ अशर्फियों से पूरे भरे थे लेकिन १ कुछ खाली था। उसने विचारा कि जब तक सातवां भी अशर्फियों से अच्छी तरह न भर जायगा तब तक मुझे पूरी खुशी नहीं होगी। उसने अपने सोने चांदी के गहने बेंच डाले और उनकी अशर्फियाँ लेकर घड़े में डाला लेकिन वह विचित्र घड़ा पहिले की तरह खाली बना रहा, इससे नाई को बड़ा दुख हुआ। वह अब घर के अन्य प्राणियों के साथ भूखा रहने लगा और बचत का रुपया उसी घड़े में डालने लगा लेकिन तब भी वह न भरा। एक दिन नाई ने राजा से प्रार्थना की कि महाराज वेतन, मेरा कम है, इससे गुज़र नहीं होगा, कृपया बढ़ा दीजिये। राजा नाई को

बहुत चाहता था उसने उसका वेतन दूना कर दिया। नाई अब और अधिक रुपया बचाने लगा और उसे घड़े में फेंकने लगा लेकिन तब भी घड़ा न भरा। नाई अब भिक्षा मांगने लगा और अपने वेतन का रुपया और भिक्षा का रुपया घड़े में डालने लगा महीनों वीत गये लेकिन घड़ा न भरा, कंजूस और दुखित नाई की अवस्था दिन बदिन खराब होती गई। एक दिन राजा ने उसकी यह अवस्था देखकर उससे पूछा, "क्यों जी ! जब तुम्हारी तनख्वाह इस समय से आधी थी तब तुम बड़े सुखी और सन्तुष्ट थे लेकिन अब तुम्हारी तनख्वाह पहिले से दूनी है और तुम चिन्ताग्रस्त और दुखी हो। इसका क्या कारण है ? क्या तुमको सात अशर्फियों से भरे घड़े तो नहीं मिले ?" नाई को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा, "महाराज आपसे किसने कहा ?" राजा ने कहा, "क्या तुम्हें मालूम नहीं कि ये लक्षण उस मनुष्य के हैं जिसे यह ७ घड़े देता है उसने मुझे देने को कहा था लेकिन मैंने उससे पहिले से पूछ लिया था कि यह द्रव्य खर्च करने के लिये हैं या जमा करने के लिये। यक्ष बिना उत्तर दिये चला गया था। तुम्हें क्या मालूम नहीं कि यह द्रव्य खर्च नहीं किया जा सकता। इससे जमा करने की केवल इच्छा उत्पन्न होती है। जाओ और वापस कर आओ। अब तो नाई को होश हुआ। वह वृक्ष के यक्ष के पास गया और उससे कहा कि अपने घड़े वापस लेलो। यक्ष ने उत्तर दिया, "अच्छा"। जब नाई घर वापस आया तो उसने देखा कि घड़े ग़ायब हो गये और साथ ही इतने समय की उसकी कमाई भी गायब हो गई। संसार के कुछ लोगों का यही हाल है। जिन्हें सच्ची आय और सच्चे व्यय का यथार्थ ज्ञान नहीं होता वे अपनी सारी पूंजी खो बैठते हैं।

२०३. लड़का धूल पर लोटता रहता है और मां बराबर उसके शरीर को पोंछ कर साफ़ करती रहती है। उसी प्रकार मनुष्य का पाप

करना स्वाभाविक है उसी प्रकार उस पाप को दूर करने के लिये ईश्वर में प्रेम उत्पन्न करना भी स्वाभाविक है।

३०४. रोगी का पेट चाहे भरा हो, उसको अजीर्ण का रोग चाहे हो गया हो लेकिन सरस और मधुर भोजन के पदार्थ सामने आने से उसके मुंह में पानी भर आता है, उसी प्रकार मनुष्य को कुछ भी लोभ भले ही न हो लेकिन रुपया पैसा अथवा दूसरी स्पृहणीय वस्तु जब जब उसके सामने आ जाती है तो उसका पवित्र मन चलायमान अवश्य हो जाता है।

३०५. जो मनुष्य अपना समय दूसरों के गुण दोष विवेचन करने में लगाता है वह अपना समय नष्ट करता है। वह समय को न तो आत्मचिन्तन में खर्च करता है और न परमात्मा के चिन्तन में। दूसरों के आत्मचिन्तन में फुजूल अवश्य खर्च करता है।

३०६. परमेश्वर अनन्त (अमर्याद) है और जीव सांत (समर्याद) है। सान्त अनन्त को किस प्रकार ग्रहण कर सकता है ? ऐसा करना उसी तरह है जिस प्रकार नमक के खिलौने से समुद्र की गहराई का नापना। नमक का खिलौना घुलकर समुद्र में मिल जाता है। जीवात्मा उसी प्रकार जब ईश्वर की खोज में लगता है तो भेद भाव मिट जात है और वह ईश्वर में लीन हो जाता है।

३०७. भगवान रामकृष्ण कहा करते थे, कि प्रत्येक वस्तु नारायण है। मनुष्य नारायण है। पशु नारायण है, साधु नारायण है, मूर्ख नारायण है। जिस जिस का अस्तित्व है वह सब नारायण है। परमात्मा भिन्न २ स्वरूपों में खेल रहा है और सब वस्तुयें उसके भिन्न २ आकार और वैभव के स्थान हैं।

३०८. अपने हृदय की ओर लक्ष करके भगवान रामकृष्ण कहा करते थे, कि जो ईश्वर को यहाँ देखता है वह उसे वहाँ (वाह्य जग की ओर लक्ष करके) भी देखता है। जो यहाँ ईश्वर को नहीं देखेगा वह

बाहर ईश्वर को कहीं भी नहीं देख सकता। जो ईश्वर को अपने मन-मन्दिर में देखता है वह ईश्वर को विश्व मन्दिर में भी देखता है।

३०६. कौन किसका गुरू है? केवल एक ईश्वर ही सब जगत् का गुरू और मार्गदर्शक है।

३१०. किसी भी पुरुष की आध्यात्मिक उन्नति उसके विचारों और कल्पनाओं पर अवलम्बित है। वह अन्तःकरण से प्रारम्भ होती है बाह्य कर्मों से नहीं। दो मित्र घूमते २ एक ऐसे स्थान में पहुँचे जहाँ भागवत पुराण हो रहा था। एक ने कहा, "भाई थोड़ी देर तक भागवत सुनें।" दूसरे ने कहा "नहीं भाई भागवत सुनने से क्या लाभ? चलो उस आनन्दगृह में आमोद-प्रमोद में अपना समय व्यतीत करें।" पहिला पर राजी नहीं हुआ। वह बैठ कर भागवत सुनने लगा, दूसरा आनन्दगृह में गया लेकिन जिस आमोद-प्रमोद का वह स्वप्न देख रहा था वह उसे वहाँ नहीं मिला। वह सोचने लगा, "देखो तो मैं यहाँ क्यों आया? मेरा मित्र वास्तव में सुखी है। वह भगवान कृष्ण का चरित्र और लीला सुन रहा है।" इस प्रकार आनन्दगृह में भी उसने कृष्ण का ध्यान किया, दूसरे मनुष्य को भागवत सुनने में आनन्द न मिला, वह कहने लगा, "अरे मैं अपने मित्र के साथ उस आनन्द में क्यों नहीं गया? वह तो इस समय बड़ा आनन्द कर रहा होगा।" परिणाम यह हुआ कि जहाँ भागवत हो रहा था वहाँ बैठे वह आनन्दगृह का चिन्तन करके पाप का भागी बन रहा था क्योंकि उसके विचार गन्दे थे। और जो आनन्दगृह में गया था वह वहीं से भागवत का स्मरण कर पुण्य का भागी बन रहा था क्योंकि उसका हृदय अच्छाई की ओर लग रहा था।

३११. कोई सन्यासी एक मन्दिर के पास रहते। उनके सामने एक रंडी का मकान था। बहुत से आदमियों को रोज आते जाते देखकर एक दिन उन्होंने रंडी को बुलवाया और उससे कहा, "देख तू दिन रात

बड़ा पाप करती है, तेरी न मालूम परलोक में क्या दुर्गति होगी।" बेचारी रंडी अपने दुष्कर्म के लिये बड़ी लज्जित हुई, मन ही मन उसने पश्चात्ताप किया और ईश्वर से क्षमा मांगा। लेकिन चूंकि रंडी का काम करना ही उसके घराने का पेशा था इसलिये जीवन निर्वाह के लिये वह दूसरा पेशा आसानी से न कर सकती थी। जब वह शरीर से पाप करती तो मन में बड़ी दुखी होती और ईश्वर से क्षमा के लिये ज़ोरों से प्रार्थना करती। सन्यासी ने देखा कि मेरे कहने का इस पर कोई असर नहीं पड़ता इसलिये उसने सोचा, "देखूँ जीवन में कितने आदमी रंडी के पास जाते हैं।" उस दिन से जब कोई रंडी के घर जाता तो सन्यासी जी उसके नाम का एक कंकड़ अलग रख लेते थे। समय पाकर उनके यहाँ कंकड़ों का ढेर लग गया। एक दिन सन्यासी ने रंडी को ढेर दिखला कर कहा, "क्यों जी देखती हो ? जितने यहाँ पर कंकड़ हैं उतने घोर पाप तुमने किए हैं। इसलिये अब भी रास्ते पर आओ" पाप के ढेर को देखकर रंडी कांपने लगी। उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि हे ईश्वर क्या आप इस पापमय जीवन से मुझे मुक्त नहीं करेंगे।।

ईश्वर ने प्रार्थना स्वीकार कर ली। रण्डी की मृत्यु हो गई। ईश्वर की अद्‌भुत लीला से उसी दिन सन्यासी का भी स्वर्गवास हो गया। विष्णु के दूत स्वर्ग से आकर रंडी को स्वर्ग ले गये। रण्डी का सौभाग्य देखकर सन्यासी ने चिल्लाकर कहा, "क्या यही ईश्वर का सूक्ष्म न्याय है ? जन्म भर तो मैंने तपस्या की और जन्म भर में दरिद्र बना रहा जिसका फल यह मिला कि मैं नरक को भेजा जा रहा हूं और यह रंडी जिसका जीवन पाप करते बीता स्वर्ग को भेजी जा रही है।" सन्यासी के इन बचनों को सुनकर विष्णु के दूतों ने कहा, "ईश्वर की आज्ञा हमेशा न्यायानुकूल होती है; जैसा तुम सोचोगे वैसा ही पावोगे। मान और कीर्ति पाने के लिये तुमने अपना सारा जीवन दम्भ और बाहरी

देखाव में व्यतीत कर दिया और ईश्वर ने तुमको वैसा ही फल दिया। तुम्हारा हृदय सचाई के साथ कभी ईश्वर की ओर नहीं लगा। यह रंडी मन से सदैव ईश्वर का स्मरण करती थी यद्यपि उसका शरीर पाप करता था। नीचे की ओर जरा देखो, किस प्रकार तुम्हारे और रंडी के शरीरों को लोगों की ओर से सत्कार मिल रहा है। चूंकि तुमने शरीर से पाप नहीं किया है इसलिये लोग तुम्हारे शरीर को फूलों से सजाकर बाजा बजाकर धूमधाम से फूंकने के लिये नदी की ओर लिये जा रहे हैं। इस रंडी के शरीर ने चूंकि पाप किया है इसलिये उसको गिद्ध और सियार नोच नोच कर फाड़ रहे हैं। चूंकि रंडी हृदय की पवित्र थी इसलिये वह स्वर्ग को जा रही है और तुम चूंकि रंडी के पापों की ओर बराबर सोचते थे इसलिये अपवित्र बन कर नरक को जा रहे हो। वास्तव में सच्ची रंडी तुम हो वह नहीं है।

३१२. एक मनुष्य नहाने के लिये नदी को जा रहा था। वहाँ उसने सुना कि एक मनुष्य सन्यासी होने के लिये कुछ दिनों से तैयारी कर रहा है। यह सुनकर उसने सोचा कि सन्यास जीवन में सब से उत्तम आश्रम है। उसने आधे कपड़े से अपने शरीर को लपेटा और तुरन्त सन्यासी बनकर जंगल का रास्ता पकड़ा और फिर घर कभी भी वापस नहीं आया। उत्कट वैराग्य का यह एक उदाहरण है।

३१३. एक बार एक प्रसिद्ध ब्राह्मो मिश्नरी (पुरोहित) ने कहा कि परमहंस रामकृष्ण पागल है। एक ही विषय पर सोचते सोचते बहुत से योरपीय तत्वज्ञानियों की तरह उसका दिमाग़ फिर गया है। भगवान परमहंस ने पश्चात् समय पाकर उस पादड़ी से कहा, तुम कहते हो कि योरोप में भी एक ही विषय पर सोचने के कारण बहुत से मनुष्य पागल हो जाते हैं। लेकिन जो उनका विषय है वह जड़ है या चैतन्य (matter or spirit) यदि वे जड़ विषय पर ध्यान करते हैं तो उनके पागल होने में क्या आश्चर्य है? परन्तु सब जगत जिस चैतन्य से प्रका-

शित होता है उस चैतन्य विषय पर विचार करने से मनुष्य किस प्रकार पागल हो सकता है ? तुम्हारा धर्मग्रन्थ क्या तुम्हें यही सिखलाता है ?

२१४. पोलिस का आदमी अपनी लालटेन का प्रकाश जिस पर फेंकता है उसे देख सकता है लेकिन जब तक वह स्वयं अपने ऊपर लालटेन का प्रकाश नहीं डालता तब तक उसे कोई पहचान नहीं सकता। उसी प्रकार ईश्वर सब को देखता है लेकिन उसे कोई नहीं देख सकता जब तक वह दया के वश स्वयं न प्रगट हो।

२१५. अभिमान राख के ढेर के सदृश है जिस पर जो पानी पड़ता है वह गायब होता जाता है। प्रार्थना और ध्यान का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता जिसका हृदय अभिमान से भरा हुआ है।

२१६. नीचे दिये हुये तीन अवस्थाओं में से किसी भी एक अवस्था को पहुँचने से मनुष्य को ईश्वर की प्राप्ति होती है।

(१) यह सब मैं हूँ।

(२) यह सब तू है।

(३) तू मालिक है और मैं सेवक हूँ।

२१७. एक अहीरिन नदी के उस पार रहनेवाले एक ब्राह्मण पुजारी को दूध दिया करती थी। लेकिन नाव की व्यवस्था ठीक न होने के कारण वह हर रोज़ ठीक समय पर दूध न पहुँचा सकती थी। ब्राह्मण के बुरा भला कहने पर बेचारी अहीरिन ने कहा, "महाराज, मैं क्या करूं मैं तो अपने घर से बड़े तड़के रवाना होती हूँ लेकिन मल्लाहों और यात्रियों के लिये मुझे बड़ी देर तक नदी के किनारे ठहरना पड़ता है।" पुजारी जी ने कहा "क्योंरी स्त्री, ईश्वर का नाम लेकर लोग तो जीवन के समुद्र को पार कर लेते हैं तू ज़रा सी नदी नहीं पार कर सकती।" वह भोली स्त्री पार जाने के सुलभ उपाय को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। दूसरे दिन से अहीरिन ठीक समय पर दूध पहुँचाने लगी। एक दिन पुजारी जी ने उससे पूछा, "क्या बात है कि अब तुझे देर नहीं होती। "स्त्री

ने उत्तर दिया, "आपके बतलाये हुये तरीके से ईश्वर का नाम लेती हुई मैं नदी को पार कर लेती हूँ, मल्लाह के लिये मुझे अब ठहरना नहीं पड़ता।" पुजारी को इस पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने पूछा, "क्या तुम मुझे दिखला सकती हो कि तुम किस प्रकार नदी को पार करती हो?" स्त्री उनको अपने साथ लेगई और पानी के ऊपर चलने लगी। पीछे घूमकर उसने देखा तो पुजारी जी बड़ी आफत में पड़े थे। उसने कहा, "महाराज क्या बात है आप मुंह से ईश्वर का नाम ले रहे हैं लेकिन हाथों से अपने कपड़ों को समेट रहे हैं ताकि वे भीगें नहीं। उस पर पूरा विश्वास नहीं रखते?" परमेश्वर पर पूरा भरोसा रखना और उसी पर अपने को छोड़ देना प्रत्येक स्त्री पुरुष द्वारा किये हुये अद्भुत चमत्कार की कुंजी है।

३१८. मन को एकाग्र करने का सबसे सरल उपाय यह है कि उसे दीपक की ज्योति पर लगाओ। उस ज्योति का भीतरी नीला भाग कारण शरीर है। उस पर मन लगाने से एकाग्रता शीघ्र मिलती है। चमकता हुआ भाग जो नीले भाग को ढके हुये है सूक्ष्म शरीर कहलाता है। और उसका बाहिरी भाग स्थूल शरीर कहलाता है।

३१९. एक नेक ब्रह्मो ने भगवान रामकृष्ण से पूछा "हिन्दू धर्म और ब्राह्मधर्म में क्या अन्तर है?" भगवान ने उत्तर दिया, "जो अन्तर एक राग और सब गायन शास्त्र में है उतना ही अन्तर ब्राह्मधर्म और हिन्दू धर्म में है। ब्राह्मधर्म ब्रह्मा के एक ही राग से सन्तुष्ट होता है और हिन्दू धर्म कई रागों से बना है जिनके मिलने से एक उत्तम स्वर निकलता है।

३२०. यदि कोई मनुष्य ध्यान में इतना तल्लीन हो जाय कि उसको अपने बाहर की किसी भी वस्तु की स्मृति न रहे यहां तक कि यदि पक्षी उसके बालों में घोंसला बनावें तो भी उसको उसका पता न रहे, तो वास्तव में ऐसे मनुष्य को ध्यान की पूर्णता मिली हुई समझना चाहिये।

३२१. किसी शिष्य ने भगवान रामकृष्ण से पूछा कि "महाराज विषय-वासना पर विजय मैं किस प्रकार प्राप्त करूँ ? अभी तक सारा समय मैंने धर्मचिन्तन में लगाया है लेकिन मन में दुर्वासना आ ही जाती है" "भगवान ने कहा, "एक मनुष्य के पास एक प्यारा कुत्ता था, वह उसे बहुत चाहता था, वह उसको अपने साथ रखता था, उसके साथ खेलता था और उसे चूमता चाटता रहता था, एक दूसरे मनुष्य ने उसकी यह मूर्खता देखकर उससे कहा, "तुम इस कुत्ते का इतना लाड़ प्यार न करो। यह आखिर अविचारी जानवर है ऐसा न हो किसी दिन काट ले।" कुत्ते के स्वामी ने यह बात मान ली और उस दिन से कुत्ते को फेंक कर ऐसा निश्चय किया कि अब मैं इस कुत्ते को अधिक प्यार न करूँगा। कुत्ता अपने स्वामी के बदले हुये इस भाव को न समझ सका। वह मालिक के पास दुम हिलाता हुआ जाता और चिल्ला २ कर तंग करता कि वह उसे पूर्ववत् प्यार करे। जब कुत्ते ने देखा कि मालिक अब किसी प्रकार मुझे अपने गोद में नहीं लेता तो उसने उसको तंग करना छोड़ दिया। तुम्हारी भी ऐसी दशा है। जिस कुत्ते को तुमने इतने अधिक समय से अपने हृदय में पाल रखा है वह इच्छा करने पर भी तुमको नहीं छोड़ेगा। लेकिन इसमें कोई हर्ज भी नहीं है। जब यह कुत्ता तुम्हारे पास आवे तो उसे मत प्यार करो उलटे उसे पीटते रहो। एक समय ऐसा आवेगा जब तुम उसके त्रास से मुक्त हो जाओगे।"

३२२. आजकल के अंगरेज़ी स्कूल में पढ़े हुये एक सज्जन ने एक बार भगवान परमहंस से कहा कि गृहस्थाश्रम में रहने वाले लोग भी सांसारिक प्रपंचों से अदूषित रह सकते हैं। इस पर भगवान ने उत्तर दिया कि क्या आपको मालूम है कि आजकल के विषयवासनाओं से अछूत गृहस्थाश्रमी किसी प्रकार के होते हैं ? यदि कोई गरीब आदमी उनसे भिक्षा मांगने के लिये आता है तो वे कहते हैं कि भाई हम तो इन सब झंझटों से अलग हैं, रुपये पैसे का सब प्रबन्ध हमारी स्त्री करती है,

मैं तो रुपया पैसा हाथ से छूता तक नहीं हूं। आप यहां खड़े रहकर अपना अमूल्य समय क्यों नष्ट कर रहे हैं। आप मेहरबानी करके दूसरों के घर देखिये। एकबार एक ब्राह्मण ऐसे बाबू से बार बार अपनी मांग पेश करता रहा। उसकी मांगों से तंग आकर उन्होंने सोचा कि इस भिखभंगे को कुछ देना चाहिये। उन्होंने उससे कहा, कल आओ जो कुछ, हो सकेगा दिया जायगा। उन्होंने भीतर जाकर अपनी स्त्री से कहा प्यारी, एक ब्राह्मण इस समय बड़े कष्ट में है, हम लोगों को एक रुपया उसे देना चाहिये। रुपया का नाम सुनकर स्त्री बहुत बिगड़ी; और फिर उसने पति से कहा, "रुपया क्या पत्ते और पत्थर हो गये हैं कि बिना सोचे समझे तुम जहां चाहते हो फेंक रहे हो।" गिड़गिड़ा कर एक प्रकार से क्षमा मांगते हुये बाबू जी ने कहा "प्यारी ब्राह्मण बड़ा ग़रीब है, हम लोगों को एक रुपये से कम न देना चाहिये।" स्त्री ने कहा, "एक रुपया मैं नहीं दे सकती, लो दो आने ले जाओ और तुम्हारा जी चाहे तो ब्राह्मण को दे दो।" इस गृहस्थ को चूंकि घरेलू मामलों से कोई सम्बन्ध न था इसलिये उसने दो आने देना स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन भिखमंगा आया और उसे दो आने दिये गये। प्रपंच के अदूषित तुम्हारे गृहस्थ स्त्रैण होते हैं। उनकी नकेल स्त्रियों के हाथ में होती है क्योंकि वे घरेलू मामलों की देखरेख नहीं करते। वे सोचते है कि हम बड़े पवित्र और उत्तम मनुष्य हैं किन्तु यदि वास्तव में देखा जाय तो वे इसके बिल्कुल विरुद्ध होते हैं।

३२३. जानकर अथवा अनजान से, चेतन अवस्था में अथवा अचेतन अवस्था में, चाहे जिस हालत में मनुष्य ईश्वर का नाम ले, उसे नाम लेने का फल मिलता अवश्य है। जो मनुष्य स्वयं जाकर नदी में स्नान करता है उसे भी नहाने का फल मिलता है, जो नदी में ज़बरदस्ती ढकेल दिया जाता है उसे भी नहाने का फल मिलता है अथवा जो गहरी

निद्रा सो रहा है यदि उसके ऊपर कोई पानी उड़ेल दे तो उसे भी नहाने का फल मिलता है।

३२४. मनुष्य का शरीर पतीली की तरह है और मन, बुद्धि और इन्द्रियां उस पतीली के अन्दर के जल, चावल और आलू की तरह हैं। जब पतीली आग में रक्खी जाती है तो जल, चावल और आलू गरम हो जाते हैं। यदि उन्हें कोई छू ले तो उसकी अंगुली जल जाती है यद्यपि गरमी न तो पतीली की है और न पानी, चावल अथवा आलू की है। उसी प्रकार ब्रह्म की शक्ति से मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ अपना अपना काम करती हैं और जब यह शक्ति बन्द हो जाती है तो मन, बुद्धि और इन्द्रियां भी अपना अपना काम बन्द कर देती हैं।

३२५. वर्षा का पानी जब घर की छत पर गिरता है तो वह बाघ-मुंह आकार के नालियों से ज़मीन पर बह जाता है। पानी वास्तव में आकाश से आता है किन्तु बाघमुंह वाले नलसे आता हुआ दिखलाई पड़ता है। उसी प्रकार उपदेश निकलते तो साधुओं के मुखों से हैं किन्तु वास्तव में वे परमेश्वर से निकलते हैं।

३२६. सच्चा धार्मिक वही है जो एकान्त में भी पाप नहीं करता है क्योंकि वह समझता है कि चाहे उसे कोई मनुष्य न देखे लेकिन ईश्वर अवश्य देखता है। सच्चा धार्मिक वही है जो एकान्त जंगल में जहां उसे कोई नहीं देखता, ईश्वर के भय से जो उसे हर जगह देखता है, एक नव-जवान स्त्री को पाकर उस पर निगाह भी नहीं डालता। सच्चा धार्मिक वही है जो किसी एकान्त स्थान में अशर्फियों की एक थैली पाकर उसे लेने की इच्छा नहीं करता। सच्चा धार्मिक वह नहीं है जो जनता की निन्दा का ख्याल करके केवल देखाव के लिये धर्माचरण करता है। एकान्त और गुप्तपण का धर्म सच्चा धर्म है; अभिमान और देखाव से भरा हुआ धर्म, धर्म नहीं है।

३२७. बांस की टहनियों में से चमकते हुये पानी को गुज़रते हुये

देखकर छोटे मच्छड़ बड़ी खुशी से उसमें घुस जाते हैं किन्तु फिर वापस नहीं आ सकते। उसी प्रकार मूर्ख मनुष्य संसार की चमक दमक देखकर उसमें फंस जाते हैं। जिस प्रकार जाल से बाहर निकलने की अपेक्षा जाल में जाना सरल है, उसी प्रकार संसार को त्याग करने की अपेक्षा संसार में रहकर संसारी बनना सरल है।

३२८. शीत खाई हुई दियासलाई को चाहे तुम जितना रगड़ो, वह जलती नहीं, सिर्फ धुआँ देकर रह जाती है, किन्तु सूखी दियासलाई जरा सी रगड़ से एकदम जलने लगती है। सच्चे भक्त का हृदय सूखी दियासलाई की तरह होता है। ईश्वर का नाम धीरे से लेने पर भी उसके हृदय में प्रेम की ज्वाला बलने लगती है। विषयभोग और वैभव में फंसे हुये मनुष्य का हृदय शीत खाई हुई दियासलाई की तरह है। परमेश्वर सम्बन्धी उपदेश उसको चाहे जितने बार किये जांय, किन्तु प्रेम की ज्वाला उसके हृदय में कदापि नहीं जल सकती।

३२९. ईश्वर शाश्वत और सनातन है। वह संसार का पिता है। बड़े महासागर की तरह उसका ओर छोर नहीं है। किन्तु जब हम उसके ध्यान में लग जाते हैं तो हमको उसी प्रकार आनन्द होता है जिस प्रकार एक डूबता हुआ मनुष्य धीरे २ किनारे पर लग जाय।

३३०. भक्त के हृदय से निकलते हुए उद्गारों का अन्त क्यों नहीं होता? एक धनी गल्ले के व्यापारी के गोदाम में जब गल्ला तौला जाता है तो तौलाने वाला गल्ला लेने के लिये भीतर नहीं जाता जैसा छोटे दूकानदार की दूकान में होता है बल्कि एक नौकर ला ला कर गल्ले का ढेर लगाता जाता है। उसी प्रकार भक्तों के उद्गार ईश्वर की प्रेरणा से उनके दिलों और मस्तिष्कों में उत्पन्न होते हैं। लेकिन अपने पर अवलम्ब रखते हुये चतुर मनुष्यों के विचार और भाव जो पुस्तकों से प्राप्त होते हैं, छोटे दूकानदार के गल्ले की तरह शीघ्र ख़ाली हो जाते हैं।

२३१. सब स्त्रियां देवी भगवती की अंश हैं इसलिये उनके साथ माता की तरह व्यवहार करना चाहिये।

२३२. माया क्या है? आध्यात्मिक उन्नति में विघ्न डालने वाली विषयवासना का नाम माया है।

२३३. अपने पति पर अत्यन्त प्रेम करने वाली स्त्री जिस प्रकार मरने के अनन्तर भी अपने पति से मिलती है, उसी प्रकार अपने इष्टदेव पर अनन्य भक्ति रखनेवाले पुरुष को परमेश्वर की प्राप्ति होती है।

२३४. जिस ज्ञान से मन और अन्तःकरण (हृदय) की शुद्धि हो वही सच्चा ज्ञान है। शेष सब अज्ञान है।

२३५. सीसे का टुकड़ा जब पारे के पीपे में फेंका जाता है तो वह उसी में घुल जाता है। उसी प्रकार एक आत्मा जब ब्रह्म के महासागर में पड़ जाती है तो वह अपना मर्यादित अस्तित्व भूल जाती है।

२३६. सांसारिक विचार और चिन्ता से अपने मन की स्वस्थता को बिगड़ने न दो। आवश्यक कामों को अपने २ समय पर करो।

२३७. ब्रह्म के महासागर से बहने वाला वायु जिस जिस अन्तःकरण पर होकर बहता है, उस पर अपना प्रभाव अवश्य डालता है। सनक, सनातन आदि प्राचीन ऋषि इस वायु से द्रवीभूत हुये थे। ईश्वरभक्त नारद को दूर ही से इस दिव्य सागर के दर्शन हुये थे, उसके कारण वह अपने देह के भान को भूल कर हमेशा हरी के गुणानुवाद गाते हुये पागलों की तरह संसार भर में भ्रमण करते हैं। जन्म से विरक्त शुकदेव जी ने उस महासागर के जल को तीन बार हाथ से स्पर्श किया तब से पूर्ण आनन्द में निमग्न होकर वे लड़कों की तरह इधर उधर घूम रहे हैं। विश्व के गुरू महादेव जी ने उस महासागर का तीन अंजुली जल पान किया, तब से समाधि सुख में तल्लीन होकर वे निश्चेष्ट पड़े हैं। इस महासागर की अद्भुत शक्ति के सामर्थ्य का अनुमान कौन कर सकता है।

२३८. सच्चिदानन्द रूपी अखण्ड वृक्ष पर राम, कृष्ण, बुद्धदेव,

ईसामसीह आदि की असंख्यों शाखायें हैं। उनमें से दो एक कभी कभी इस संसार में आते हैं और प्रचण्ड उथल पुथल और क्रान्ति उत्पन्न करते हैं।

३३९. एक बार भगवान रामकृष्ण ने अपने एक पट्ट शिष्य से पूछा, "जब चीनी का शीरा कढ़ाई में रक्खा जाता है तो मक्खियां चारों ओर से आकर उसी में बैठती हैं। कुछ तो ऊपर ही बैठकर सीरा पीती हैं और कुछ उसी में गिर पड़ती हैं और डूबकर नीचे चली जाती हैं। तो तुम बतलाओ कि सच्चिदानन्द का अमृत रस क्या तुम किनारे पर ही बैठकर चूसोगे और फिर उड़ जाओगे या उसमें डूबकर और नीचे तक जाकर उसका रसास्वादन करोगे।" शिष्य ने उत्तर दिया, "मैं तो किनारे पर ही बैठकर रस पीना चाहता हूं, और फिर चला जाना चाहता हूं, रस में डूबकर मरना नहीं चाहता, "इस उत्तर को सुनकर भगवान ने कहा, तुम बड़े मूर्ख हो जो अमृत के महासागर में डुबकी लगाता है वह कभी मरता नहीं उल्टे अमर हो जाता है।"

३४०. "ईश्वर वही है जो मैं हूँ" ऐसा जब जीवात्मा को मालूम होने लगे तो वह परमात्मा का ऐक्य प्राप्त कर सकता है। घर का पुराना नौकर समय पाकर कुटुम्ब का एक प्राणी समझा जाने लगता है और घर का मालिक उससे अत्यन्त प्रसन्न हो कर एक दिन उसे यह कह कर अपने मान के स्थान में बिठला सकता है, कि आज से मुझ में और इस पुराने नौकर में कोई अन्तर नहीं है। इसकी आज्ञा का पालन उसी तरह करो जिस प्रकार मेरी आज्ञा का पालन करते हो; जो इसकी आज्ञा न मानेगा उसको दण्ड दिया जायगा। संभव है नम्रता के कारण नौकर को अपना नया अधिकार दिखलाने में संकोच हो तथापि मालिक हठ करके उसको मान के स्थान पर बिठलावेगा, यही दशा उन जीवात्माओं की है जो ईश्वर की आराधना चिरकाल तक करने के पश्चात् अपने को और ईश्वर को एक ही समझते हैं। ईश्वर तब उनको अपना गुण और

वैभव देता है और अपने विश्व के साम्राज्य पर उनको हाथ पकड़ कर बिठलाता है ।

३४१. पानी पुल के नीचे से बहता रहता है । पुल पानी के बहाव में कोई विघ्न नहीं डालता । उसी प्रकार मुक्त के हाथों से पैसा खर्च होता रहता है । उनको संचय करने की परवाह नहीं रहती ।

३४२. अवतार ईश्वर का प्रेषित दूत है । वह एक शक्तिशाली सम्राट के वाइसराय की तरह जिस प्रकार दूरस्थ प्रान्त में जब कोई विद्रोह होता है तो उसे दबाने के लिये सम्राट अपने वाइसराय को भेजता है, उसी प्रकार संसार के किसी हिस्से में जब धर्म का ह्रास होने लगता है तो धर्म की रक्षा करने के लिये और उसकी वृद्धि करने के लिये ईश्वर अपने अवतार को भेजते हैं ।

३४३. जितने अवतार हैं वे सब एक ही हैं । जीवन के समुद्र में डुबकी लगाकर ईश्वर एक स्थान पर उठता है और लोग उसे कृष्ण कहते हैं । दूसरी बार जब डुबकी लगाकर वह दूसरे स्थान पर निकलता है तो लोग उसे ईसामसीह कहते हैं ।

३४४. हे उपदेशक, क्या तूने उपदेश करने का बिल्ला प्राप्त कर लिया है ? जिस प्रकार राजा का छोटे से छोटा नौकर भी जब राजकीय बिल्ला लगा लेता है तो लोग उसकी बातों को बड़ी भक्ति और मान से सुनते हैं और वह अपना बिल्ला दिखला कर विद्रोह को भी दबा सकता है । उसी प्रकार ऐ उपदेशक, यदि तू सफलता प्राप्त करना चाहता है तो पहिले ईश्वर से आभास inspiration का बिल्ला प्राप्त कर । जब तक यह बिल्ला न प्राप्त करेगा तब तक जीवन भर उपदेश करते रह कोई परिणाम न होगा ।

३४५. माया ही ब्रह्म को प्रगट करती है । बिना माया को जाने ब्रह्म को कौन जान सकता था बिना ईश्वर की शक्ति जाने साक्षात् ईश्वर को कोई नहीं जान सकता ।

३४६. हरी (ईश्वर) के माने हैं जो हमारे हृदय को हर ले (चुराले) और हरि बोल के माने हैं "ईश्वर हमारा सर्वस्व है।"

३४७. ब्रह्म का स्वरूप क्या है? ब्रह्म निर्गुण है; उसमें गति नहीं है; वह निश्चल है; और मेरु पर्वत की तरह अटल है।

३४८. प्राचीन युग के योग और तपस्या प्राचीन राजाओं के सिक्कों की तरह है जिनका अब चलन नहीं है। मैं इस युग का पैगंबर हूँ। मैं आजकल का सिक्का हूँ। जो मुझ पर श्रद्धा करेगा वह शीघ्र ही मोक्ष का अधिकारी होगा।

३४९. मांसाहारी लोग मछली के निरुपयोगी सर और दुम की परवाह नहीं करते, वे उसके बीच के हिस्से को पसंद करते हैं क्योंकि खाने के लिये बीच ही का हिस्सा काम में आता है। उसी प्रकार धर्मग्रन्थों के पुराने नियम और उनकी पुरानी आज्ञाओं को इस प्रकार काटछांट करना चाहिये कि वे आधुनिक समय की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकें।

३५०. ऐसा कहा जाता है कि "होया" नाम एक पक्षी की जाति है। ये पक्षी आकाश में इतना ऊँचाई पर रहते हैं और ऊँचे आकाश को इतना पसन्द करते हैं कि वे पृथ्वी पर उतरना नहीं चाहते। वे अपने अंडे भी आकाश में देते हैं। पृथ्वी की आकर्षण शक्ति से जब अंडे गिरने लगते हैं तो बीच ही में फूट जाते हैं और बच्चे निकल कर फिर ऊपर की ओर अपनी बुद्धि से उड़ने लगते हैं। शुकदेव, नारद, ईसामसीह, शंकराचार्य्य और इसी प्रकार के दूसरे महात्मा इसी पक्षी के श्रेणी के हैं। बालावस्था ही में वे इस संसार की वासनाओं के विरक्त हो जाते हैं और सत्यज्ञान और दिव्य आनन्द प्राप्त करने में लग जाते हैं।

३५१. भगवान परमहंस ने एक वार कहा था, "मुझे माला के फूल न चाहिये, मुझे उसका डोरा (सूत्र) चाहिये। मुझे विश्व की और कोई चीज न चाहिये। मैं केवल सूत्रात्मा (thread of spirit) चाहता हूँ जिस पर सारा विश्व लटक रहा है।

३५२. प्रकाश देना लैम्प का धर्म है। उसकी मदद से कोई भोजन बनाते हैं, कोई जाली दस्तावेज़ तैयार करते हैं और कोई धर्मग्रन्थ पढ़ते हैं। उसी प्रकार कोई ईश्वर के नाम की सहायता से मोक्ष प्राप्त करते हैं, और कोई अपनी बुरी मनोकामनाओं की पूर्ति करते हैं, परन्तु ईश्वर के नाम की पवित्रता में कोई फर्क नहीं पड़ता।

३५३. महाराज तोतापुरी कहा करते थे, "यदि पीतल का घड़ा रोज़ न मांजा जाय तो मोर्चा लग जाय। उसी प्रकार यदि मनुष्य रोज़ ईश्वर का चिन्तन न करे तो उसका अन्तःकरण मलीन हो जाय।" उनको परमहंस जी ने उत्तर दिया था कि घड़ा यदि सोने का हो तो उसको रोज़ मांजने की आवश्यक्ता नहीं है। जो मनुष्य ईश्वर तक पहुँच चुका है उसे प्रार्थना की अथवा तपस्या की कोई आवश्यकता नहीं है।

३५४. जिस प्रकार वृक्ष के एक ही बीज से नारियल का खोपड़ा, और नारियल की गरी पैदा होती है उसी प्रकार एक ही ईश्वर से स्थावर, जंगम, आधिभौतिक और आध्यात्मिक सारी सृष्टि पैदा हुई है।

३५५. सज्जनों का क्रोध पानी पर खींची हुई लकीर की तरह होता है; वह लकीर की तरह शीघ्र ग़ायब हो जाता है।

३५६. साधारण लोग धर्म के बारे में बड़ी बड़ी गप हांकते हैं लेकिन उसका थोड़ा सा भाग भी आचरण में नहीं लाते। परन्तु बुद्धिमान मनुष्य थोड़ा बोलते हैं लेकिन उनका सम्पूर्ण जीवन धर्ममय होता है।

३५७. कुटुम्ब की युवा स्त्री अपने सास ससुर का सत्कार करती है, उनकी आवश्यक्ताओं की पूर्ति करती है और उनकी आज्ञाओं का उल्लंघन नहीं करती लेकिन साथ ही उनसे वह अपने पति को कहीं अधिक प्यार करती है; उसी प्रकार तुम अपने इष्टदेव की खूब उपासना करो लेकिन दूसरे देवताओं का तिरस्कार न करो। उन सब का सत्कार करो। ये सब देवता एक ही सच्चिदानन्द प्रभु की प्रतिमा हैं।

३५८. दौड़ते हुये साँप और लेटे हुये साँप में जो सम्बन्ध है वही

सम्बन्ध माया और ब्रह्म में है गत्यात्मक शक्ति माया है और स्थित्यात्मक शक्ति (force in potents) ब्रह्म है।

३५९. जिस प्रकार समुद्र का पानी शांत रहता है और कभी उसमें बड़ी बड़ी लहरें उठती हैं, यही हाल ब्रह्म और माया का है। शांत समुद्र ब्रह्म है; लहरों से भरा हुआ अशान्त समुद्र माया है।

३६२. अग्नि और उसकी दाहक शक्ति में जो सम्बन्ध है वही सम्बन्ध ब्रह्म और माया में है।

३६१. परमेश्वर निराकार है और साकार भी है। वह साकार और निराकार दोनों के बीच का है। वह क्या है, यह वही जानता है।

३६२. जिस प्रकार सर्प अपने केचुल से भिन्न है उसी प्रकार आत्मा देह से भिन्न है।

३६३. जिस प्रकार पारा लगे हुये शीशे में मनुष्य अपना चेहरा देख सकता है उसी प्रकार जिस पुरुष ने ब्रह्मचर्य द्वारा अपने बल और पवित्रता की रक्षा की है उसके अन्तःकरण में सर्व शक्तिमान प्रभू का दिव्य प्रतिविम्ब प्रतिविम्बित होता है।

३६४. ईश्वर दो अवसरों पर हँसते हैं, एक तो उस समय जब एक ही कुटुम्ब के भाई अपने हाथ में जरीब लेकर ज़मीन को नापते हैं और कहते हैं, यह मेरी जमीन है और यह तुम्हारी जमीन है, और दूसरे उस समय जब रोगी तो मरणासन्न हो और डाक्टर कहे कि मैं उसे अच्छा कर दूंगा।

३६५. सर्प के दांतों के विष का प्रभाव सांप पर नहीं पड़ता। वह जब दूसरे को काटता है तब विष उसको मार डालता है। उसी प्रकार माया परमेश्वर में है। वह उस पर कोई प्रभाव नहीं डालती। वह माया विश्व भर को अलबत्ते मोहित किये हुये है।

३६६. बिल्ली दांतों से अपने बच्चों को दबा कर इधर उधर ले जाती है इससे उनको हानि नहीं पहुँचती। लेकिन जब चूहे को दबाती

है तो चूहा मर जाता है। उसी प्रकार माया भक्त को नहीं मारती, दूसरों को अवश्य मार डालती है।

३६७. रस्सी जल जाती है ऐंठन ज्यों की त्यों बनी रहती है। लेकिन उससे कोई चीज़ बांधी नहीं जा सकती। उसी प्रकार मुक्त हुआ आदमी अहंकार का बाहरी आकार मात्र कामय रखता है लेकिन उसका स्वार्थ नष्ट हो जाता है।

३६८. जब घाव भर जाता है तो पपड़ी आप से आप सूखकर गिर जाती है; यदि कच्चे घाव से पपड़ी निकाली जाय तो उससे खून बहने लगता है उसी प्रकार जब दिव्य ज्ञान की जागृति होती है तो सब जाति भेद मिट जाता है लेकिन जब तक दिव्य ज्ञान की जागृति नहीं होती तब तक जातिभेद मिटाना भूल है।

३६९. 'मन' नीग्रो के टेढ़े बाल की तरह है। जब तक जी चाहे उसे सीधा खींचे रहो लेकिन छोड़ते ही वह फिर टेढ़ा हो जाता है। उसी प्रकार जब तक मन ज़बरदस्ती स्थिर रक्खा जाता है तब तक वह उत्तम हितकारी काम करता है। लेकिन उधर से पहरा हटाते ही वह फिर ठीक मार्ग से निकल भागता है।

३७०. जब तक कड़ाही से नीचे आग रहती है तबतक दूध खौला करता है। आग निकालते ही खौलना बन्द हो जाता है। उसी प्रकार आध्यात्मिक नवसिखिया जब तक आध्यात्मिक साधन करता रहता है तब तक उसका हृदय उत्साह से उमड़ता रहता है।

३७१. कुम्हार कच्चो मिट्टी से तरह तरह के बरतन बनाता है लेकिन पक्की मिट्टी से नहीं बना सकता। उसी प्रकार उस मानवी हृदय में जो एक बार संसार की वासनाओं रूपी अग्नि में जल चुका है, ऊंचे भावों का प्रभाव नहीं पड़ सकता और उसका कोई दूसरा उत्तम आकार भी नहीं बनाया जा सकता।

३७२. एक धनी पुरुष के गुमाश्ते से यदि कोई पूछता कि इस

समय मालिक की अनुपस्थिति में यह सब सम्पत्ति किसकी है तो वह घमण्ड से फूलकर कहता कि ये मकान, यह सम्पत्ति ये बाग बगीचे सब मेरे हैं। एक दिन उसने मालिक के बागवाले तालाव से एक मछली फसाया जिसमें उसको सख्त मनाही थी। अभाग्यवश मालिक एकाएक पहुंच गया और अपने गुमास्ते को मछली फंसाते हुए पकड़ लिया। अपने नौकर की बेईमानी देखकर मालिक ने उसका तिरस्कार किया, उसकी सब कमाई छीन ली, यहां तक कि उसके खास अपने पुराने बरतन भी छीन लिये और मार कर निकाल दिया। जो झूठा अभिमान करता है उसको ऐसा ही दण्ड मिलता है।

३७३. कुछ मछलियों के कई जोड़ हड्डियाँ होती हैं और कुछ के केवल एक ही जोड़। मछली खानेवाले चाहे बहुत सी हड्डियाँ हों और चाहे एक ही हों सब हड्डियों को फेंक देते हैं। उसी प्रकार कुछ मनुष्यों के पाप की संख्या अधिक होती है और किसी के कम। परन्तु ईश्वर की कृपादृष्टि उचित समय पर सब को नष्ट कर देती है।

३७४. भक्ति मार्ग में कुछ एक अवस्था तक पहुँचने पर भक्त को साकार ईश्वर में आनन्द मिलता है और दूसरी एक अवस्था तक पहुँचने पर उसको निराकार ईश्वर में आनन्द मिलता है।

३७५. यदि सफेद कपड़े में एक छोटा सा भी काला दाग पड़ जाय तो वह बड़ा बुरा लगता है, उसी प्रकार साधु का एक छोटा सा पाप भी उसके और पवित्रता के कारण भयङ्कर दिखाई पड़ता है।

३७६. साकार ईश्वर दृश्य है, तब भी हम उसे स्पर्श नहीं कर सकते और न उससे मित्रों की तरह मुंह से मुंह मिलाकर बातचीत कर सकते हैं।

३७७. जिस प्रकार कच्ची औषधि स्प्रिट में घुल जाती है उसी प्रकार परमात्मा में तुम घुल जाओ।

३७८. एक शक्तिशाली सम्राट से मिलने के लिये द्वारपालों की

और दूसरे प्रभावशाली राजकर्मचारियों की कृपा प्राप्त करना आवश्यक है; उसी प्रकार सर्वशक्तिमान ईश्वर के चरणों तक पहुँचने के लिये पुष्कल भक्ति सम्पादित करनी चाहिये, पुष्कल भक्तों की सेवा करनी चाहिये और चिरकाल तक बुद्धिमानों का सत्सङ्ग करना चाहिये।

३७९. हेलेच (Helaucha एक प्रकार की औषधि) का और Port herb का पीना एक ही बात नहीं है; गन्ने चूसना और मिठाई का खाना एक ही बात नहीं है क्योंकि ये हानिकारक नहीं हैं। इनका सेवन बीमार भी कर सकता है। उसी प्रकार दिव्य गुह्य प्रणव (ओ३म्) यह शब्द नहीं है बल्कि ईश्वरवाचक मन्त्र है। और पवित्रता और प्रेम की इच्छा भी दूषित वासनाओं की इच्छा की तरह नहीं है।

३८०. मछलियों का सरदार (The king fisher) पानी में डूबता है किन्तु पानी उसके परों को तर नहीं कर सकता। उसी प्रकार मुक्त हुए (जीवनमुक्त) मनुष्य संसार में रहते हैं। किन्तु संसार का उन पर कोई असर नहीं होता।

३८१. भक्तों को वही भोजन करना चाहिये जो उनके मन को चंचल न करे।

३८२. चीनी और बालू मिलाकर रखने से चींटी बालू को छोड़ देती है और चीनी को ले जाती है। उसी प्रकार परमहंस और साधु बुराई को छोड़कर भलाई ग्रहण करते हैं।

३८३. बारीक अन्न को नीचे गिराना और मोटे अन्न को ऊपर रखना चलने का स्वभाव है। उसी प्रकार भलाई को छोड़ना और बुराई को स्वीकार करना दुर्जनों का स्वभाव है।

३८४. हलका और निरुपयोगी वस्तु को फेंकना और वजनदार और उपयोगी वस्तु को रखना सूप का स्वभाव है ऐसा ही स्वभाव सज्जनों का भी होता है।

३८५. स्वच्छ और निरभ्र आकाश को बादल एकाएक आ कर

आच्छादित कर सकता है और चारों ओर अन्धेरा फैला सकता है। वही बादल फिर एकाएक हवाओं से उड़ जाता है। यही हाल माया का भी है। वह ज्ञान के शांत वातावरण को एकदम आच्छादित कर लेती है दृश्य जगत को निर्माण करती है और फिर परमेश्वर के श्वास से (कृपा-दृष्टि से) उड़ जाती है।

३८६. एक मनुष्य का लड़का बीमार हो गया। उसे लेकर दवा के लिये वह साधु के पास गया। साधु ने कहा कि कल आना। दूसरे दिन जब वह साधु के पास गया तो साधु ने कहा, "लड़के को मिठाई खाने को न देना तो लड़का अच्छा हो जायगा।" मनुष्य ने उत्तर दिया "यही बात तो कल भी तो कह सकते थे।" साधु ने कहा, "हां तुम्हारा कहना ठीक है, लेकिन कल मेरे सामने चीनी रक्खी हुई थी। देख कर तुम्हारा लड़का कहता कि साधु ढोंगी है, यह चीनी स्वयं तो खाता है, और दूसरे को मना करता है।"

३८७. जो स्त्री एक राजा से प्रेम करती है, वह एक भिखारी के प्रेम को स्वीकार नहीं कर सकती। उसी प्रकार जिस जीवात्मा को परमेश्वर की कृपा दृष्टि प्राप्त हो चुकी है वह संसार की क्षुद्र बातों में नहीं लिप्त हो सकता।

३८८. जिसने चीनी का स्वाद चख लिया है उसे गुड़ अच्छा नहीं लगता। जो राजमहल में सो चुका है उसे गन्दे झोपड़े में सोने में आनन्द नहीं मिलता। उसी प्रकार जिस जीवात्मा को दिव्य आनन्द की मिठास मिल चुकी है उसे संसार के दूसरे सुखों में आनन्द नहीं मिल सकता।

३८९. पाप हार की तरह है। वह मुश्किल से छिप सकता है।

३९०. जो गाजर खाता है उसके मुंह से गाजर की महक आती है; जो ककड़ी खाता है उसके मुंह से ककड़ी की महक आती है। उसी प्रकार जैसा हृदय में होता है वैसा ही मुंह से निकलता है।

३९१. किसी ने परमहंस जी से पूछा, "समाधि की दशा में क्या आपको बाह्य जगत का भान रहता है" इसपर उन्होंने उत्तर दिया, "समुद्र में पहाड़, और घाटियाँ हैं लेकिन, वे ऊपर से दिखलाई नहीं पड़ते, उसी प्रकार समाधि में मनुष्य को सच्चिदानन्द के दर्शन होते हैं; अपनी स्मृति उसी दर्शन के अन्दर छिपी रहती है।"

३९२. वकील को देखने से मुकदमों की और उनके कारणों की याद हो आती है; उसी प्रकार एक सात्विक भक्त को देखने से ईश्वर की और परलोक की याद हो आती है।

३९३. वेदों और पुराणों को अवश्य पढ़ना और सुनना चाहिये किन्तु तंत्रों के नियमों के अनुसार काम करना चाहिये। प्रभु हरि का नाम मुंह से लेना चाहिए और कान से सुनना चाहिए। कुछ रोगों में केवल बाहर ही औषधि लगाने की आवश्यकता नहीं है बल्कि पीने की भी ज़रूरत है।

३९४. दया के कामों में मनुष्यों को ईसाई होना चाहिये; कड़ाई के साथ वाह्यविधि से ठीक ठीक पालन करने में मुसलमान, और सब प्राणिमात्र के विषय में भूत दया करने में हिन्दू होना चाहिये।

३९५. तालाब के पानी के ऊपर की काई यदि थोड़ी सी हटा दी जाय तो वह अपने स्थान पर फिर आ जाती है। किन्तु यदि वह बांस की खपच्ची से खूब दूर फेंक दी जाय तो वह फिर उसी स्थान पर नहीं आ सकती। उसी प्रकार माया यदि किसी प्रकार दूर कर दी जाय तो वह फिर लौट कर त्रास देती है। किन्तु यदि हृदय को भक्ति और ज्ञान से भर लिया जाय तो माया हमेशा के लिये दूर हो सकती है। वास्तव में इसी रीति से परमेश्वर मनुष्य को दृष्टिगोचर होना है।

३९६. जिस घर में हरि का गुणानुवाद हमेशा गाया जाता है, उस घर में भूतप्रेतों का प्रवेश नहीं हो सकता।

३९७. एक मेढ़क कुयें में चिरकाल से रहता था। वह वहां पैदा

हुआ था और वहीं वह इतना बड़ा भी हुआ था अभी वह छोटा बच्चा था। एक दिन समुद्र में रहने वाला एक दूसरा मेढ़क उस कुयें में गिर कर पहुँचा। कुयें के मेढ़क ने समुद्र के मेढ़क से पूछा कि भाई तुम कहाँ से आ रहे हो।"

समुद्र के मेढ़क ने कहा, "मैं समुद्र से आ रहा हूँ।"

कुयें के मेढ़क ने कहा, "समुद्र! अरे वह समुद्र कितना बड़ा है।"

समुद्र के मेढ़क ने कहा, "वह समुद्र बहुत बड़ा है।"

कुयें के मेढ़क ने अपनी टाँगों को फैलाकर कहा, क्या समुद्र इतना बड़ा है।"

समुद्र के मेढ़क ने कहा, "समुद्र इससे कहीं बड़ा है।"

कुयें के मेढ़क ने कुयें के एक ओर से दूसरी ओर छलांग मारी और पूछा" क्या समुद्र मेरे इस कुयें के बराबर बड़ा है ।"

समुद्र के मेढ़क ने कहा, "मित्र तुम मेरे समुद्र का मुकाबिला अपने कुयें से कैसे कर सकते हो?"

कुयें के मेढ़क ने कहा, "मेरे कुयें से बड़ी कोई चीज नहीं हो सकती तुम बड़े झूठे हो, इसलिये यहाँ से चले जाओ।"

संकुचित मन वाले मनुष्यों का यही हाल है, अपने कुयें में बैठा हुआ वह समझता है कि सारी दुनियाँ मेरे कुयें से बड़ी नहीं है।

३९८. जिसके पास श्रद्धा है उसके पास सब कुछ है, जिसके पास श्रद्धा नहीं है, उसके पास कुछ नहीं है।

३९९. श्रद्धा से रोग अच्छे होते हैं। श्रद्धा से रोग अच्छा करने वाले (faith healer) वैद्य अपने रोगियों से कहते हैं कि तुम कहो कि मेरे रोग नहीं है, मुझ में कोई बीमारी नहीं है । रोगी ऐसा ही विश्वास करके कहता है और उसकी बीमारी अच्छी हो जाती है। उसी प्रकार जो मनुष्य सदैव यही कहता है कि परमेश्वर नहीं है, उसके लिये वास्तव में ईश्वर नहीं है।

४००. एक मनुष्य ने कल्पवृक्ष के नीचे बैठ कर कहा, "कि मैं राजा हो जाऊँ, "थोड़ी देर में वह राजा हो गया, फिर उसने कहा, "कि मुझे एक सुन्दर युवा स्त्री मिल जाय,' थोड़ी देर में उसे एक सुन्दर युवा स्त्री मिल गई। उस वृक्ष के विलक्षण गुणों की जांच के लिये उसने फिर कहा, "एक बाघ आकर मुझे खा जावे," थोड़ी देर में बाघ ने उसे धर दबोचा। ईश्वर कल्पवृक्ष है। जो उसके समक्ष कहता है कि मुझे कुछ नहीं मिला, उसको वास्तव में कुछ नहीं मिलता। लेकिन जो कहता है, "ईश्वर तूने मुझे सब कुछ दिया है," उसे सब कुछ मिलता है।

४०१. समथर मैदान में खड़े होकर जब मनुष्य घास और ताड़ के पेड़ को देखता है तो कहता है, यह घास बड़ी छोटी है और यह ताड़ का वृक्ष बहुत ऊंचा है। किन्तु जब वह पहाड़ की चोटी पर उन्हें नीचे की ओर फिर देखता है तो दोनों पेड़ों को साफ २ न देख कर सारी जमीन को एक समान हरी भरी देखता है। उसी प्रकार संसारिक मनुष्यों को दृष्टि में पदवी और स्थिति में भेद भाव दिखलाई पड़ता है। यानी एक राजा है, दूसरा चमार है। एक पिता है दूसरा पुत्र है आदि २। किन्तु जब एक बार दिव्यदृष्टि मिल जाती है तो सब समान दिखलाई पड़ने लगते हैं और ऊंच नीच, अच्छे बुरे का भेद भाव सब मिट जाता है।

४०२. अहंकार इतना हानिकारक है कि जब तक वह समूल नष्ट न किया जाय तब तक मोक्ष नहीं मिलता। जरा अपने बछवे की ओर देखो। ज्यों ही वह पैदा होता है त्यों ही वह "हम हम" (मैं हूँ) चिल्लाने लगता है।" परिणाम यह होता है कि जब वह बड़ा होकर "बैल" हो जाता है तो वह हल में जोता जाता है और उसे बोझे से भरी गाड़ी खीचनी पड़ती है। गायें तो खूटे में बांधी जाती हैं और बाज वक्त जान से मारी जाती हैं। इतना दण्ड पाते हुये भी वह अपने अभिमान को नहीं छोड़ता, क्योंकि उनके चमड़े जो मृदंग बनाये जाते हैं उनमें भी

बजाने पर यही आवाज़ निकलती है, 'मैं हूँ, मैं हूँ,'' इस जानवर में नम्रता नहीं आती जब तक रुई धुनने के लिये उसके अंतड़ियों की डोरी तैयार नहीं की जाती। उस वक्त कहता है, ''तू है, तू है,'' मैं कि जगह तू अवश्य होना चाहिये, और वह उस समय तक नहीं हो सकता जब तक अन्तःकरण द्रवीभूत न हो जाय।

४०३. जिस प्रकार एक बालक एक गड़े हुए खम्भे को पकड़ कर चारों ओर फिरहरी की तरह घूमता है, उसी प्रकार ईश्वर का आश्रय लेकर तुम संसार के काम करो तो खतरे से बचे रहोगे।

४०४. पहिले ईश्वर को प्राप्त करो और फिर धन को प्राप्त करो लेकिन इसका उलटा न करो। आध्यात्मिक उन्नति करके यदि तुम संसार में काम करोगे तो तुम्हारे मन की शान्ति भंग नहीं होगी।

४०५. ईश्वर यदि चाहे तो हाथी को सुई के छेद से निकाल सकता है। वह जो चाहे सो कर सकता है।

४०६. एक मनुष्य किसी साधू के पास जाकर बड़ी नम्रता से बोला ''साधू महाराज, मैं बड़ा दीन मनुष्य हूँ, कृपया बतलाइये कि मुझे मोक्ष किस प्रकार मिल सकता है?'' साधू ने उनको ध्यान से देख कर कहा, जाकर मुझे वह वस्तु ले आओ जो तेरी अपेक्षा खराब हो'' मनुष्य चला गया और उसने बाहर भीतर सब जगह ढूंढ़ डाला लेकिन उसकी अपेक्षा कोई चीज़ बुरी न मिली, अन्त में उसने अपना पाखाना देखा और सोचा यह मुझसे खराब है। उसने उसे हाथ में लेने के लिये हाथ फैलाया इतने में एक आवाज़ सुनाई पड़ी, ''ऐ पापी मुझे मत छू, मैं देवताओं के चटाने योग्य स्निग्ध और मधुर भक्ष्य पदार्थ था। लोग मुझे देख कर प्रसन्न होते थे किन्तु अभाग्यवश तुम्हारे दुष्ट सहवास से मेरी यह दशा हुई। अब लोग मुझे देखकर रूमाल से अपनी नाक दबाते हैं और मुंह बनाकर भाग जाते हैं। तुमने 'एक बार छूकर तो मेरी यह दुर्गति कर डाली, यदि तुम अब मुझे छूओगे तो न मालुम

कैसी अब और दुर्दशा होगी।" इससे उस मनुष्य को नम्रता की सच्ची शिक्षा मिली और वह अत्यन्त नम्र हो गया और आगे एक पहुँचा हुआ साधू हुआ।

४०७. मैं अपने ईश्वर को इसी जन्म में प्राप्त करूँगा। मैं अपने ईश्वर को तीन दिनों में प्राप्त करूँगा। नहीं नहीं मैं एकबार नाम लेकर उसको अपनी ओर खींच लूंगा। इस प्रकार के उत्साह और प्रेम से ईश्वर आकर्षित होता है और प्रसन्न होता है। लेकिन कच्चे भक्तों को यदि उनका जी भी लगे तो परमेश्वर के प्राप्त करने में युगों लग जाते हैं।

४०८. जिस प्रकार डूबता हुआ मनुष्य बड़े उत्सुकता के साथ ज़ोर ज़ोर साँस लेता है, उसी प्रकार जो मनुष्य ईश्वर को प्राप्त करना चाहता है उसे उत्सुकता के साथ ईश्वर में अपना हृदय लगाना चाहिये।

४०९. बंशपरम्परा से खेती करने वाले किसान यदि १२ वर्ष तक भी पानी न बरसे तो भी खेत जोतना नहीं छोड़ते; लेकिन जो बनिया नया नया खेती करता है यह एक ही वर्ष के अवर्षण से खेती करना छोड़ देता है; उसी प्रकार श्रद्धावान भक्त—यदि जन्म भर भी भक्ति करने पर उसे ईश्वर न मिले—तो निराश नहीं होता।

४१० सन्यासियों को कोई वस्तु खाने के लिये तुम लोग न दो क्योंकि उससे उनके इन्द्रियों की शान्ति नष्ट हो जाती है।

४११. अद्वैत का दिव्य ज्ञान अपने जेब में रखकर जो तुम्हारा जी चाहे सो करो क्योंकि फिर तुमसे कोई बुराई न होने पावेगी।

४१२. दिन में पेट भर भोजन करो लेकिन रात में तुम्हारा भोजन हलका (जल्द पचने वाला) और थोड़ा होना चाहिये।

४१३. सांसारिक लोग समाधि सुख से विषय सुख को अधिक पसन्द करते हैं। भगवान परमहंस की कृपा से उनके एक सांसारिक शिष्य को अत्यन्त विनती करने पर समाधि लग गई। डाक्टरों ने बहुत प्रयत्न

किया लेकिन वे उसे समाधि से अलग न कर सके । समाधि १५ दिन तक कायम रही । इसके पश्चात् परमहंस के छूने से होश में आने पर उसने कहा, "भगवन, मेरे लड़के हैं, मेरे सम्पति है उनकी व्यवस्था करनी है । समाधि लगाने से मुझे क्या लाभ है ।"

४१४. एक राजा के गुरू ने उसको "अद्वैत" का उपदेश किया जिसका मतलब है "सर्व विश्व ब्रह्म है ।" इससे उसको बड़ी प्रसन्नता हुई ।

४१५. लंका जाने के पहिले श्रीरामचन्द्र जी को समुद्र बांधना पड़ा था । किन्तु हनुमान जी जो श्रीरामचन्द्रजी के श्रद्धालु भक्त थे एक ही छलांग में श्रीरामचन्द्र जी में पूरी श्रद्धा रखने के कारण समुद्र को पार कर गये ।

४१६. गाय का दूध वास्तव में उसके शरीर भर में व्याप्त है किन्तु कान खींच कर आप दूध नहीं निकाल सकते । दूध निकालने के लिये स्तन भी खींचने पड़ेंगे । उसी प्रकार ईश्वर सब जगह व्याप्त है किन्तु आप उसे सब जगह नहीं देख सकते । वह पवित्र मन्दिरों में ही फुर्ती से प्रगट होता है जिनको भक्त लोग अपनी भक्ति से पुनीत करते चले आये हैं ।

४१७. एक मनुष्य नदी को पार करना चाहता था । एक साधू ने उसे एक जंत्र दिया और कहा कि इसकी सहायता से तुम पार जा सकोगे । उसने उसे हाथ में लेकर पानी के ऊपर चलना शुरू किया । जब वह नदी के बीच में पहुँचा तो उसके मन में आश्चर्य पैदा हुआ । उसने जंत्र को खोल कर देखा तो एक कागज़ के टुकड़े में 'ईश्वर' का नाम लिखा हुआ था । मनुष्य ने अवज्ञापूर्वक कहा, "क्या यही भेद की बात है ?" उसका कहना था कि वह नदी में डूब गया । ईश्वर पर श्रद्धा रखने ही से बड़े२ चमत्कारपूर्ण कार्य होते हैं श्रद्धा जीवन है और शंका मृत्यु है ।

४१८. एक राजा एक ब्राह्मण की हत्या करके एक ऋषि की कुटी

में यह पूछने के लिये गया कि इस पाप से छुटकारा पाने के लिए मुझे कौन सी तपस्या करनी चाहिये । ऋषि जो कुटी में नहीं थे, उनके पुत्र थे । उन्होंने राजा की बात सुनकर उनसे कहा कि आप तीन बार ईश्वर का नाम लीजिये तो आपको पाप से मुक्ति मिल जायगी । इतने में ऋषि भी स्वयं पहुँच गये । उन्होंने अपने पुत्र द्वारा बतलाये हुये उपाय को सुनकर कहा, "तीर बार क्या, केवल एक बार परमेश्वर का नाम लेने से जन्मान्तर के पाप धो जाते हैं ।" हे मूर्ख, तूने तीन बार नाम लेने के लिये कहा, इससे मालूम होता है तेरी श्रद्धा कितनी कमज़ोर है । जा तू चाण्डाल हो जा ।" वह पुत्र चाण्डाल हो गया जो रामायण में "गुह" नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

४१६. जहाँ घृणा, लज्जा और भय है वहां ईश्वर कभी भी प्रगट नहीं हो सकता ।

४२०. बद्ध हुआ आत्मा मनुष्य है; मुक्त हुआ आत्मा ईश्वर है ।

४२१. प्रकृति के तत्वों के संयोग पाने के कारण "ब्रह्म" को दुःख मिलता है ।

४२२. स्वच्छ कांच के बिना (खास मसालों से) तैयार किये हुये पृष्ठ भाग पर कुछ नहीं उभरता किन्तु वही भाग जब रासायनिक मसालों से तैयार कर लिया जाता है (जैसे फोटोग्राफी में) तो उसमें चित्र खिंच जाते हैं । उसी प्रकार भक्ति का मसाला लगा हुआ हृदय ईश्वर के प्रतिबिम्ब को पकड़ सकता है दूसरा नहीं ।

४२३. (वर्षा को छोड़ कर) शेष ऋतुओं में कुओं में पानी बड़ी गहराई पर बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है; लेकिन वर्षा ऋतु में जब देश के चारों ओर पानी ही पानी दिखलाई पड़ता है, तो सब जगह पानी बड़ी सुगमता से मिलता है । उसी प्रकार साधारणतया प्रार्थना और तपस्या से बड़ी कठिनता से ईश्वर के दर्शन होते हैं किन्तु जब ईश्वर का अवतार होता है तो ईश्वर हर जगह दिखलाई पड़ने लगता है ।

४२४. जो सम्बन्ध चुम्बक और लोहे का है वही सम्बन्ध ईश्वर और मनुष्य का है। जिस प्रकार धूलि से भरा हुआ लोहा चुम्बक की ओर नहीं खिचता उसी प्रकार माया में पड़ा हुआ जीवात्मा ईश्वर की ओर नहीं खिंचता। किन्तु धूलि धो देने से जिस प्रकार लोहा चुम्बक की ओर खिंचता है, उसी प्रकार प्रार्थना और अनुताप से जब माया की धूलि धुल जाती है तो जीवात्मा ईश्वर की ओर खिंच जाता है।

४२५. सिद्ध पुरुष प्राचीन वस्तु संशोधक (Archeologist) की तरह है जो हज़ारों वर्षों से काम में न लाये जाते हुये कुयें को उसके भीतर की मिट्टी और कूड़ा निकाल कर इस्तेमाल किये जाने योग्य बना देता है। अवतार इंजीनियर की तरह है जो उस स्थान में भी कुआँ खोद कर पानी निकाल सकता है जहाँ पानी पहिले नहीं था। सिद्ध पुरुष उन्हीं मनुष्यों को मोक्ष दे सकते हैं जिनके समीप मोक्ष रूपी पानी मौजूद है और अवतार उन लोगों को भी मोक्ष दे सकते हैं जिनका हृदय प्रेम रहित और रेगिस्तान की तरह सूखा है।

४२६. गुरू मध्यस्थ है। जिस प्रकार विवाह पक्का कराने वाला दुलहे और दुलहिन को मिला देता है; उसी प्रकार गुरू मनुष्य और ईश्वर को मिला देता है।

४२७. एक मनुष्य एक बार अपने गुरू के चरित्र की आलोचना कर रहा था। उससे परमहंस रामकृष्ण ने कहा, "भाई व्यर्थ की वार्तों में अपना समय तुम क्यों नष्ट कर रहे हो, मोती को लेलो और सीप को फेंक दो। गुरु के बतलाये हुये मंत्र का ध्यान करो और गुरू के दोषों को देखना छोड़ दो।"

४२८. जब कि कागज़ में तेल लग जाता है तो वह लिखने के काम में नहीं आता। उसी प्रकार वह आत्मा जिसमें दुर्गुण और विलासिता का तेल लग गया है आध्यात्मिक काम के लिये अयोग्य है। किन्तु जिस प्रकार तेल लगे हुये कागज़ के ऊपर यदि खड़िया

लगा दी जाय तो वह लिखने के काम में आ सकता है, उसी प्रकार त्याग रूपी खड़िया के लगने से उपरोक्त दूषित आत्मा आध्यात्मिक उन्नति कर सकती है।

४२९. एक ज़हरीली मकड़ी होती है, जिसके विष को तब तक कोई भी औषधि नहीं उतार सकती जब तक हाथ में हल्दी की जड़ों को लेकर मन्त्र पढ़ कर घाव का ज़हर पहिले न उतारा जाय। किन्तु जब हाथ घाव पर मन्त्र पढ़ कर फेरा जाता है तो औषधियों का प्रभाव ज़हर पर पड़ता है। उसी प्रकार जब संपत्ति और विषयभोग की मकड़ी मनुष्य को काट लेती है तो आध्यात्मिक उन्नति के पहिले उसे त्याग रूपी मन्त्रों से अपने को भर लेना चाहिये।

४३०. छोटे बच्चे का मन सफेद कपड़े की तरह है जो किसी भी रङ्ग में रङ्गा जा सकता है। किन्तु पूर्ण युवा पुरुष का मन रंगे हुये कपड़े की तरह है जिस पर कोई दूसरा रङ्ग सुगमता से नहीं चढ़ सकता।

४३१. एक धनवान मारवाड़ी ने भगवान रामकृष्ण से पूछा, "भगवान्, मैंने संसार को त्याग दिया है।" उन्होंने उसको उत्तर दिया, "तुम्हारा मन तेल के बरतन की तरह है; सब तेल निकाल लेने पर भी तेल की महक बरतन में बनी रहती है, उसी प्रकार यद्यपि तुमने संसार को त्याग दिया है तथापि उसकी वासनायें तुम्हारे हृदय में अभी तक चिपटी हुई हैं।"

४३२. कलकत्ते को बहुत से रास्ते से गये हैं। एक संशयचित्त मनुष्य गाँव से कलकत्ते को रवाना हुआ। मार्ग में उसने एक दूसरे मनुष्य से पूछा, "कलकत्ते शीघ्र पहुँचने का कौन सा मार्ग है।" उसने उत्तर दिया, "इस मार्ग से जाओ।" थोड़ी दूर जाकर उसे दूसरा मनुष्य मिला। उसने उससे पूछा, "कलकत्ते जाने का सब से छोटा मार्ग क्या यही है।" उसने उत्तर दिया, "नहीं, लौटकर पीछे जाओ और बायें हाथ वाला रास्ता पकड़ो।" उसने ऐसा ही किया। थोड़ी देर उस मार्ग पर जा

कर उसे एक तीसरा मनुष्य मिला। उसने दूसरा ही मार्ग कलकत्ते जाने का बतलाया। इस प्रकार संशयचित्त मनुष्य आगे न बढ़ सका। उसने रास्ता बदलने में ही अपना सारा दिन गंवा दिया। जिस प्रकार कलकत्ता जाने के लिये यह आवश्यक है कि एक प्रामाणिक मनुष्य के बतलाये हुये मार्ग पर से जाया जाय, उसी प्रकार जो ईश्वर के पास पहुँचना चाहते हैं, उनके लिये आवश्यक है कि वे एक ही मुख्य गुरु के उपदेश पर चलें।

४३३. जो एक विदेशी भाषा सीखता है वह अपनी योग्यता प्रगट करने के लिये बोलचाल में उस भाषा के बहुत से शब्दों को काम में लाता है, किन्तु जिसे उस विदेशी भाषा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो वह अपनी मातृभाषा में बोलते समय उस विदेशी भाषा के शब्दों का व्यवहार नहीं करता। ऐसी ही दशा उन लोगों की है जो धार्मिक उन्नति में बहुत आगे बढ़ गये हैं।

४३४. पानी जब खाली बर्तन में भरा जाता है तो वह भड़भड़ की आवाज़ करता है किन्तु घड़ा जब भर जाता है तो भड़भड़ की आवाज़ फिर नहीं होती। उसी प्रकार जिस मनुष्य को ईश्वर के दर्शन नहीं हुये वह उसके अस्तित्व और उसके गुणों के विषय में बहुत सी व्यर्थ की दलीलें करता है किन्तु जिसे ईश्वर के दर्शन हो गये हैं वह शान्ति के साथ दिव्यानन्द का उपभोग करता है।

४३५. जिस प्रकार शराबी कोट को कभी अपने सर पर रखता है और कभी उसे पाजामा बनाकर पैरों में पहिनता है। उसी प्रकार ईश्वर भक्ति में तल्लीन मनुष्य को वाह्य जगत की स्मृति नहीं रहती।

४३६. जब तक विषयोपभोग और संपत्ति की इच्छा समूल नष्ट नहीं हो जाती तब तक ईश्वर के दर्शन नहीं हो सकते।

४३७. मनुष्य इस संसार में दो प्रवृत्तियों को लेकर जन्म लेता है, (१) मोक्ष की ओर ले जाने वाली विद्या प्रवृत्ति; (२) विषय-

वासना की ओर लेजानेवाली अथवा बांधने वाली अविद्या प्रवृत्ति। जन्म लेने पर दोनों प्रवृत्तियों के पलड़े समान रहते हैं। फिर संसार एक पलड़े में अपना भोग और सुख रखता है और आत्मा दूसरे पलड़े में अपना सुख रखता है। यदि बुद्धि ने संसार को पसन्द किया तो संसार का पलड़ा भारी पड़ कर नीचे की ओर झुक जाता है किन्तु यदि बुद्धि ने (चैतन्य) आत्मा को पसन्द किया तो आत्मा का पलड़ा भारी होकर नीचे की ओर झुक जाता है।

४३८. जब तक मनुष्य हमेशा सच न बोले तब तक वह ईश्वर को नहीं पा सकता क्योंकि ईश्वर सत्य की जान (सत्व-सर्वस्व) है।

४३९. कांटों से भरे हुये जंगल में नंगे पांव चलना असम्भव है। किन्तु यदि मनुष्य या तो जंगल भर में चाम बिछा दे या अपने पैर में चाम के जूते पहिन ले तो वह कांटों के ऊपर चल सकता है। जंगल भर में चाम बिछाना कठिन है इसलिये चतुरता इसी में है कि अपने पैर में जूते पहिने जायं। उसी प्रकार इस संसार में मनुष्य की इच्छायें असंख्यों होती हैं और सुखी होने के केवल दो मार्ग हैं, पहिला सब इच्छाओं को तृप्त करना और दूसरा इच्छा को एकदम निकाल देना। सब इच्छाओं को तृप्त करना असम्भव है क्योंकि कुछ इच्छाओं की पूर्ति होने पर नवीन इच्छायें और पैदा हो जाती हैं। इसलिये चतुरता इसी में है कि सत्य ज्ञान और सन्तोष वृत्ति से इच्छायें कम की जायं।

४४०. दलील की दो पद्धतियाँ हैं (१) सर्वसाधारण सिद्धान्त से विशेष सिद्धान्त निकालना, (inductive) (२) विशेष से सामान्य सिद्धान्त का निश्चय करना (Deductive) एक पद्धति से मनुष्य सृष्टि के विचार से सृष्टिकर्ता के विचार को अर्थात् कार्य्य से कारण को जाता है। इसके बाद दलील की दूसरी पद्धति शुरू होती है। इस पद्धति से ईश्वर की सिद्धि होने पर मनुष्य सृष्टि के प्रत्येक भाग में ईश्वर को देखता है। एक पद्धति पृथक्करणात्मक है और दूसरी संघटनात्मक। पहिली

पद्धति केले के गाभ को छीलते हुये भीतर के गूदे तक पहुँचना है और दूसरी पद्धति एक तह बनाकर उसी पर तह बनाते जाना है।

४४१. पागल, शराबी और बच्चों के मुँहों से ईश्वर प्रायः बोलता है।

४४२. किसी के पूछने पर कि काम, क्रोध आदि मनुष्य में षट रिपु क्या कभी नष्ट होंगे, परमहंस रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "जब तक इनका झुकाव संसार और संसार की वस्तुओं की ओर रहता है तब तक वे हमारे शत्रु रहते हैं, किन्तु जब उनका झुकाव ईश्वर की ओर हो जाता है तो वे मनुष्य के पक्के मित्र बन जाते हैं और उसको ईश्वर की ओर ले जाते हैं। संसार की वस्तुओं में लगी हुई कामना ईश्वर प्राप्ति के कामना में बदल जाना चाहिये और मनुष्य की ओर किया जाने वाला क्रोध ईश्वर जल्दी न मिलने के क्रोध में बदल जाना चाहिये। इसी प्रकार शेष ४ मनोविकारों को भी ईश्वर की ओर कर देना चाहिये। ये मनोविकार समूल नष्ट नहीं किये जा सकते किन्तु वे लाभकारी बनाये जा सकते हैं।"

४४३. मृतक संस्कार के अवसर पर किसी के यहाँ भोजन न करो क्योंकि ऐसे समय के भोजन से भक्ति और प्रेम नष्ट हो जाते हैं। उस पुरोहित का भी अन्न न ग्रहण करो जो दूसरों को हवन कराकर अपनी जीविका चलाता है।

४४४. होश में या बेहोशी में, चाहे किसी भी रीति से यदि मनुष्य अमृत के कुण्ड में गिर पड़े तो उसमें डूबने से अमर हो जाता है, उसी प्रकार खुशी से या नाखुशी से किसी भी रीति से यदि मनुष्य ईश्वर का नाम ले तो वह अन्त में अमरत्व को प्राप्त होता है।

४४५. गर्व से फूल जाना बड़ा भारी पाप है। कौवे की ओर देखो। वह अपने को बड़ा बुद्धिमान समझता है। वह जाल में कभी नहीं पड़ता, ज़रा सा खतरा आने से तुरन्त उड़ जाता है, और बड़े कौशल के

साथ भोजन चुरा लाता है। लेकिन इतना होशियार होता हुआ भी बेचारा पाखाना खाता है। अपने को अत्यन्त बुद्धिमान समझने वाले की अथवा छोटे मोटे वकील ऐसी बुद्धि रखनेवाले की ऐसी ही दशा होती है।

४४६. पानी में रक्खा हुआ घड़ा बाहर भीतर और सब ओर पानी से भरा रहता है। उसी प्रकार ईश्वर में लीन हुये मनुष्य के भीतर, बाहर और सब ओर सर्वव्यापी ईश्वर दिखलाई पड़ता है।

४४७. सच्चा मनुष्य वही है जो इसी जन्म में मृत हो जाय अर्थात् जिसके मनोविकार और जिसकी कामनायें मुरदे शरीर की तरह नष्ट हो जांय। मनुष्य के हृदय में जब तक ज़रा भी सांसारिक वासना की गन्ध रहती है तब तक वह ईश्वर को नहीं देख सकता। इसलिये छोटी २ अपनी वासनायें सन्तोष वृत्ति से नष्ट कर डालो और बड़ी २ वासनाओं को विवेक और विचार से छोड़ दो।

४४८. शिव और शक्ति अर्थात् ज्ञान और शक्ति, दोनों की आवश्यकता सृष्टि उत्पन्न करने में है। सूखी मिट्टी से कोई कुम्हार बरतन नहीं बना सकता; उस काम के लिये पानी भी चाहिये। उसी प्रकार बिना शक्ति के शिव अकेला सृष्टि को उत्पन्न नहीं कर सकता।

४४९. ऐसा न समझो कि श्रीकृष्ण, राम, राधा और अर्जुन ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं थे, केवल रूपक ही (allegories) थे, और शास्त्रों का अर्थ केवल गूढ़ है। वे मेरी तरह हाड़ मांसधारी मनुष्य थे। चूंकि उनके चरित्र दिव्य थे इसलिये वे ऐतिहासिक और परमार्थिक दोनों समझे जाते हैं।

४५०. साधू के दर्शन के लिये जाते समय या मन्दिर को जाते हुये खाली हाथ न आओ। उनकी भेट करने के लिये कोई न कोई वस्तु अवश्य लेते जाओ चाहे वह कितनी ही छोटी क्यों न हो।

४५१. किसी को ईश्वर किस प्रकार मिल सकता है? उसको

पाने के लिये तुम्हें अपने तन, अपने मन और अपने धन को बलिदान करना चाहिये।

४५२. जब मनुष्य का "मनुष्यत्व" नष्ट हो जाता है तब ईश्वर हृदय में प्रगट होता है, और ईश्वर का अंश नष्ट होने पर आनन्दमयी माता व्यक्त होती है। यह आनन्दमयी माता ईश्वर के (पुरुष के) वक्षस्थल पर दिव्य नाच करती है।

४५३. अपने गुरू की निन्दा न सुनो। वह तुम्हारे मां और बाप से श्रेष्ठ है। यदि कोई तुम्हारे मां और बाप का अपमान करे तो क्या तुम चुप रहोगे? आवश्यकता पड़े तो गुरू की ओर से लड़ो और उनका मान रक्खो।

४५४. जिनका ध्यान और जिनकी उत्कण्ठा तीव्र है उन्हीं को ईश्वर जल्दी मिलता है।

४५५. संसार किसकी तरह है? यह आम्लफल की तरह है। इसमें बकला और गुठली अधिक होता है और गूदा कम और इसके खाने से पेट में शूल पैदा होता है।

४५६. जहाँ गुरू और शिष्य का भेदभाव नहीं है वह पवित्र आसन बड़ा गुह्य है। ब्रह्मपद इतना गुह्य है कि वहां पहुँचते ही गुरू और शिष्य का भेदभाव मिट जाता है।

४५७. यदि प्रत्येक धर्म का ईश्वर एक ही है तो भिन्न २ धर्म अपने ईश्वर का वर्णन भिन्न २ प्रकार से क्यों करते हैं? उत्तर-ईश्वर एक है लेकिन उसके स्वरूप अनेक हैं। जिस प्रकार घर का स्वामी एक का बाप है, दूसरे का भाई और तीसरे का पति होता है और हरेक व्यक्ति उसको अपने २ सम्बन्ध के अनुसार उसका नाम लेलेकर पुकारते हैं उसी प्रकार जिस भक्त को ईश्वर के जिस स्वरूप का दर्शन होता है उसी के अनुसार वह उसका वर्णन करता है।

४५८. कुम्हार की दूकान में भिन्न २ प्रकार और आकार के बर्तन-

घड़ा, सुराही, रकाबी, कसोरे आदि—होते हैं किन्तु सब एक ही मिट्टी के बनते हैं। उसी प्रकार ईश्वर एक है किन्तु भिन्न २ देशों में भिन्न २ युगों में भिन्न २ नाम और स्वरूप से उसकी पूजा की जाती है।

४५६. अद्वैत ज्ञान सब से ऊंचा है। परन्तु ईश्वर की पूजा सेव्य सेवक और भज्य भजक भाव से पहिले होनी चाहिये। यह सब से सुगम मार्ग है। शीघ्र ही अद्वैत का ज्ञान प्राप्त होता है।

४६०. शुद्ध श्रद्धा और निष्कपट प्रेम से जो कोई सर्वशक्तिमान प्रभु की शरण जाता है उसको वह तुरन्त प्राप्त होता है।

४६१. चमत्कार दिखलानेवालों और सिद्धि दिखलानेवालों के पास न जाओ ये लोग सत्यमार्ग से अलग रहते हैं। उनके मन ऋद्धि और सिद्धि के जाल में पड़े रहते हैं। ऋद्धि सिद्धि ईश्वर तक पहुँचने के मार्ग के रोड़े हैं। इन शक्तियों से सावधान रहो और उनकी इच्छा न करो।

४६२. सब सियारों का चिल्लाना एक समान होता है। उसी प्रकार सब साधुओं के उपदेश भी एक ही होते हैं।

४६३. चावल के बड़े २ बखारों के (Granaries) पास चूहों को फंसाने के लिये चूहेदानी रक्खी जाती है जिनमें लावा (भूरी) रक्खा होता है। चूहे दानों की महक से मुग्ध होकर चावल खाने के सच्चे स्वाद को भूलकर चूहेदानी में फँस जाते हैं और मारे जाते हैं। यही हाल जीवात्मा का भी है। वह दिव्यानन्द के ड्योढ़ी पर खड़ा हुआ है जिसमें सैकड़ों वैषयिक सुख का आनन्द होता है। इस दिव्य आनन्द भोग करने की अपेक्षा वह संसार के छोटे सुखों में तल्लीन होता है और मायाजाल में पड़कर मरण को प्राप्त होता है।

४६४. एकान्त जंगल में १४ वर्ष तपस्या करने के अनन्तर एक मनुष्य को पानी पर चलने की सिद्धि मिली। उससे अत्यन्त प्रसन्न होकर वह अपने गुरू के पास गया और बोला "गुरू महाराज, मुझे पानी पर चलने की सिद्धि मिली है।" गुरू ने उसको फटकार कर कहा,

"१४ वर्ष की तपस्या का यही परिणाम है ? वास्तव में इतना समय तूने व्यर्थ ही गंवाया है। १४ वर्ष कठिन परिश्रम करके जो तू नहीं पूरा कर सका उसे साधारण मनुष्य मल्लाह को एक पैसा देकर पूरा कर सकते हैं।

४६५. परमहंस रामकृष्ण के किसी शिष्य ने दूसरों के दिल की बात जान लेने की कला सिद्ध की। इससे अत्यन्त प्रसन्न होकर उसने अपने अनुभव गुरू से कहा। भगवान रामकृष्ण ने फटकार कर उससे कहा, 'तुझे धिक्कार है। ऐसी २ छोटी बातों पर तू अपनी शक्ति खर्च न कर।'

४६६. जिस प्रकार एक बालक खम्भे को पकड़ कर उसके चारों ओर निर्भय होकर बराबर चक्कर लगाता रहता है और नहीं गिरता उसी प्रकार बुद्धिमानों को ईश्वर पर भरोसा करके बिना किसी भय के संसार में घूमना फिरना चाहिये।

४६७. झेपू घोड़े की आंखों में जब तक पट्टी न लगाई जाय तब तक वह सीधा नहीं चलता। उसी प्रकार यदि सांसारिक मनुष्यों की आंखों में विवेक और वैराग्य की पट्टियाँ लगाई जांय तो वह भटक कर बुरे रास्तों में नहीं जा सकेगा।

४६८. जो साधू दवा बांटता है और स्वयं नशा लानेवाली चीज़ों का सेवन करता है वह सच्चा साधू नहीं है। ऐसे साधुओं की संगति से बचो।

४६९. जिस प्रकार कमल की पतियाँ गिर जाने से या नारियल की पत्तियाँ गिर जाने से निशान शेष रह जाता है उसी प्रकार अहङ्कार के दूर हो जाने पर भी उसका कुछ भाग शेष रह जाता है लेकिन उससे हानि पहुँचने का डर नहीं रहता।

४७०. दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर के भी जो इसी जन्म में ईश्वर को प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करता, उसका जीवित रहना व्यर्थ है।

४७१. जिनको अधिक लोग मान देते हैं और जिनकी आज्ञा का अधिक लोग पालन करते हैं उनमें कुछ भी प्रभाव न रखने वाले लोगों के अधिक ईश्वर का अंश होता है।

४७२. एक बार नारद ऋषि अहंकार में आकर सोचने लगे कि मुझसे बढ़कर ईश्वर का दूसरा भक्त कोई नहीं है। विष्णु भगवान चट इस बात को ताड़ गये। उन्होंने नारद को बुलाया और कहा आप अमुक स्थान में जाइये, वहां मेरा एक भक्त रहता है, उससे परिचय कीजिये। नारद वहां गये और देखते क्या हैं कि एक किसान बड़े तड़के उठता है एक बार हरी का नाम लेता है और फिर दिन भर खेत में काम करता है और रात में एक बार हरी का नाम और लेकर सो जाता है। नारद ने अपने दिल में सोचा "भला यह गंवार परमात्मा का भक्त क्यों कर हो सकता है ? इसमें भक्तों के कोई लक्षण भी तो नहीं दृष्टिगोचर होते। नारद लौटकर विष्णु के पास आये और सारी व्यवस्था बयान की। विष्णु ने कहा, "नारद तेल से भरे हुए प्याले को लेकर नगर की परिक्रमा कर आओ और याद रक्खो तेल एक बूंद न गिरने पावे।" नारद ने वैसा ही किया और जब लौटे तो विष्णु ने पूछा "प्रदक्षिणा करते हुए, तुमने मुझे कितनी बार याद किया।" नारद ने उत्तर दिया, भगवन, एक दफा भी नहीं और मैं आपको याद भी कैसे कर सकता हूँ जब कि मुझे लबालब तेल से भरे हुए प्याले को देखना पड़ता था। भगवान ने कहा, इस एक प्याले ही ने तुम्हें इस प्रकार अपनी ओर खींच लिया कि तुम मुझे बिलकुल भूल गये परन्तु उस गंवार को देखो कि दिन भर गृहस्थी का काम करता है और तब भी दिन में दो दफे मुझे स्मरण कर लेता है।"

४७३. यदुनाथ मलिक ऐसे धनी लोगों को लोग पूछते अधिक हैं लेकिन उनके पास लोग जाते कम हैं; उसी प्रकार बहुत से लोग धर्मशास्त्र पढ़ते हैं और बहुत से लोग धर्म-सम्बंधी बातचीत करते हैं लेकिन ऐसे

बहुत कम लोग हैं जो ईश्वर के दर्शन करने का या उसके पास पहुँचने का कष्ट उठाते हों।

४७४. एक मनुष्य ने कहा, "चौदह वर्ष से मैं ईश्वर को ढूँढ रहा हूँ, प्रत्येक साधू का उपदेश माना है, सब तीर्थ स्थानों का पर्य्यटन कर आया हूँ, बहुत से साधुओं और महात्माओं का दर्शन किया है। अब इस समय मेरी अवस्था ५५ वर्ष की है और मुझे अभी तक कोई फल नहीं मिला है।" इस पर भगवान परमहंस ने उत्तर दिया, "मैं तुझसे सच सच कहता हूं, जो ईश्वर के पाने की उत्कट इच्छा करता है उसे ईश्वर मिलता है। मेरी ओर देखो और धीरज धरो।"

४७५. बहुत से लोग इस वास्ते रोते हैं कि उनके लड़के नहीं हैं बहुत से इसलिये रोते हैं कि उनके पास धन नहीं है। किन्तु कितने ऐसे हैं जो इस वास्ते रोते हों कि उनको ईश्वर के दर्शन नहीं हुये ? जो ढूँढ़ता है वह पाता है। जो ईश्वर के लिये रोता है उसे ईश्वर के दर्शन होते हैं।

४७६. गुरू पवित्र गंगा की तरह है। गंगा जी में सब प्रकार का कूड़ा कर्कट फेंका जाता है किन्तु गंगा जी की पवित्रता उससे कम नहीं होती। उसी प्रकार गुरू की निन्दा और अपमान करने से उसका कुछ नहीं बिगड़ता।

४७७. मैं तुझसे सच सच कहता हूँ कि जो ईश्वर को ढूँढता है उसे ईश्वर मिलता है। इसका प्रत्यक्ष फल अपने जीवन में ही करके देख लो। पूर्ण सचाई के साथ केवल तीन दिनों तक प्रयत्न करो, तुम्हें सफलता अवश्य मिलेगी।

४७८. इस कलियुग में ईश्वर के दर्शन पाने के लिये केवल तीन दिन का सच्चा प्रयत्न काफ़ी है।

४७९. एक बार मैंने एक स्थान पर दो नपुंसक बैल देखे। एक गाय उस मार्ग से निकली। उसको देखकर एक बैल तो कामातुर

होकर आवाज़ लगाने लगा और दूसरा शान्त खड़ा रहा। इस बैल की विलक्षण करतूत देख कर मैंने उसका पूर्व चरित्र पूछा तो मुझे मालुम हुआ यह जवानी में गाय के साथ संभोग करने के बाद नपुंसक बनाया गया है और दूसरा बाल्यावस्था में। आदत या संस्कार का ऐसा ही परिणाम होता है। विषय भोग का अनुभव किये बिना ही जो साधू संसार को छोड़ देते हैं वे स्त्रियों को देखकर कामातुर नहीं होते। किन्तु जो गार्हस्थ्य जीवन का सुख भोग करके सन्यासी होते हैं वे कई वर्षों तक इन्द्रिय दमन का अभ्यास कर लेने पर भी कामातुर हो सकते हैं।

४८०. जब कि बकरे का सर काट दिया जाता है तो धड़ कुछ देर तक हरकत करता है। अहङ्कार का भी यही हाल है। मुक्तात्माओं का अहङ्कार नष्ट हो जाता है किन्तु शारीरिक काम करने के लिये उसका काफी अंश शेष रहता है लेकिन उससे मनुष्य संसार के बन्धन में नहीं बँध सकता।

४८१. जो अपने को जीवात्मा समझता है वह जीवात्मा ही है और जो अपने को ईश्वर समझता है वह वास्तव में ईश्वर है। जो जैसा सोचता है वह वैसा बनता है।

४८२. बहुत से मनुष्य अपनी नम्रता दिखलाने के लिये कहते हैं, "मैं पृथ्वी पर रेंगने वाला एक क्षुद्र कीटक हूँ," इस प्रकार अपने को सदा कीटक समझने वाले लोग वास्तव में कीटक हो हो जाते हैं। अपने हृदय में निराशा न आने दो। निराशा उन्नति के मार्ग में सबसे भारी शत्रु है, जैसा मनुष्य सोचता है वैसा ही वह बनता है।

४८३. सूरज संसार भर को गरमी और प्रकाश देता है लेकिन जब बादल पृथ्वी को ढक लेते हैं तो वह कुछ नहीं कर सकता। उसी प्रकार जब तक अहंकार आत्मा को ढके रहता है तब तक ईश्वर कुछ नहीं कर सकता।

४८४. इस संसार में जो कोई सुख देता है उसमें दिव्यानन्द का कुछ भाग अवश्य रहता है। गुड़ और चीनी में जो अन्तर है वही अन्तर इस संसार और दिव्यानन्द में है।

४८५. पूर्ण सिद्ध पुरुषों में दो वर्ग होते हैं। एक वर्ग के वे लोग हैं जो सत्य का शोध करते हैं और उसका आनन्द स्वयं ही चखते हैं, दूसरों को नहीं देते। और दूसरे वर्ग के वे लोग हैं जो दूसरों से भी कहते हैं," आओ और हमारे साथ इस सत्य का आनन्द चक्खो।"

४८६. "यदि सत्य एक ही शब्द में जानना चाहते हो तो मेरे पास आओ और हजारों शब्दों में जानना चाहते हो तो व्यास गद्दी पर बैठे हुये उपदेशकों के पास जाओ।" एक मनुष्य ने पूछा, "महाराज कृपा करके मुझे सत्य एक ही शब्द में बतलाइये।" परमहंस रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "ब्रह्म सत्य है और जगत मिथ्या है।"

४८७. इस शरीर के धारण करने में मैंने कितना स्वार्थत्याग किया है और संसार का कितना बोझा धारण किया है, इसके कौन जान सकता है? ईश्वर जब अवतार धारण करता है तो उसका स्वार्थ त्याग कितना प्रचण्ड होता है इसको कौन जान सकता है।

४८८. लोहार के निहाई की ओर देखो, उस पर हथौड़े की कितनी जबरदस्त चोट पड़ती है लेकिन वह अपने स्थान से नहीं डोलती। मुझे धैर्य्य और सहनशीलता की शिक्षा उससे ग्रहण करनी चाहिये।

४८९. एक मनुष्य के ऊपर बहुत सा ऋण चढ़ गया था। ऋण से अपने को बचाने के लिये वह पागल बन गया। डाक्टरों ने उसकी दवा की लेकिन वह अच्छा न हो सका। जितना अधिक वह अपने ऋण पर सोचता था उतना ही अधिक पागल वह हो जाता था। अन्त में एक डाक्टर उसके बहाने को समझ गया। उसने उसको एकान्त में लेजाकर कहा, "क्यों जी तुम यह क्या कर रहे हो? सचेत हो जाओ, पागल बनने का बहाना करते करते तुम में सचमुच पागलपन के वास्तविक

चिन्ह दिखलाई देने लगे हैं।" इन मर्मभेदी बातों को सुन कर उस मनुष्य के होश ठिकाने आये और उस दिन से उसने पागल बनना छोड़ दिया। किसी एक चीज़ का बहाना करने से मनुष्य वही हो जाता है।

४६०. ईश्वर सब मनुष्यों में हैं किन्तु सब मनुष्य ईश्वर में नहीं हैं। और इसी कारण वे दुख उठाया करते हैं।

४६१. जब तक मनुष्य बच्चे की तरह सादा नहीं हो जाता तब तक उसे दिव्य दृष्टि नहीं मिलती। तू आज पर्यन्त मिले हुये सांसारिक ज्ञान को भूल जा और छोटे बच्चे की तरह अज्ञानी बन जा तब तुझे सत्यज्ञान प्राप्त होगा।

४६२. सामान्य कुटुम्ब की सतीसाध्वी स्त्रियों की ओर जब मैं देखता हूँ तो मुझे ऐसा मालुम होता है कि मेरी जगन्माता ही पतिव्रता स्त्री का वेष रख कर उनमें वर्तमान है और जब मैं अपने कोठे पर बैठी हुई वेश्याओं की ओर देखता हूँ तो मुझे ऐसा मालुम होता है कि मेरी जगन्माता दूसरी तरह से विनोद कर रही है।

४६३. एक (१) के अंक पर जितने शून्य रक्खे जायेंगे उतनी ही कीमत उसकी बढ़ती जायगी; लेकिन यदि एक (१) अलग कर दिया जाय तो शून्यों का कोई मूल्य नहीं रह जाता। उसी प्रकार जीव जब तक ईश्वर में नहीं संलग्न होता जो एक की तरह है तब तक उसकी कोई कीमत नहीं रहती। संसार में वस्तुओं की कीमत ईश्वर के साथ उनके सम्बन्ध रहने से होती है।

४६४. जब तक जीव का संयोग ईश्वर से है, जो एक के अंक की तरह है, और वह ईश्वर का काम करता है तब तक उसकी कीमत बराबर बढ़ती चली जाती है। यदि वह ईश्वर को ओर से मुख मोड़ लेता है और अपने ही स्वार्थ के लिये बड़े बड़े काम करता है तो उसको कोई लाभ नहीं होने का।

४६५. जिस प्रकार मैं कभी २ कपड़े पहिने रहता हूँ और कभी २

नंगा रहता हूँ, उसी प्रकार ब्रह्म भी कभी गुणधर्म सहित होता है और कभी गुणधर्म रहित। सगुण ब्रह्म शक्ति संयुक्त ब्रह्म है, उसे ईश्वर या सगुण देव कहते हैं।

४९६. मुक्त आत्मा में क्या माया होती है? गहने निखालिस सोने के नहीं बनते, उसमें कुछ न कुछ मिलावट होनी ही चाहिये। उसी प्रकार जब तक मनुष्य के देह है तब तक देह यात्रा चलने के लिये कुछ माया होनी चाहिये। जो मनुष्य माया से बिल्कुल रहित हो गया वह २१ दिनों से अधिक जीवित नहीं रह सकता।

४९७. सांसारिक मनुष्यों की बुद्धि और ज्ञान, ज्ञानियों की बुद्धि और ज्ञान के सदृश हो सकते हैं, सांसारिक मनुष्य ज्ञानियों के सदृश कष्ट भी उठा सकते हैं, सांसारिक मनुष्य तपस्वियों के सदृश त्याग भी कर सकते हैं। लेकिन उनके सब प्रयत्न व्यर्थ होते हैं। कारण इसका यह है कि उनकी शक्तियां ठीक मार्ग पर नहीं लगतीं। उनके सब प्रयत्न विषय, भोग, मान और सम्पत्ति मिलने के लिये किये जाते हैं, ईश्वर मिलने के लिये नहीं।

४९८. जहां दूसरे लोग मस्तक झुकाते हैं, वहां तुम भी अपने मस्तक को झुकाओ। बुद्धिमानों के मस्तक झुकाने का परिणाम अच्छा ही होता है।

४९९. धोबी अपने घर मैले कपड़ों से भर लेता है लेकिन वे सब उसके नहीं होते। उन्हें धोकर वह लोगों के पास पहुँचा देता है तो उसका घर खाली हो जाता है। जिन मनुष्यों के विचारों में मौलिकता नहीं है, वे धोबी की तरह हैं। विचारों में धोबी न बनो।

५००. जिस प्रकार मछली से शोरवा, कढ़ी, कटलेट आदि पदार्थ बनाये जाते हैं लेकिन कोई शोरवा पसन्द करता है, कोई कढ़ी पसन्द करता है और कोई कटलेट। उसी प्रकार विश्व का स्वामी परमेश्वर एक ही है लेकिन अपने भक्तों की भिन्न भिन्न रुचि के अनुसार भिन्न २ स्वरूपों

में व्यक्त होता है। और प्रत्येक भक्त को अपना २ स्वरूप अच्छा लगता है। किसी का वह दयालु स्वामी है, किसी का दयालु पिता है, किसी की हंसमुख मां है, किसी का सच्चा मित्र है, किसी का सच्चा पति है और किसी का आज्ञाकारी पुत्र है।

४०१. शहर में नवीन आये हुये मनुष्य को रात्रि में विश्राम करने के लिये पहिले सुख देने वाले एक स्थान की खोज कर लेनी चाहिये। और वहाँ अपना सामान रखकर फिर उसे शहर में घूमने जाना चाहिये, नहीं तो अँधेरे में उसे बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा। उसी प्रकार इस संसार में आये हुये को पहिले अपने विश्राम स्थान की खोज कर लेनी चाहिये और इसके पश्चात् फिर दिन का अपना काम करना चाहिये। नहीं तो जब मृत्यु रूपी रात्रि आवेगी तो उसे बहुत सी अड़चनों का सामाना करना पड़ेगा और मानसिक व्यथा सहनी पड़ेगी।

४०२. माया को देखने की जब मेरी उत्कट इच्छा हुई तो एक दिन मैंने एक दृश्य देखा—एक छोटा सा बूंद बढ़ता गया और उसकी एक कन्या बन गई। कन्या एक स्त्री होगई और उसने एक बच्चा पैदा किया और फिर वह उसे खा गई। इस प्रकार उसने बहुत से बच्चे पैदा किये और सब को एक एक करके खा गई। तब मेरी समझ में आया कि माया यही है।

४०३ प्रश्न—ब्रह्म क्या है ?

उत्तर—ब्रह्म शब्द की व्याख्या नहीं हो सकती; जिस मनुष्य ने समुद्र को न देखा हो यदि उससे यह पूछा जाय कि समुद्र कितना बड़ा है तो वह यही कहेगा कि समुद्र पानी का प्रचण्ड विस्तार है; समुद्र पानी का ढेर है, उसमें चारों ओर पानी ही पानी है।

४०४. अपने विचारों के द्रोही न बनो; निष्कपट बनो; अपने विचारों के अनुसार काम करो। तुम्हें सफलता अवश्य मिलेगी। सचाई और सरल हृदय से प्रार्थना करो, तुम्हारी प्रार्थना अवश्य सुनी जायगी।

४०५. जिस प्रकार माँ अपने बीमार बच्चों में से किसी को भात और कढ़ी देती है, दूसरे को साबूदाना और अरारोट देती है, और तीसरे को रोटी और मक्खन देती है। उसी प्रकार ईश्वर ने भिन्न २ लोगों के लिये उनकी प्रकृति के अनुसार भिन्न २ मार्ग निकाल रक्खे हैं।

४०६. मनुष्य अति शीघ्र प्रशंसा करते हैं, और अति शीघ्र बुराई करते हैं, इसलिये दूसरे लोग तुम्हारे विषय में क्या कहते हैं, इस पर कुछ ध्यान न दो।

४०७. घण्टाकर्ण की तरह कट्टरता (Bigotry) न करो। एक मनुष्य था जो केवल शिव की पूजा किया करता था और दूसरे देवताओं से घृणा करता था। एक दिन शिव जी ने प्रगट होकर उससे कहा, "जब तक तुम दूसरे देवताओं से घृणा करते हो तब तक मैं कभी भी नहीं प्रसन्न हूँगा।" मनुष्य चुप रहा। कुछ दिनों के अनन्तर शिव जी फिर प्रकट हुये। इस बार वे हरी और हर के वेष में प्रगट हुये। यानी आधा अंग उनका शिव का था और दूसरा आधा विष्णु का। वह मनुष्य आधा खुश हुआ और आधा नाखुश हुआ। उसने नैवेद्य शिवजी वाले हिस्से को चढ़ाया। शिवाजी ने कहा, "तुम्हारी कट्टरता क्यों नहीं जाती ? मैंने दो दो स्वरूप को धारण करके तुम्हें यह समझाने का प्रयत्न किया था कि सब देवता और देवियाँ एक ही ईश्वर के स्वरूप हैं लेकिन तुमने कोई शिक्षा नहीं ली, इसलिये इसके लिये तुम्हें चिरकाल तक दुःख भोगना पड़ेगा। 'वह मनुष्य चला गया और एक गाँव में रहने लगा। शीघ्र ही वह विष्णु का विद्वेषी निकला। उस गाँव के लड़के "विष्णु' का नाम ले ले करके उसे बहुत तंग करने लगे। उस मनुष्य ने कान में दो घण्टे लटकाये जिनको वह उस समय बजाता था जब लड़के विष्णु का नाम लेते थे ताकि विष्णु का नाम उसके कानों में न जावे। उस समय से लोग उसे घंटाकर्ण कहने लगे।

४०८. अज्ञानियों की निन्दा के भय से या लोगों के उपहास के डर से धर्माचरण करने में लज्जा न करो। ऐसा समझो कि संसार के लोग क्षुद्र कीटक हैं, उनको महत्व देने की कोई आवश्यकता नहीं है।

४०९. एक पुरुष और उसकी स्त्री संसार का त्याग करके तीर्थ-यात्रा करने के लिये बाहर निकले। एक बार जब वे सड़क पर जा रहे थे और स्त्री कुछ पीछे रह गई थी तो पुरुष ने एक हीरे का टुकड़ा सड़क पर पड़ा हुआ देखा। वह यह सोचकर उसे पृथ्वी पर गाड़ने लगा कि ऐसा न हो स्त्री के जी में उसे ले लेने का लालच लग जाय और उससे त्याग (वैराग्य) का फल भ्रष्ट हो जाय। जब कि वह पृथ्वी को खोद रहा था तो स्त्री भी आ पहुँची और उसने उससे पूछा कि क्या कर रहे हो। उसने नम्रता से गोल मोल उत्तर दे दिया। उसने हीरे को देख लिया और उसके विचारों को समझ कर कहा, "तुमने संसार क्यों छोड़ा यदि हीरे और धूलि में तुम्हें अब भी अन्तर मालुम होता है ?"

४१०. एक बार महाराज बर्दवान के पंडितों में झगड़ा हुआ कि शिव और विष्णु में बड़ा देवता कौन है। कुछ पंडितों ने कहा शिव और कुछ ने कहा विष्णु। जब विवाद बहुत बढ़ गया तो एक बुद्धिमान पंडित ने खड़े होकर कहा, न तो मैंने शिव को देखा है और न विष्णु को देखा है, तो मैं कैसे कह सकता हूँ कि दोनों में बड़ा कौन है। उसी प्रकार ऐ मनुष्यो एक देवता की तुलना दूसरे से न करो। जब तुम एक देवता को देख लोगे तो तुमको मालुम होगा कि दोनों देवता एक ही ब्रह्म के स्वरूप हैं।

४११. पानी जब जम जाता है तो वह बर्फ हो जाता है उसी प्रकार ईश्वर का साकार देह सर्वव्यापी निराकार ब्रह्म का व्यक्त स्वरूप है। उसको हम जमा हुआ (Solidified) सच्चिदानन्द कहते हैं। जिस प्रकार बर्फ पानी का भाग है, वह पानी में रहता है, और उसी में फिर

पिघल कर मिल जाता है, उसी प्रकार सगुण देव निर्गुण देव का भाग है। सगुण देव निर्गुण ब्रह्म से उत्पन्न होता है, उसी में रहता है और अन्त में उसी में लीन होकर अन्तर्ध्यान हो जाता है।

५१२. परमात्मा का नाम चिन्मय है, उसका वासस्थान चिन्मय है, और वह सर्व चैतन्य स्वरूप है।

५१३. जो प्यासा है वह नदी के पानी को मटमैला देखकर उसका तिरस्कार नहीं करता और न वह पानी मिलने की आशा से नया कुआं खोदने लगता है। उसी प्रकार जिसको धर्म की सच्ची तृष्णा लगी है वह अपने पास वाले धर्म का तिरस्कार नहीं करता और न अपने लिये वह एक नया धर्म चलाता है। जिसको सच्ची प्यास लगी है उसे ऐसे ऐसे विचारों के लिये समय नहीं मिलता।

५१४. कुछ वर्ष पहिले जब हिन्दू और ब्राह्मो बड़ी उत्सुकता से अपने २ धर्म का उपदेश कर रहे थे, उस समय किसी ने भगवान राम-कृष्ण से पूछा कि इस विषय में आपका क्या मत है। इस पर उन्होंने कहा मुझे तो ऐसा मालुम होता है कि मेरी जगन्माता इन दोनों धार्मिक दलों से अपना काम करवा रही है।"

५१५. दान सोच समझ कर करो। कुछ लोगों को दान देने से पुण्य के बदले पाप होता है। एक मनुष्य ने एक स्थान पर सदाव्रत खोल रक्खा था। वहाँ होकर जानेवाले सब को उसमें भोजन मिलता था। एक क़साई एक गाय को क़साईखाने ले जा रहा था। वह बहुत थक गया था सदाव्रत में जाकर उसने भोजन किया और फिर ताजा होकर बड़ी आसानी से गाय को क़साईखाने में ले गया। गाय मारने का पाप १ और ३ के सम्बन्ध से क़साई और सदाव्रत खोलने वाले को लगा।

५१६. शाश्वत को अशाश्वत से आत्मा को अनात्मा से और अदृश्य को दृश्य के द्वारा पहुँचना चाहिये।

५१७. जो सादा बनस्पत्याहार करता है लेकिन ईश्वर प्राप्ति की

इच्छा नहीं करता, उसके लिये सादा भोजन उतना ही बुरा है जितना गोमांस। लेकिन जो गोमांस खाता है और ईश्वर प्राप्ति की चिन्ता में रहता है उसके लिये गोमांस उतना ही अच्छा है जितना देवताओं का अन्न।

४१८. प्रश्न—सांसारिक मनुष्य संसार की प्रत्येक वस्तु को छोड़ कर ईश्वर में क्यों नहीं जाकर मिलते।

उत्तर—यह संसार रंगभूमि की तरह है जहां नाना प्रकार के भेप रख रख कर मनुष्य अपना अपना पार्ट करते हैं। जब तक कुछ देर तक वे अपना पार्ट नहीं कर लेते तब तक अपना भेप वे बदलना नहीं चाहते। उनको थोड़ी देर खेल लेने दो, इसके बाद वे अपने भेप को आपसे आप बदल डालेंगे।

४१९. वे मनुष्य धन्य हैं जो गंगा जी के तट पर निवास करते हैं।

४२०. जिस प्रकार चन्द्रमा प्रत्येक लड़के का "मामा" है, (लड़के चन्दामामा कहते हैं) उसी प्रकार ईश्वर सब लोगों का आध्यात्मिक गुरू है।

४२१. आत्मा और आकार, भीतरी विचार और बाह्य चिह्न, दोनों को मान दो।

४२२. एकाग्र ध्यान से ध्येय वस्तु का स्वरूप उत्तम मालूम होता है। वह स्वरूप ध्यान करने वाले के हृदय में भर जाता है।

४२३. सूर्य पृथ्वी से अनेकों गुना बड़ा है लेकिन दूर होने के कारण वह छोटे चक्र ऐसा दिखलाई पड़ता है। इसी प्रकार ईश्वर बहुत बड़ा है लेकिन उससे दूर होने कारण हम उसके वास्तविक बड़प्पन को नहीं समझ सकते।

४२४. समुद्र की लहर और समुद्र में जो सम्बन्ध है, वही सम्बन्ध अवतार (रामकृष्ण आदि) और ब्रह्म में है।

४२५. लोग हमेशा राजा जनक का उदाहरण देते हैं कि उनको

संसार में रह कर आध्यात्मिक ज्ञान मिला लेकिन मानव जाति के सारे इतिहास में केवल यही एक ऐसा उदाहरण मिलता है। यह नियम नहीं अपवाद exception है। साधारण नियम तो ऐसा है कि बिना कनक और कान्ता को छोड़े किसी की आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो सकती। अपने को जनक समझो न मालूम कितनी शताब्दियाँ गुज़र चुकीं, और संसार ने अभी तक दूसरा जनक पैदा ही नहीं किया।

५२६. जीवनपर्य्यन्त प्रेम और भक्ति के गुह्य तत्वों को रोज़ सीखो। इससे तुम्हारा लाभ होगा।

५२७. एक शिष्य को अपने गुरू की शक्ति पर अत्यन्त श्रद्धा थी। वह उनका नाम लेकर नदी पर चलता था। गुरू ने इसे देख कर सोचा, "ओहो मेरे नाम में इतनी शक्ति है? अरे मुझे पहले नहीं मालूम था मेरी शक्ति इतनी बड़ी है।" दूसरे दिन "मैं, मैं, मैं" कह कर गुरू जी भी नदी पर चलने लगे, लेकिन ज्यों ही उन्होंने नदी में पैर रक्खा त्यों ही वे पानी के नीचे चले गये और डूब गये। बेचारे को तैरना तक न मालूम था। श्रद्धा से बड़े २ आश्चर्य्यजनक चमत्कार होते हैं किन्तु अहङ्कार से मनुष्य का नाश होता है।

५२८. शंकराचार्य जी का एक मूर्ख शिष्य हर बात में उनकी नकल करता था जब शंकराचार्यजी कहते "शिवोऽहम्" तो शिष्य भी वही कहने लगता। अपने शिष्य को ठीक मार्ग पर लाने के लिये एक दिन उन्होंने किसी लोहार की दूकान से जलता हुआ लोहा ले कर खा लिया और अपने शिष्य से कहा कि तू भी ऐसा कर। किन्तु शिष्य ऐसा न कर सका और उस दिन से उसने "शिवोऽहम्" कहना छोड़ दिया। क्षुद्र अनुकरण सदैव बुराई का घर है। किन्तु बड़े लोगों के उदाहरण से अपना सुधार करना हमेशा उत्तम है।

५२९. एक मनुष्य खाली घर पर बैठा था। उसकी स्त्री रोज कोसा करती थी। एक दिन जब उसका लड़का बहुत बीमार था और डाक्टरों ने उसको अच्छा करने से जवाब दे दिया तो वह नौकरी की तलाश में घर से बाहर निकला। इतने में लड़के की मृत्यु हो गई और लोग उसके पिता को ढूँढने लगे लेकिन उनका पता न लगा। जब सन्ध्या हुई तो वे घर को लौटते हुये दिखलाई पड़े। उसकी स्त्री ने कहा तुम बड़े निर्दयी हो; लड़का बीमार है तुमको घर से बाहर नहीं जाना चाहिये। उस मनुष्य ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया, "मैंने स्वप्न में देखा था कि मेरे ७ लड़के थे और उनके साथ बड़े आनन्द से मैं अपना समय व्यतीत करता था। लेकिन जब मैं जग पड़ा तो मैंने एक लड़के को भी न देखा। वह एक झूठा स्वप्न था। स्वप्न के सात पुत्रों का मुझे कुछ भी शोक नहीं है।" उसी प्रकार जो इस संसार को स्वप्नवत् समझता है उसको साधारण मनुष्य की तरह सांसारिक बातों में हर्ष और विषाद नहीं होता।

५३०. जिस प्रकार किरायादार घर में रहने के लिये किराया देता है उसी प्रकार जीवात्मा को शरीर में रहने के लिये बीमारी और रोगों का किराया (कर) देना पड़ता है।

५३१. सैकड़ों सांसारिक मनुष्य मुझसे मिलने के लिये रोज़ आते हैं लेकिन उनके संग से मुझे इतना आनन्द नहीं होता जितना आनन्द उस सज्जन मनुष्य के सत्सङ्ग से होता है जिसने संसार को त्याग दिया है।

५३२. सच्चे धार्मिक मनुष्य को ऐसा सोचना चाहिये कि दूसरे सब धर्म भी तो सत्य की ओर जाने के भिन्न भिन्न मार्ग हैं। दूसरों के धर्म के लिये हमें सदैव पूज्य बुद्धि रखनी चाहिये।

५३३. क्षमा तपस्वियों का सच्चा लक्षण है।

५३४. एक तालाब में कई घाट होते हैं। कोई भी किसी घाट से

उतर कर तालाब में स्नान कर सकता है या घड़ा भर सकता है। घाट के लिये लड़ना कि मेरा घाट अच्छा है और तुम्हारा घाट बुरा है, व्यर्थ है। उसी प्रकार दिव्यानन्द के झरने के पानी तक पहुँचने के लिये अनेकों घाट हैं। संसार का प्रत्येक धर्म एक घाट है। किसी भी धर्म का सहारा लेकर सचाई और उत्साह भरे हृदय से आगे बढ़ो तो तुम वहां तक पहुँच जाओगे लेकिन तुम यह न कहो कि मेरा धर्म दूसरों के धर्म से अच्छा है।

४३५. जब कि घंटा बजाया जाता है तो उसमें से एक एक आवाज़ पहिचानी जा सकती है और ऐसा मालुम होता है हरेक आवाज़ का एक एक स्वरूप है किन्तु जब घंटा बजना बन्द हो जाता है तो आवाज़ धीरे धीरे लुप्त होती जाती है और फिर उसका कोई स्वरूप नहीं रह जाता। घंटे की आवाज़ की तरह ईश्वर साकार और निराकार दोनों है।

४३६. श्रेष्ठ ज्ञान की प्राप्ति और दिव्यानन्द का लाभ माया से ही प्राप्त होता है, नहीं तो इनका आनन्द कैसे मिलता। केवल माया से ही द्वैत और सापेक्षता (relativety) उत्पन्न होते हैं। माया हट जाने पर भोक्ता और भोज्य; सेव्य और सेवक कोई नहीं रह जाता।

४३७. प्रश्न—क्या भक्त पूर्ण समागम से ईश्वर होता है? यदि होता है तो किस प्रकार?

जिस प्रकार एक सहृद स्वामी अपने पुराने आज्ञाकारी नौकर की ईमानदारी, सेवा और चतुरता से उसको स्वयं पकड़ कर अपने स्थान पर बिठाता है लेकिन नौकर शर्म से स्वयं नहीं पसन्द करता। उसी प्रकार संसार का स्वामी परमात्मा अपने प्यारे भक्त की भक्ति और स्वार्थत्याग से प्रसन्न हो कर उसे अपने स्थान में ले जाता है और उसे ईश्वरत्व देता है, यद्यपि नौकर उसकी सेवा छोड़ना और उसी में मिल जाना पसन्द नहीं करता।

४३८. एक दिन परमहंस रामकृष्ण ने देखा आसमान अभी स्वच्छ था, एकाएक बादलों ने उसे घेर लिया और फिर हवा बादलों को उड़ा ले गई और आसमान फिर स्वच्छ हो गया। उन्होंने प्रसन्न हो कर नाचना शुरू किया और फिर कहा, "माया का भी यही हाल है। माया पहिले नहीं थी, लेकिन एकाएक उसने ब्रह्म के शान्त वातावरण को आकर घेर लिया और सारे विश्व को उत्पन्न किया और फिर उसी ब्रह्म के श्वांस से छिन्न भिन्न हो गई है।"

४३९. यदि मनुष्य बच्चे पैदा करता है और फिर उनका पालन पोषण करता है तो इसमें उसको कोई बहादुरी नहीं है, क्योंकि कुत्ते और बिल्ली भी बच्चों को पैदा करते और उनका पोषण करते हैं। सच्ची बहादुरी अपने धर्म के पालन करने में है जो केवल अर्जुन में देखी गई थी।

४४०. शिष्य को उपदेश देते हुये गुरु ने दो उंगुलियां उठाईं जिसका मतलब यह था कि ब्रह्म और माया दोनों भिन्न हैं, और फिर एक उंगली नीचे करके उसने कहा कि जब माया नष्ट हो जाती है तो सिवाय एक ब्रह्म के संसार में और कोई नहीं रह जाता।

४४१. जब तक दिव्य साक्षात्कार का लाभ नहीं हुआ और जब तक पारस पत्थर के स्पर्श से लोहा सोना नहीं हुआ तब तक "करने वाला मैं हूँ" ऐसा भाव अवश्य वर्तमान रहता है और "मैंने इस अच्छे काम को किया है, मैंने उस बुरे काम को किया है" ऐसा भेदभाव भी अवश्य रहता है। भेदभाव की कल्पना माया है, जो संसार के प्रवाह के अस्तित्व का है। सत्वप्रधान विद्या माया को शरण जाने से मनुष्य सुमार्ग में चल कर ईश्वर तक पहुँचता है, वही मनुष्य माया के सागर को

पार कर सकता है जिसको ईश्वर का प्रत्यच्च दर्शन होता है। वह पुरुष जो जानता है कि करने वाला ईश्वर है मैं करने वाला नहीं हूँ, इस देह में रहता हुआ भी मुक्त है।

५४२. जिस प्रकार कृपण का सारा ध्यान द्रव्य की ओर लगा रहता है उसी तरह तू अपने सारे ध्यान को ईश्वर की ओर लगा।

५४३. दिव्य प्रेम घूंट पीने वाला भक्त एक गहरे पियक्कड़ की तरह है जो शिष्टाचार के नियमों से बंधता नहीं।

५४४. एक चोर अंधेरी कोठरी में चोरी करने के लिये घुसता है और वहां पर रक्खी हुई चीजों को टटोलता है। वह पहिले एक मेज पर हाथ रखता है और कहता है नहीं आगे बढ़ो यह तो मेज है। इसके बाद वह एक कुरसी पर हाथ रखता है और कहता है अरे यह तो कुरसी पर हाथ है आगे बढ़ो। इस प्रकार भिन्न २ चीजों पर हाथ रखता हुआ अन्त में उसका हाथ रोकड़ की सन्दूक पर पड़ता है और वह प्रसन्न हो कर कहता है, जिस चीज की खोज इतने समय से कर रहा था, वही चीज बड़ी कठिनता से अब मुझे मिली है। ब्रह्म की भी खोज इसी प्रकार की है।

५४५. जिस प्रकार काई और घास के कारण तालाब के भीतर की मछली बाहर से नहीं दिखलाई पड़ती, उसी प्रकार ईश्वर मनुष्य के अन्तःकरण में वर्तमान है लेकिन माया के परदे के कारण दिखलाई नहीं पड़ता।

५४६. जब तक "कामना" का किंचित् चिन्ह भी रहता है तब तक ईश्वर के दर्शन नहीं होते। इसलिये छोटी २ वासनाओं को तृप्त कर लो और बड़ी २ वासनाओं को विचार और विवेक से छोड़ दो।

५४७. जिस डोरे के सिरे में यदि कुछ भी फुचड़ा है तो वह सुई के भीतर नहीं जा सकता, उसी प्रकार जब तक वासना का कुछ भी चिन्ह शेष है तब तक मनुष्य स्वर्ग के राज्य में नहीं घुस सकता।

२४८. बुद्धिमान मनुष्य वही है जिसे ईश्वर का दर्शन होता है। वह एक छोटे बच्चे की तरह हो जाता है। छोटे बच्चे को एक प्रकार का अहङ्कार होता है लेकिन वह अहङ्कार एक आभासमात्र है, स्वार्थपूर्ण अहङ्कार नहीं है। छोटे बच्चे का अहङ्कार जवान मनुष्य के अहङ्कार की तरह नहीं होता।

२४९. छोटे बच्चे का अहङ्कार शीशे में प्रतिबिम्बित मुख की तरह होता है। शीशे में प्रतिबिम्बित मुख असली मुख की तरह होता है; उससे किसी को हानि नहीं पहुँच सकती।

२५०. जब तक हमारे हृदय आकाश में वासनाओं की हवायें बहती रहेंगी तब तक उसमें ईश्वर के दिव्य स्वरूप का दर्शन होना असम्भव है। शान्त और समाधि सुख में मग्न हुये हृदय में दिव्य स्वरूप का दर्शन होता है।

२५१. उसने ईश्वर का दर्शन किया है और अब वह बिल्कुल बदल गया है।

२५२. चूंकि ईश्वर हमें भोजन देता है इसलिये हम उसे कृपालु नहीं कह सकते। क्योंकि लड़कों को भोजन देना और उनका पोषण करना प्रत्येक पिता का कर्तव्य है। लेकिन जब वह हमको बुरे मार्ग से बचाये जाता है और मोह में पड़ने से रोकता है तब उसे हम सच्चा कृपालु कह सकते हैं।

२५३. समाधि के सातवें अथवा सब से ऊंची सीढ़ी पर पहुँचे हुवे और सदैव ईश्वर चिन्तन में मग्न महात्मा मानव जाति के कल्याण करने के लिये अपने आध्यात्मिक पद को छोड़कर नीचे आते हैं। उन्हें अपने विद्या का अहङ्कार होता है लेकिन वह अहङ्कार पानी पर खींची हुई लकीर की तरह केवल आभास मात्र होता है।

२५४. समाधि का सुख मिलने पर किसी को नौकर और किसी

को भक्त का अहंकार होता है। दूसरों को उपदेश देने के लिये शंकराचार्य्य को विद्या का अहंकार था।

२२५. गुरू ने शिष्य से पूछा कि मुझ में क्या कुछ अहंकार है। शिष्य ने उत्तर दिया हां थोड़ा सा है और वह निम्नलिखित हितों के लिये है (१) शरीर की रक्षा के लिये (२) ईश्वर की भक्ति बढ़ाने के लिये (३) भक्तों के सत्संग में मिलने के लिये (४) दूसरों को उपदेश देने के लिये। चिरकाल तक प्रार्थना करने के पश्चात् आपको यह अहंकार मिला है। मेरी तो कल्पना ऐसी है कि आपके जीवात्मा की स्वाभाविक अवस्था समाधि है इसलिये मैं कहता हूँ कि आपका अहंकार आपकी प्रार्थना का फल है।

मास्टर साहब ने कहा कि मैंने तो इस अभिमान को क़ायम नहीं रक्खा बल्कि मेरी जगत् माता ने क़ायम रक्खा है। प्रार्थना सफल करना मेरी माता का काम है।

२२६. साकार और निराकार परमात्मा का दर्शन हनुमान जी को मिला था। लेकिन उन्होंने ईश्वर के सेवक होने का अहंकार क़ायम रक्खा और यही हालत नारद, सनक, सनातन और सनत्कुमार की थी।

किसी ने पूछा कि नारद इत्यादि भक्त ही थे या ज्ञानी भी थे इस पर परमहंस जी ने जवाब दिया कि नारद इत्यादि महात्माओं को ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति थी लेकिन तब भी वे नाले के पानी की तरह खुल्लमखुल्ला बातचीत करते और गाते थे इससे ऐसा मालूम होता है कि उनको भी विद्या का अहंकार था जो एक प्रकार से उनको ईश्वर से अलग करने का एक चिन्ह था और जो दूसरों को धर्म की सच्चाई का उपदेश दे रहा था।

२२७. स्वाती नक्षत्र के निकलने पर सीप समुद्र तल से पानी के सतह पर आता है और उस समय तक उतराता रहता है जब तक उसको स्वाती का बूंद नहीं मिलता। इसके बाद वह समुद्र के तह पर चला

जाता है और कुछ समय के अनन्तर उसमें से एक सुन्दर मोती निकलता है। उसी प्रकार बहुत से ऐसे उत्सुक मुमुक्षु होते हैं जो शाश्वत आनन्द के द्वार को खोलने वाले गुरुओं की खोज में एक स्थान से दूसरे स्थान में विहार करते हैं और इस परिश्रम में कहीं ऐसा एक भी गुरू मिल गया तो उनके सांसारिक बंधन नष्ट हो जाते हैं और वे मनुष्यों का संसर्ग छोड़कर अन्तःकरण रूपी गुफा में स्थित हो जाते हैं और वहीं पर उस समय तक पड़े रहते हैं जब तक उनको नित्यानन्द की प्राप्ति नहीं होती।

५५८. इस युग के लोग हर एक वस्तु के तत्व की ओर अधिक ध्यान देते हैं। वे धर्म के मुख्य तत्व को ग्रहण कर लेते हैं और विधि, संस्कार, मतमतान्तर इत्यादि अप्रमुख तत्वों को ग्रहण नहीं करते।

५५९. सीप जिसके भीतर मोती रहता है कम मूल्य का होता है किन्तु मोती की उपज के लिये उसकी बड़ी आवश्यकता है। सम्भव है जिसने मोती उसमें से निकाला है उसको सीप का कुछ भी उपयोग न हो। उसी प्रकार जिसको परमेश्वर की प्राप्ति हो गई है उसको विधि और संस्कारों की कोई आवश्यकता नहीं।

५६०. दल (शेवाल घास) बड़े और स्वच्छ तालावों में नहीं उत्पन्न होता, वह छोटे छोटे तलइयों में होता है। उसी प्रकार जिस पक्ष के लोग पवित्र, उदार और निःस्वार्थी हैं उनमें दल (भेद) उत्पन्न नहीं होता। किन्तु जिस पक्ष के लोग स्वार्थी, कपटी और हठवादी होते हैं उनमें दल अधिक ज़ोर पकड़ता है (बंगला में दल के दो अर्थ होते हैं एक तो शेवाल घास और दूसरे भेद। यहाँ दल शब्द पर श्लेष है)।

५६१. जो तुम दूसरों से करवाना चाहते हो उसे पहिले तुम स्वयं करो।

५६२. दुष्ट मनुष्य का मन कुत्ते की टेढ़ी पूंछ की तरह होता है।

५६३. नवीन उत्पन्न हुआ बछड़ा बड़ा उत्साही, चपल

और प्रसन्नचित्त होता है। दिन भर वह इधर उधर घूमता रहता है, केवल दूध पीने के लिये अपनी माता के पास जाता है। लेकिन जब उसके गले में रस्सी डाल दी जाती है तो उसका उत्साह नष्ट हो जाता है; दुखी और उदास रहता है और सूख कर दुबला पड़ जाता है। उसी प्रकार जब तक बच्चे को संसार से सम्बन्ध नहीं रहता तब तक वह दिन भर आनन्द से रहता है लेकिन विवाह होजाने पर जब घर का बोझ उस पर पड़ जाता है तो उसका आनन्द नष्ट हो जाता है, दिन रात वह घर की चिन्ताओं में चूर रहता है, मुंह उसका पीला पड़ जाता है और माथे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं। वह पुरुष धन्य है जो जन्म भर लड़का बना रहता है, जो प्रातःकाल के हवा के सदृश स्वतंत्र है। खिले हुये फूल की तरह सुन्दर है और ओस के बिन्दु की तरह पवित्र है।

५६४. जिस प्रकार मुलामय मिट्टी पर चिन्ह उभड़ता है किन्तु पत्थर पर नहीं। उसी प्रकार दिव्य ज्ञान का प्रभाव भक्तों के हृदयों पर पड़ता है, बद्ध प्राणियों के हृदयों में नहीं।

५६५. बहते हुये पानी पर पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों का प्रतिबिम्ब साफ २ नहीं दिखलाई पड़ता, उसी प्रकार सांसारिक कामना और मनोविकार से त्रस्त हुये हृदय पर ईश्वर के प्रकाश का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता।

५६६. जिस प्रकार मक्खी कभी पाखाने पर बैठती है और कभी देवताओं के नैवेद्य पर बैठती है। उसी प्रकार सांसारिक मनुष्य का मन कभी धार्मिक बातों पर लग जाता है और कभी धन और विषयभोग के सुख में लीन हो जाता है।

५६७. ज्वर से पीड़ित और प्यास से दुखी मनुष्य यदि ठंडे पानी से भरे हुये और खटाइयों से भरे हुये खुले मुंह वाले बोतलों के पास रक्खा जाय तो क्या यह सम्भव है कि वह पानी पीने अथवा खटाई खाने की इच्छा को रोक सके? उसी प्रकार विषयभोग के ताप से तपे मनुष्य के

एक ओर सुन्दरता और दूसरो ओर द्रव्य रक्खा जाय तो क्या वह अपने मोह को रोक सकता है। सन्मार्ग से वह अवश्य गिर जायगा।

५६८. जिस बर्तन में दही रक्खा है उसमें कोई दूध नहीं रखता क्योंकि उसमें रखने से दूध फट जाता है दही का बर्तन दूसरे काम में भी नहीं आ सकता क्योंकि आग पर रखने से वह चटक जाता है इसलिये उसे प्रायः निरुपयोगी ही समझना चाहिये। एक सज्जन और अनुभवी गुरू अमूल्य और उदात् उपदेशों को एक सांसारिक मनुष्य के हवाले नहीं करता क्योंकि वह अपने क्षुद्र फायदे के लिये उनका दुरुपयोग करता है और न वह उससे ऐसा कोई उपयोगी काम ही करवायेगा जिसमें कुछ भी परिश्रम पड़े। सम्भव है वह यह समझे कि गुरू मुझसे अनुचित लाभ उठा रहे हैं।

५६९. प्रश्न—मन के किस अवस्था पर पहुँचने पर सांसारिक मनुष्य को मोक्ष मिल सकता है।

५७०. उत्तर—ईश्वर की कृपा से यदि किसी में त्याग का तत्व जल्दी आ जावे तो वह कनक और कान्ता की आसक्ति से छुट सकता है और सांसारिक बंधनों से मुक्त हो जाता है।

५७१. ईश्वर जिस घर में रहता है उस घर के दरवाजे के खोलने के लिये कुंजी एक बिलकुल उलटे ढंग से लगाई जाती है। ईश्वर तक पहुँचने के लिये तुमको संसार छोड़ना होगा।

५७२. किसी से परमहंस जी ने कहा था "क्यों जी संसार में अपने जीवन का एक बड़ा भाग व्यतीत करके अब तुम ईश्वर को ढूंढने के लिये निकले हो। ईश्वर का दर्शन करके यदि तुम संसार में रहते तो तुमको कौन सी शान्ति और कौन सा आनन्द न मिलता।"

५७३. सांसारिक विचारों और चिन्ताओं से अपने मन को न घबड़ाओ। जो सामने आवे उसको करते रहो और अपना मन हमेशा ईश्वर की ओर लगाये रहो।

५७४. अपने विचार के अनुसार तुम्हें हमेशा बोलना चाहिये। विचार और वाणी में एकता होनी चाहिये। यदि तुम कहते हो कि "ईश्वर हमारा सर्वस्व है" और अपने मन से तुम संसार को सर्वस्व समझते हो तो इससे तुमको कोई लाभ नहीं होगा।

५७५. एक बार ब्राह्मो धर्म के लड़कों ने मुझसे कहा कि हम लोग राजा जनक के अनुयायी हैं, संसार में रहते हैं लेकिन उसमें आसक्ति नहीं रखते। मैंने उनको जवाब दिया कि ऐसा कहना बहुत सहल है लेकिन राजा जनक होना बड़ा कठिन है। संसार में निष्पाप और निर्मल रहना बड़ा कठिन है। जनक ने शुरू में बहुत भारी तपस्या की थी। मैं तुम से यह नहीं कहता कि उसी तरह का कष्ट तुम भी सहो लेकिन मैं तुम से यह कहता हूँ कि कुछ दिन तक शान्ति के साथ एकान्त स्थान पर रह कर भक्ति का अभ्यास अवश्य करो। ज्ञान और भक्ति को प्राप्त करके तब संसार के कामों में लगो। उत्तम दही उसी समय बनता है जब दूध बर्तन में थोड़ी देर तक रक्खा रहता है। बर्तन के हिलने अथवा बर्तन के बदलने से अच्छा दही नहीं बनता। जनक जी अनासक्त थे इस वास्ते लोग उनको विदेह (विना देह का) कहते थे। वे जीवन मुक्त थे "मेरे देह है" ऐसी भावना नष्ट करना बड़ा कठिन है। जनक सचमुच एक बड़े बीर थे। वे ज्ञान और कर्म की दो तलवार बड़ी आसानी के साथ अपने हाथ में पकड़े हुये थे।

५७६. अगर तुम संसार से अनासक्त रहना चाहते हो तो तुमको पहले कुछ समय तक, एक वर्ष, छः महीने, एक महीना वा कम से कम बारह दिन तक किसी एकान्त स्थान पर रहकर भक्ति का साधन अवश्य करना चाहिये। एकान्तवास में तुम्हें हमेशा में ध्यान लगाना चाहिये। और दिव्य प्रेम के लिये उसकी प्रार्थना करनी चाहिये। उस समय तुम्हारे मन में यह विचार आना चाहिये कि संसार की कोई वस्तु मेरी वस्तु नहीं है जिनको मैं अपनी वस्तु समझता हूँ वे अति शीघ्र नष्ट हो

जायगी। वास्तव में तुम्हारा दोस्त ईश्वर है। वही तुम्हारा सर्वस्व है, उसको प्राप्त करना ही तुम्हारा ध्येय होना चाहिये।

४७७. अपने विचारों और अपनी श्रद्धा को अपने मन में रक्खो बाहर किसी से न कहो नहीं तो तुम्हारी हानि होगी।

४७८. यदि तुम हाथी को खूब नहला कर उसे छोड़ दो तो वह शीघ्र ही धूल में लेट कर अपने शरीर को मैला कर लेगा। किन्तु तुम उसे नहला कर उसके बाड़े में बांध दो तो वह स्वच्छ रहेगा। उसी प्रकार महात्माओं के सत्संग से तुम्हारा अंतःकरण यदि पवित्र हो जावे और यदि तुम सांसारिक मनुष्यों से बराबर मेल रखते रहो तो तुम्हारे अन्तःकरण की पवित्रता अवश्य नष्ट हो जायगी लेकिन यदि तुम अपने मन को ईश्वर में लगाये रहो तो तुम्हारे अन्तःकरण की पवित्रता नष्ट न होगी।

४७९. मैले शीशे में सूर्य की किरणों का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता। उसी प्रकार जिनका अन्तःकरण मलीन और अपवित्र है और जो माया के वश में हैं उनके हृदय में ईश्वर के प्रकाश का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ सकता। जिस प्रकार साफ शीशे में सूर्य का प्रतिबिम्ब पड़ता है उसी प्रकार स्वच्छ हृदय में ईश्वर का प्रतिबिम्ब पड़ता है, इसलिये पवित्र बनो।

४८०. संसार में पूर्णता प्राप्त करने वाले मनुष्य दो प्रकार के होते हैं, एक वे जो सत्य को पाकर चुप रहते हैं और उसके आनन्द का अनुभव बिना दूसरों की कुछ परवाह किये स्वयं लिया करते हैं और दूसरे वे जो सत्य को प्राप्त कर लेते हैं लेकिन उसका आनन्द वे अकेले ही नहीं लेते बल्कि नगाड़ा पीट पाट कर दूसरों से भी कहते हैं कि आओ और मेरे साथ इस सत्य का आनन्द लो।

४८१. विवेक दो प्रकार का होता है (इसकी व्याख्या हो चुकी है)।

५८२. ग्रन्थ का अर्थ सदैव धर्मशास्त्र के नहीं होता। उसका अर्थ ग्रन्थि अर्थात् गांठ भी होता है। सब अभिमान को छोड़कर सत्य की खोज करने के लिये बड़ी उत्सुकता और शीघ्रता के साथ जो कोई ग्रन्थ नहीं पढ़ता, तो केवल पढ़ने ही से उसमें धूर्तता और अहंकार पैदा हो जाता है। ये सब विकार उसके मन के ग्रन्थि (गांठ) हैं।

५८३. जिनको थोड़ा ज्ञान होता है वे अहंकार से भरे रहते हैं। एक सज्जन से ईश्वर-विषय पर मेरी बातचीत हुई। उन्होंने कहा, "अरे मैं इन सब बातों को जानता हूँ।" मैंने उत्तर दिया, "जो दिल्ली जाता है क्या वह कहता फिरता है कि मैं दिल्ली गया था। क्या एक बाबू अपने मुख से कहता है कि मैं बाबू हूं ?"

५८४. जिन लोगों को आत्मज्ञान नहीं मिल सकता उन लोगों में से निम्नलिखित लोग हैं (१) जो अपने ज्ञान की चर्चा इधर उधर करते फिरते हैं (२) जिन्हें अपने ज्ञान का घमण्ड है (३) और जिन्हें अपनी संपत्ति का अभिमान है। यदि कोई उनसे कहे, "अमुक स्थान में एक अच्छा सन्यासी रहता है, उनसे मिलने के लिये क्या आप चलेंगे ?" तो वे कहेंगे कि हमें जरूरी काम करना है इसलिये हम न जा सकेंगे। किन्तु अपने मन में वे सोचते हैं, हम तो बड़े दरजे के मनुष्य हैं उससे मिलने के लिये हमें क्यों जाना चाहिये।"

५८५. बहुत से लोग ऐसे हैं जिनके यहाँ कोई ऐसे प्राणी नहीं होते जिनकी देख रेख उन्हें करनी पड़े किन्तु तो भी वे जान बूझ कर कुछ प्राणी रख कर अपने को संसार में बांध लेते हैं। वे स्वतंत्र रहना पसन्द नहीं करते। जिनके न कोई भाई हैं और न सम्बन्धी हैं वे बैठे बैठाये, कुत्ता, बिल्ली अथवा बन्दर पाल लेते हैं और उन्हीं की चिन्ता में व्याकुल रहते हैं। मनुष्यों पर माया का संसारी जाल पड़ता रहता है।

५८६. अधिक ज्वर में जब मनुष्य को गहरी प्यास लगती है तो वह समझता है कि मैं समुद्र को पीकर ही छोड़ूंगा किन्तु जब ज्वर उतर

जाता है तो वह कठिनता से एक प्याला पानी पीता है थोड़े ही पानी से उसकी प्यास बुझ जाती है। उसी प्रकार मनुष्य माया के भ्रम में पड़ कर अपनी लघुता को (मैं कितना छोटा हूँ इसे) भूल जाता है और सोचने लगता है कि मैं सारे ईश्वर को अपने हृदय में भर सकता हूँ किन्तु जब उसका भ्रम दूर हो जाता है तो ऐसा देखा जाता है कि ईश्वरीय दिव्य प्रकाश के एक किरण से उसका हृदय नित्यानन्द से भर सकता है।

४८७. परमहंस रामकृष्णदेव ने एक बार एक वाद विवाद करनेवाले से कहा था "यदि तुम सत्य को दलीलों से जानना चाहते हो तो ब्राह्मो-उपदेशक केशवचन्द्र सेन के पास जाओ; किन्तु यदि उसे केवल एक शब्द में जानना चाहते हो तो मेरे पास आओ।"

४८८. जिसका मन ईश्वर की ओर लगा हुआ है उसे भोजन, जल आदि क्षुद्र बातों पर ध्यान करने की फुरसत नहीं रहती।

४८९. सच्चा सात्विक भोजन वही है जिससे मन चंचल न हो।

४९०. द्रव्य के अभिमान करने का कोई कारण नहीं दिखलाई पड़ता। यदि तुम यह कहते हो कि मैं धनी हूँ तो संसार में बहुत से ऐसे धनी पड़े हैं जिनके मुक़ाबले में तुम कुछ भी नहीं हो। संध्या समय जब जुगनू चमकते हैं तो वे समझते हैं कि संसार को प्रकाश हम दे रहे हैं किन्तु जब तारे निकल आते हैं तो उनका अभिमान चूर्ण हो जाता है और फिर तारे समझते हैं, कि संसार को प्रकाश हम देते हैं। थोड़ी देर में आकाश में जब चन्द्रमा चमकने लगता है तो तारों को नीचा देखना पड़ता है और कान्तिहीन हो जाते हैं। अब चन्द्रमा अभिमान में आकर समझता है कि संसार को प्रकाश मैं दे रहा हूँ और मारे खुशी के नाचता फिरता है। जब प्रातःकाल सूर्य्य का उदय होता है तो चन्द्रमा की भी कान्ति फीकी पड़ जाती है। धनी लोग यदि सृष्टि की इन बातों पर विचार करें तो वे धन का अभिमान कभी न करें।

५६१. रुपया जिसके पास है वह सच्चा मनुष्य है। रुपये का उपयोग करना जिन्हें नहीं आया वे मनुष्य कहलाने योग्य नहीं।

५६२. बँगाली लिपि में तीन "सकार" को छोड़कर एक ही उच्चारण के दूसरे अक्षर नहीं होते। तीनों "सकार" का अर्थ "क्षमस्व" सहन कर, ऐसा होता है। इससे सिद्ध होता है कि लड़कपन में लिपि से ही हमको सहनशीलता का पाठ पढ़ाया जाता है। सहनशीलता मनुष्य के लिये बड़े महत्व का गुण है।

५६३. सहनशीलता साधुओं का सच्चा गुण है।

५६४. प्रश्न—मनुष्य में देवतापन कितने समय तक ठहरता है ?

उत्तर—लोहा जब तक आग में रहता है तब तक लाल रहता है। ज्योंही वह आग से निकाल लिया जाता है त्योंही वह काला पड़ जाता है। उसी प्रकार जब तक आत्मा समाधि में रहता है तब तक मनुष्य देव सदृश रहता है।

५६५. जब तक अहङ्कार रहता है तब तक ज्ञान और मुक्ति का मिलना और जन्म और मृत्यु से छूटना असम्भव है।

५६६. यदि इस कपड़े को मैं अपने सामने लटका दूँ तो मैं तुम्हारे चाहे जितने समीप रहूँ, तुम मुझे नहीं देख सकते। उसी प्रकार ईश्वर सब वस्तुओं की अपेक्षा तुम्हारे अधिक समीप है लेकिन अहङ्कार के परदे के कारण तुम उसे नहीं देख सकते।

५६७. प्रश्न—महाराज, हम लोग इस प्रकार क्यों बंधे हैं ? हम लोगों को ईश्वर के दर्शन क्यों नहीं होते ?

उत्तर—जीव के लिये अहङ्कार ही माया है। अहङ्कार प्रकाश को बन्द किये रहता है। जब "मैंपन" नष्ट हो जाता है तो सब कष्ट दूर हो जाते हैं। यदि ईश्वर की कृपा से "मैं स्वयं कुछ नहीं करता" यह भाव दिल में बैठ जाय तो मनुष्य इसी जीवन में मुक्त हो जाता है और उसे फिर किसी प्रकार का भय नहीं रहता।

५९८. कीर्ति को चाहनेवाले लोग भ्रम में रहते हैं। उनको मालुम नहीं कि सब वस्तुओं के दाता ईश्वर ने प्रत्येक बात पहिले ही से निश्चित कर रक्खी है और सब का श्रेय उसी को है, किसी मनुष्य को नहीं है। चतुर मनुष्य हमेशा कहते हैं कि "हे ईश्वर तू ही सब करता है, तू ही हमारा सर्वस्व है।" किन्तु अज्ञानी लोग भ्रम में पड़कर कहते हैं, "इसको मैं करता हूँ, सब मेरे परिश्रम से होता है।" इत्यादि।

५९९. जब तक तुम कहते हो कि "मैं जानता हूँ" अथवा "मैं नहीं जानता हूँ", तब तक तुम अपने को एक ही व्यक्ति समझते हो। मेरी जगन्माता कहती है, "जब मैं तुम्हारा सब अहङ्कार नष्ट कर देती हूँ तब तुमको परमेश्वर का साक्षात्कार होता है।" जब तक ऐसा नहीं होता तब तक मुझमें और मेरे चारों ओर "मैंपन" रहता है।

६००. यदि तुमको ऐसा मालुम पड़े कि हमारा "मैंपन" नहीं दूर हो सकता तो उसको सेवक के नाते से रहने दो। "मैं ईश्वर का सेवक या भक्त हूँ" इस प्रकार जो "मैंपन" का अर्थ लगाता है तो ऐसे "मैंपन" से डरने को कोई बात नहीं। मीठा खाने से अजीर्ण उत्पन्न होता है किन्तु मिश्री के खाने से यह अवगुण नहीं उत्पन्न होता। अतएव मिठाई में मिश्री की गणना नहीं की जाती।

६०१. सेवक का, भक्त का और लड़के का "मैंपन" पानी पर खींची गई लकीर की तरह है। वह बहुत देर तक नहीं ठहरता।

६०२ "मैं" क्या पदार्थ है इसका यदि कोई पता लगावे तो उसे यही मालूम होगा कि यह अहङ्कार का दर्शक एक शब्द है, उसको निकाल कर फेंकना बड़ा कठिन है। इसको सुनकर एक ने कहा, हे दुष्ट "मैं" यदि तू किसी उपाय से दूर नहीं कर सकता तो ईश्वर का सेवक बनकर रह।" इसको पूर्ण परिपक्व "मैं" कहते हैं।

६०३. यदि तुम अभिमान करना चाहते हो तो इस बात का अभिमान करो कि "मैं ईश्वर का सेवक हूँ । मैं उसका पुत्र हूँ। बड़े

बड़े लोगों का स्वभाव छोटे बच्चों के स्वभाव की तरह होता है। वे ईश्वर के समीप बच्चों की तरह हैं और इसलिये उनको अहङ्कार नहीं होता। उनकी सब शक्ति उनकी अपनी न होकर ईश्वर की होती है और ईश्वर की ओर से उनको मिलती है।

६०४. वह मनुष्य इसी जीवन में मुक्त है जिसका यह विश्वास है कि 'हरेक बात ईश्वर की इच्छा से होती है, मैं तो उसके हाथ का यंत्र हूँ। वास्तव में लोगों को करने वाला मैं दिखलाई पड़ता हूँ किन्तु वास्तव में मेरे द्वारा करता ईश्वर है।"

६०५. मोक्ष उस समय मिलेगा जब हमारा अहङ्कार नष्ट हो जायगा और हमारी इच्छा परमेश्वर में लीन होजायगी।

६०६. जीवात्मा का सच्चा स्वरूप "सच्चिदानन्द" है। अहङ्कार से अनेकों उपाधियां पैदा हो गई हैं और इसलिये जीवात्मा अपना सच्चा स्वरूप भूल गया है।

६०७. सेवक का अहङ्कार, भक्त का अहङ्कार और विद्या का अहङ्कार ये सब पके अहङ्कार के नाम हैं।

६०८. प्रश्न—अपकार करनेवाला "मैं" क्या है ?

जो "मैं" यह कहता है कि "क्या वे मुझे नहीं जानते ? मेरे पास बड़ा द्रव्य है। मेरे समान धनी कौन है ? मेरी बराबरी कौन कर सकता है ?" वही "मैं" अपकार करने वाला है।

६०९. अज्ञान जनित अहङ्कार तमोगुण का स्वरूप है।

६१०. मुक्ति कब होगी ? जब अहङ्कार दूर होगा। सच्चा भक्त हमेशा कहता है कि "हे ईश्वर तू कर्ता है। तू सब कुछ करता है। मैं तो केवल एक यंत्र हूँ। मैं तो वही करता हूँ जो तू करवाता है। यह सब तेरा वैभव है। यह घर और यह कुटुम्ब तेरा है, मेरा नहीं है। जैसी तू आज्ञा देगा उसी का पालन मैं करूंगा।

६११. एक बार एक विद्यार्थी ने भगवान श्री रामकृष्ण से पूछा "भगवन्! चूंकि हरी का निवास प्रत्येक प्राणी में है, इसलिये हरेक प्राणी के हाथ का छुआ भोजन यदि ग्रहण किया जाय तो उसमें क्या हर्ज है? भगवान ने पूछा "क्या तुम ब्राह्मण हो?" विद्यार्थी ने उत्तर दिया, "हां, मैं ब्राह्मण हूँ।" भगवान ने कहा, "यही कारण है कि तुम इस प्रकार का प्रश्न कर रहे हो। अच्छा यदि तुम एक दियासलाई जलाओ और उसके ऊपर सूखी लकड़ियों का ढेर लगा दो तो क्या होगा?" विद्यार्थी ने उत्तर दिया, "लकड़ी से दियासलाई बुझ जायगी।" भगवान ने फिर कहा, 'समझ लो ढेर की ढेर आग लग रही है, यदि उसमें तुम नाना प्रकार के वृक्ष डालते चले जाओ तो क्या होगा?" विद्यार्थी ने उत्तर दिया, "वे सब थोड़े समय में जल कर खाक हो जांयगे।" भगवान ने कहा, "उसी प्रकार यदि तुम्हारा आध्यात्मिक तेज कमजोर है, तो हरेक के हाथ का भोजन करने से संभव है वह बुझ जाय, किन्तु यदि तुम्हारा आध्यात्मिक तेज मजबूत है तो हरेक के हाथ का भोजन करने में कोई हानि नहीं हो सकती।

६१२. अध्यात्म विषय की ओर लगे हुये मनुष्यों की एक विशेष जाति बन जाती है। वे सामाजिक बन्धनों की कुछ परवाह नहीं करते।

६१३. प्रिय मित्र, ज्यों ज्यों मेरी आयु बढ़ती जाती है त्यों त्यों मैं प्रेम और भक्ति के गुह्य तत्वों को अधिकाधिक समझ रहा हूँ।

६१४. प्रश्न—सच्चा भक्त ईश्वर को किस प्रकार देखता है?

उत्तर—वृन्दावन की गोपियाँ श्रीकृष्ण भगवान को जगन्नाथ करके नहीं मानती थीं बल्कि गोपी नाथ करके मानती थीं। उसी प्रकार भक्त ईश्वर को अपना निकट सम्बन्धी करके मानता है।

६१५. अपने पति के साथ हुये रोज़ के सम्भाषण को सब स्त्रियों से कहने में एक स्त्री को लज्जा मालूम होती है। वह किसी से नहीं कहती और न कहने की उसको इच्छा होती है। यदि संयोग से बात कहीं प्रगट हो जाती है तो उसे बड़ा दुःख होता है। किन्तु अपनी अन्तरंग सखी से निःसंकोच भाव से वह सब कह देती है। कभी कभी तो बिना पूछे ही कहने के लिये अधीर हो उठती है। उससे कहने में उसे बड़ा आनन्द मालुम होता है। उसी प्रकार ईश्वर का भक्त समाधि के समय अनुभव किये हुये आनन्द को भक्त को छोड़कर दूसरों से कहना पसन्द नहीं करता है। कभी कभी तो दूसरे भक्त से कहने के लिये वह भी अधीर हो उठता है और ऐसा करने में उसे आनन्द मालुम होता है।

६१६. चीनी को ख़ूब जलती हुई आग में पकाओ। जब तक उसमें मिट्टी और मैल है तब तक उसमें से धुआं निकलता रहेगा और "बुल" "बुल" की आवाज़ होती रहेगी। किन्तु जब सब मैल जल जाता है तो न तो धुआं निकलता है और न आवाज़ ही होती है। सुन्दर स्वच्छ शीरा तैय्यार हो जाता है। वह शीरा चाहे पतला हो और चाहे गाढ़ा हो मनुष्य और देवता दोनों को पसन्द होता है। श्रद्धावान मनुष्यों का ऐसा ही स्वभाव होता है।

६१७. बरसात का पानी ऊंची ज़मीन पर नहीं ठहरता बल्कि ढालू ज़मीन में बहकर चला जाता है। उसी प्रकार ईश्वर की कृपा नम्र मनुष्यों के दिलों में बहकर जाती है, अभिमानी मनुष्यों के दिलों में नहीं ठहरती है।

६१८. अभिमान से उसी प्रकार खाली रहो जिस प्रकार उड़ती हुई पत्ती आंधी के सामने अभिमान से ख़ाली रहती है।

६१९. एक भक्त पुरुष चुपचाप ईश्वर का नाम मन में लेकर माला जपा करता था। भगवान परमहंस ने उससे कहा, "तुम एक ही अड्डे को पकड़े क्यों बैठे हो, आगे बढ़ो।" भक्त ने उत्तर दिया कि

आगे बढ़ना बिना ईश्वर की कृपा के नहीं हो सकता । भगवान परमहंस ने कहा, "अरे भई, उसकी कृपा की हवा दिनरात हमारे चारों ओर चला करती है, यदि तुम्हें जीवन के महासागर को पार करना है तो मस्तिष्क रूपी नौका का पाल खोलो ।

६२०. ईश्वर की कृपा की हवा बराबर बहा करती है । इस समुद्र रूपी जीवन के मल्लाह उससे लाभ नहीं उठाते किन्तु तेज़ और सबल मनुष्य सुन्दर हवा से लाभ उठाने के लिये अपने मन का परदा हमेशा खोले रहते हैं और वही कारण है कि वे अति शीघ्र निश्चित स्थान को पहुँच जाते हैं ।

६२१. जब तक हवा नहीं चलती तभी तक पंखों की आवश्यकता रहती है किन्तु जब हवा चलने लगती है तो पंखों की आवश्यकता नहीं रह जाती । उसी प्रकार जब तक ईश्वरीय सहायता न मिले तब तक अपने ही परिश्रम से ईश्वर-प्राप्ति का उपाय करना चाहिये और जब ईश्वर की ओर से सहायता मिलने लगे तो मनुष्य अपने परिश्रम को बन्द कर दे ।

६२२. जब तक कुतुबनुमा की सुई उत्तर की ओर रहती है तब तक तहाज़ को भय नहीं रहता; उसी प्रकार जब तक जहाज़ रूपी मानव-जीवन के कुतुबनुमा की सुई रूपी मन परब्रह्म की ओर रहेगा तब तक उसको किसी प्रकार का भय न रहेगा ।

६२३. प्रश्न—जब तुम संसार में डाल दिये जाओ तो तुम्हें क्या करना चाहिये ?

उत्तर—उसी ईश्वर को सब सौंप दो, अनन्यभाव से उसकी शरण जाओ । इस प्रकार तुम्हें कोई दुःख न होगा और तुम्हें तब मालुम होगा कि हरेक बात उसकी इच्छा से होती है ।

६२४. संसार में रहना या उसको छोड़ना ईश्वर की इच्छा पर

है। इसलिये उसी पर सब छोड़कर काम किये जाओ। इससे अधिक तुम और कर क्या सकते हो?

६२५. कनक और कान्ता ने संसार को पाप में डुबो रक्खा है। कान्ता को जब तुम जगत्माता के व्यक्त स्वरूप की दृष्टि से देखोगे तो वह निःशस्त्र हो जायगी।

६२६. प्रश्न—मुमुक्षु की शक्ति कहां रहती है?

उत्तर—वह ईश्वर का पुत्र है। आंसू उसकी बड़ी शक्ति है। जिस प्रकार रोते हुये बच्चे की इच्छा मां पूरी करती है, उसी प्रकार रोते हुये भक्त की इच्छा, ईश्वर पूरा करता है।

६२७. प्रश्न—शान्ति दिल में कभी कभी रहती है, वह हमेशा क्यों नहीं रहती?

उत्तर—बांस की आग जल्द बुझ जाती है जब तक और बांस लगाकर वह कायम न रक्खी जाय। उसी प्रकार आध्यात्मिक तेज कायम रखने के लिये भक्ति के सतत अभ्यास की आवश्यकता है।

६२८. मित्र, जब तक जीवित रहूँगा तब तक मुझे ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा है।

६२९. प्रारम्भ में मनुष्य को चाहिये कि वह एकान्त स्थान में ईश्वर का ध्यान करे, नहीं तो संसार की अनेक बातों से उसका मन उचट जायगा। यदि दूध और पानी को हम एक साथ रक्खें तो दोनों अवश्य मिल जायँगे; किन्तु यदि दूध का मक्खन निकाल लिया जाय और तब पानी के साथ रक्खा जाय तो पानी से नहीं मिलेगा, वह उस पर उतराता रहेगा। उसी प्रकार सतत अभ्यास से मनुष्य को ध्यान लगाने की बान पड़ जाय तो फिर चाहे जहां रहे उसका मन संसार की बातों में न जाकर सीधा ईश्वर में लगेगा।

६३०. ध्यान का अभ्यास करते समय नवसिखिये को कभी कभी

एक प्रकार की निद्रा आती है जिसे योगनिद्रा कहते हैं। उस समय उसको कुछ ईश्वरीय चमत्कार दिखलाई पड़ते हैं।

६३१. "ध्यान में जिसको पूर्णता प्राप्त हो उसे मोक्ष जल्दी मिलती है" ऐसी एक कहावत है। क्या तुम्हें मालूम है कि मनुष्य को ध्यान में पूर्णता कब मिलती है? ध्यान करते समय चारों ओर दिव्य वातावरण उत्पन्न हो जाय और उसकी आत्मा ईश्वर में लीन हो जाय, तब।

६३२. संसार में ऐसे बहुत कम लोग हैं जिन्हें समाधि का सुख मिल सके और जिनका अहङ्कार दूर हो। चाहे जितने समय तक विवेक के साथ विचार करो, अहङ्कार बारबार आता है। आज तुम पीपल के वृक्ष को काटते हो तो कल उसमें से अँखुये निकलने लगते हैं।

६३३. चिरकाल तक अपनी दुर्वृत्तियों से झगड़ा करने पर और आत्मज्ञान प्राप्त होने पर जब समाधि लगने लगे तब कहीं अहङ्कार दूर होता है। किन्तु समाधि का लगना बड़ा कठिन है। अहङ्कार पीछा नहीं छोड़ता। इसी कारण संसार में जन्म लेकर बारबार आना पड़ता है।

६३४. समाधि में आना जाना पड़ता है। समाधि में तुम परमेश्वर तक जाकर उसी में मिल जाते हो इसके पश्चात् तुम वहां से अपनी आत्मा को हटा कर फिर उसी स्थान पर चले आते हो जहां से रवाना हुये थे। इससे तुम्हें मालुम होता है कि तुम्हारी आत्मा की उत्पत्ति ईश्वर से ही हुई है, और ईश्वर, मनुष्य और प्रकृति एक ही ईश्वर के स्वरूप हैं। इनमें से यदि किसी को भी तुम अपने वश में करलो तो तुम एक प्रकार से ईश्वर का साक्षात्कार कर लेते हो?

६३५. क्या तुम्हें मालूम है कि सात्विक मनुष्य किस प्रकार ध्यान लगाता है? वह अर्धरात्रि के समय परदे के अन्दर अपने विस्तर पर ईश्वर का ध्यान लगाता है जहाँ उसे कोई देख नहीं सकता।

६३६. फूले हुये कमल की सुगन्धि वायु द्वारा पाकर भौंरा आप से आप उसके पास जाता है। जहाँ मिठाइयाँ रक्खी रहती हैं वहाँ चीटियाँ आप से आप जाती हैं। भौंरे को या चीटियों को कोई बुलाने नहीं जाता। उसी प्रकार जब मनुष्य शुद्ध अन्तःकरण और पूर्ण ज्ञानी हो जाता है तो उसके चरित्र की सुगन्धि आप से आप चारों ओर फैलती है और सत्य की खोज करने वाले आप से आप उसके पास जाते हैं। वह उनको स्वयं बुलाने नहीं जाता कि मेरे पास आओ और मेरी बातें सुनो।

६३७. गुरू के वाक्यों को सुनकर रामचन्द्र जी ने संसार को छोड़ने का विचार किया। उनके पिता राजा दशरथ ने वशिष्ठ मुनि को उपदेश करने के लिये भेजा। वशिष्ठजी ने देखा कि रामचन्द्रजी पर घना वैराग्य सवार है। उन्होंने कहा, "रामचन्द्रजी, पहिले मुझसे विवाद कीजिये और फिर संसार को छोड़िये। मैं आप से पूछता हूँ कि क्या संसार ईश्वर से अलग है? यदि है तो आप उसे खुशी से छोड़ सकते हैं।" इन बातों पर विचार करके राम ने देखा कि ईश्वर का प्रकाश जीव और संसार दोनों में है। हरेक वस्तु उसी के शरीर में मौजूद है। अतएव राम चुप हो रहे।

६३८. अपने स्वामी के घर के बारे में नौकरानी कहती है कि यह घर मेरा ही है यद्यपि उसको मालूम है कि स्वामी का घर उसका घर नहीं है, उसका घर तो दूर बर्दवान या नदिया जिले के एक गांव में है। उसका ध्यान अपने गांव वाले घर में बराबर लगा रहता है। गोद में लिये हुये स्वामी के पुत्र की ओर भी इशारा करके वह कहती है, "मेरा हरी बड़ा नट-खट है, मेरा हरी फलानी चीज़ खाना चाहता है।" किन्तु वह इस बात को अच्छी तरह से जानती है कि हरी मेरा लड़का नहीं है। (परमहंस जी कहते हैं कि) जो मेरे पास आते हैं उनसे मैं बराबर कहता हूँ कि तुम लोग इस नौकरानी की तरह अनासक्त जीवन व्यतीत

करो। मैं उनसे कहता हूं कि संसार में रहो लेकिन संसार के बनकर रहो। अपने मन को ईश्वर की ओर लगाये रहो जो तुम्हारा स्वर्गीय घर है और जहां से सब उत्पन्न होते हैं। भक्ति के लिये प्रार्थना करो।

६३६. एक विद्वान ब्राह्मण ने एक बार एक राजा के पास जाकर कहा, "महाराज, मैंने धर्मग्रन्थों का अच्छा अध्ययन किया है। मैं आपको भगवद्गीता पढ़ाना चाहता हूँ।" राजा विद्वान से चतुर था। उसने मन में विचार किया कि जिस मनुष्य ने भगवद्गीता अध्ययन किया होगा वह और भी अधिक आत्म-चिन्तन करेगा, राजाओं के दरबार की प्रतिष्ठा और धन के पीछे थोड़ा ही पड़ा रहेगा। ऐसा विचार कर राजा ने ब्राह्मण से कहा कि "महाराज, आप ने स्वयं गीता का पूर्ण अध्ययन नहीं किया है। मैं आपको अपना शिक्षक बनाने का बचन देता हूँ लेकिन अभी आप जाकर गीता का अध्ययन अच्छी तरह और कीजिये।" ब्राह्मण चला गया, लेकिन बराबर वह यही सोचता गया कि देखो तो राजा कितना बड़ा मूर्ख है। वह कहता है कि तुमने गीता का पूर्ण अध्ययन नहीं किया और मैं कई वर्षों से उसी का बराबर अध्ययन कर रहा हूँ।" उसने जाकर एक बार गीता को फिर पढ़ा और राजा के सामने हाजिर हुआ। राजा ने पहिले की बात उससे फिर कही और उसे बिदा कर दिया। ब्राह्मण को इससे दुख तो बहुत हुआ लेकिन उसने मन में बिचारा कि राजा के इस प्रकार कहने का कुछ मतलब अवश्य है। वह चुपके से घर चला गया और अपने को एक कोठरी में बन्द करके गीता का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने लगा। धीरे २ गीता के गूढ़ अर्थ का प्रकाश उसकी बुद्धि पर पड़ने लगा और उसको साफ मालुम होने लगा कि संपति मान द्रव्य, कीर्ति के लिये दरबार या किसी दूसरी जगह दौड़ना व्यर्थ है। उस दिन से वह दिन रात एक चित्त से ईश्वर की आराधना

करने लगा और राजा के पास नहीं गया। कुछ वर्षों के बाद राजा को ब्राह्मण का स्मरण आया और उसकी खोज के लिये वह उसके घर गया। ब्राह्मण के दिव्य तेज और प्रेम को देख कर राजा उसके चरणों पर गिर पड़ा और बोला, "महाराज, अब आपने गीता का असली तत्व समझा है, यदि मुझे अब अपना चेला बनाना चाहें तो खुशी से बना सकते हैं।"

६४०. जून के महीने में एक छोटा बकरा अपनी माँ के पास खेल रहा था। उसने प्रसन्न होकर उससे कहा, "माँ रास-फूलों के उत्सव करने की मेरी इच्छा है।" माँ ने उत्तर दिया, "मेरे प्यारे बच्चे, इसको जितना सुगम समझते हो उतना सुगम वह नहीं है। रास फूलों के उत्सव करने के पहिले तुम्हें बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। सितम्बर और अक्टूबर के महीने तुम्हारे लिये हितकर नहीं हैं। संभव है तुम्हें कोई काली देवी पर बलिदान देने के लिये पकड़ ले जाय। यदि भाग्य वश काली पूजा से तुम्हारे प्राण बच गये तो अलबत्ता नवम्बर के प्रारम्भ में रास फूलों का उत्सव तुम कर लेना।" इस कल्पित कहानी के अनुसार युवा अवस्था में जो २ अभिलाषायें उत्पन्न देखो उनके पूर्ण होने का विश्वास हमें एक दम न कर लेना चाहिये क्योंकि जीवन में न मालुम कितनी आपत्तियों का सामना करना पड़ता है।

६४१. दूसरी सब बातों का घमण्ड धीरे २ भले ही नष्ट हो जाय किन्तु साधु के साधुत्व विषय का घमण्ड नष्ट होना अत्यन्त कठिन है।

६४२. जितना मैं तुझे कहूँ उतना तुम जीवन में करके दिखलाओगे क्या? जितना मैं कहता हूँ उसका सोलहवां

हिस्सा भी यदि तुम अपने जीवन में चरितार्थ करके दिखलाओ तो तुम अपने इच्छित ध्येय को प्राप्त कर लोगे ।

६४३. माँ, मेरे अन्तःकरण से यह बात निकाल दे कि मैं बड़ा हूँ, वे छोटे हैं; मैं ब्राह्मण हूँ और वे शूद्र हैं। क्योंकि वे सब भिन्न २ रूप धारण करने वाले तेरे सिवाय और कौन हैं ?

६४४. हे जगत् माता, मैं मान नहीं चाहता। मैं शारीरिक सुख भी नहीं चाहता। गंगा जमुना के संगम की तरह मेरी आत्मा को तू अपने में केवल बहने दे। माता, मुझ में भक्ति नहीं है, योग नहीं है और मैं गरीब और अनाथ हूँ। मैं नहीं चाहता कि कोई मेरी प्रशंसा करें मैं यही चाहता हूँ कि मेरा मन तेरे कमल रूपी चरणों में लगा रहे।

६४५. माँ, मैं यंत्र हूँ और तू यंत्री (मशीन चलाने वाला) है। मैं घर हूँ और तू उसमें रहनेवाली स्वामिनी है। मैं म्यान हूँ और तू तलवार है। मैं रथ हूँ और तू रथी है। मैं वही करता हूँ जिसके करने के लिये तू आज्ञा देती है। मैं वही कहता हूँ जो तू कहलाती है। मैं दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करता हूं जैसी तेरी इच्छा होती है। मैं कुछ नहीं हूँ तू सब कुछ है।

ओ३म् ओ३म् ओ३म्

॥ समाप्त ॥

छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागंज प्रयाग की अनुपम पुस्तकें

१—ईश्वरीय-बोध—परमहंस स्वामी रामकृष्णजी के उपदेश भारत में ही नहीं, संसार भर में प्रसिद्ध हैं। उन्हीं के उपदेशों का यह संग्रह है। श्रीरामकृष्ण जी ने ऐसे मनोरञ्जक और सरल, सबकी समझ में आने लायक बातों में प्रत्येक मनुष्य को ज्ञान कराया है कि कुछ कहते नहीं बनता। मूल्य सिर्फ़ ।।।)

२—सफलता की कुंजी—पाश्चात्य देशों में वेदान्त का डंका पीटने वाले स्वामी रामतीर्थ के Secret of Sucess नामक अपूर्व निबंध का अनुवाद है। पुस्तक क्या है जीवन से निराश और विमुख पुरुषों के लिये संजीवनी है। मूल्य ।)

३—मनुष्य जीवन की उपयोगिता—किस प्रकार जीवन सुखमय बनाया जा सकता है? इसकी उत्तम से उत्तम रीति आप जानना चाहते हैं तो एक बार इसे पढ़ जाइये। कितने सरल उपायों से पूर्ण सुखमय जीवन हो जाता है, यह आपको इसी पुस्तक से मालूम होगा। मूल्य ।।=)

४—भारत के दशरत्न—यह जीवनियों का संग्रह है। इसमें भीष्म पितामह, श्रीकृष्ण, पृथ्वीराज, महाराणा प्रतापसिंह, समर्थ रामदास, श्रीशिवाजी आदि के जीवन चरित्र हैं। मूल्य ।)

५—ब्रह्मचर्य ही जीवन है—इसको पढ़कर सच्चरित्र पुरुष तो सदैव के लिये वीर्यनाश से बचता ही है किन्तु पापात्मा भी निसंशय पुण्यात्मा बन जाता है। व्यभिचारी भी ब्रह्मचारी बन जाता है। दुर्बल भी तथा दुरात्मा भी साधु हो जाता है। थोड़े ही समय में इसके नव संस्करण हो चुके हैं। मूल्य ।।।)

६—हम सौ वर्ष कैसे जीवें?—प्राचीन काल की तरह भारतवासी अब दीर्घजीवी क्यों नहीं होते? एक मात्र कारण यही है कि हमारे नित्य के खाने पीने, उठने बैठने के व्यवहारों में

वर्तने योग्य कुछ ऐसे नियम हैं जिन्हें हम भूल गये हैं "हम सौ वर्ष कैसे जीवें ?" को पढ़ कर उसके अनुसार चलने से मनुष्य सुखों का भोग करता हुआ १०० वर्ष तक जीवित रह सकता है। मूल्य १)

७—वैज्ञानिक कहानियाँ—महात्मा टाल्सटाय लिखित वैज्ञानिक कहानियाँ, विज्ञान की शिक्षा देने वाली तथा अत्यन्त मनोरंजक पुस्तक है। मूल्य ।)

८—वीरों की सच्ची कहानियाँ—यदि आपको अपने प्राचीन भारत के गौरव का ध्यान है, यदि आप वीर और बहादुर बनना चाहते हैं, तो इसे पढ़िये। मूल्य केवल ॥=)

९—आहुतियाँ—यह एक बिलकुल नये प्रकार की नयी पुस्तक है। देश और धर्म पर बलिदान होने वाले वीर किस प्रकार हँसते २ मृत्यु का आवाहन करते हैं ? उनकी आत्मायें क्यों इतनी प्रबल हो जाती हैं ? वे मर कर भी कैसे जीवन का पाठ पढ़ाते हैं ? इत्यादि दिल फड़काने वाली कहानियाँ पढ़नी हों तो "आहुतियाँ" आज ही मँगा लीजिये । मूल्य केवल ॥।)

१०—जगमगाते हीरे—प्रत्येक आर्य सन्तान के पढ़ने लायक यह एक ही नयी पुस्तक है। इसमें राजा राममोहन राय से लेकर आज तक के भारत के प्रसिद्ध महापुरुषों की संक्षिप्त जीवनी दी गई है। यदि रहस्यमयी, मनोरंजक, दिल में गुदगुदी पैदा करने वाली महापुरुषों की जीवन घटनाएं पढ़नी हैं, तो एक बार इस पुस्तक को अवश्य पढ़िये। मूल्य केवल १)

११—पढ़ो और हँसो—विषय जानने के लिये पुस्तक का नाम ही काफी है। एक एक लाइन पढ़िये और लोट पोट होते जाइये। आप पुस्तक अलग अकेले में पढ़ेंगे, पर दूसरे लोग समझेंगे कि आज किससे यह कहकहा हो रहा है। मूल्य ॥) ।

१२—मनुष्य शरीर की श्रेष्ठता—मनुष्य के शरीर के अंगों और उनके कार्य इस पुस्तक में वतलाये गये हैं। मूल्य ।=)

१३—फल उनके गुण तथा उपयोग—यह बात निर्विवाद है कि फलाहार सब से उत्तम और निर्दोष आहार है। परन्तु आज तक कोई ऐसी पुस्तक न थी जिससे लोग यह जान सकें कि कौन फल लाभकारी हैं और कौन विकार करनेवाले हैं। इसी अभाव को दूर करने के लिये यह पुस्तक प्रकाशित की गई है। मू० केवल १)

१४—स्वास्थ्य और व्यायाम—इस पुस्तक को लेखक ने अपने निज के अनुभव तथा संसार प्रसिद्ध पहलवान सैंडो, मूलर तथा प्रो० राममूर्ति के अनुभवों के आधार पर लिखा है इसमें लड़कों और स्त्रियों के उपयुक्त भी व्यायाम की विधि बताने के साथ ही साथ चित्र भी दिये गये हैं जिससे व्यायाम करने में सहूलियत हो जाती है। मूल्य अजिल्द का १।।) सजिल्द का २)

१५—धर्मपथ—प्रस्तुत पुस्तक में महात्मा गाँधी के ईश्वर, धर्म तथा नीति सम्बन्धी लेखों का संग्रह किया गया है जिन्हें उन्होंने समय समय पर लिखे हैं! यह सभी जानते हैं कि महात्मा गाँधी वर्तमान युग के धार्मिक सुधारक तथा युगप्रवर्तक हैं। इनके धार्मिक विचारों से परिचित होना प्रत्येक धर्मावलम्बी का परम कर्तव्य है। मूल्य ।।।)

१६—स्वास्थ्य और जल-चिकित्सा—जलचिकित्सा के लाभों को सब लोगों ने एक स्वर से स्वीकार किया है। प्रस्तुत पुस्तक सब के लिये बहुत उपयोगी है। हिन्दी पाठकों के चिरपरिचित—बा० केदारनाथ गुप्त ने इस पुस्तक को लिखकर स्वास्थ्य और शरीर रक्षा की इच्छुक जनता का बड़ा उपकार किया है। मूल्य१।।)

१७—बौद्ध कहानियाँ—महात्मा बुद्ध का जीवन और उपदेश कितना महत्वपूर्ण, पवित्र और चरित्र-निर्माण में सहायक है, इसे बतलाने की आवश्यकता नहीं। इस पुस्तक में उन्हीं महात्मा के उपदेश कहानियों के रूप में दिए गए हैं। इसकी घटनायें सच्ची हैं। प्रत्येक कहानी रोचक और सुन्दर है। पुस्तक का मू० १)

१८—भाग्य-निर्माण—आज बहुत से नवयुवक सब तरह से समर्थ और योग्य होने पर भी अकर्मण्य हो भाग्य के भरोसे बैठे रहते हैं। कोई उद्यम या परिश्रम का कार्य नहीं करते हैं। यह पुस्तक विशेषकर ऐसे नवयुवकों को लक्ष्य करके लिखी गई है। इस पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ के पढ़ने से नवयुवकों में उत्साह, स्फूर्ति तथा नवजीवन प्राप्त होगा। सुन्दर सजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) है।

१९—स्त्री और सौन्दर्य—इस पुस्तक में सौन्दर्य और स्वास्थ्य रक्षा के लिये ऐसे सुगम साधन तथा सरल व्यायाम बतलाये गये हैं जिनके नियमित रूप से बर्तने से ५० वर्ष की अवस्था तक पहुँचने पर भी स्त्रियाँ सुन्दरी और स्वस्थ बनी रह सकती हैं। परिवर्द्धित संस्करण का मू० ३)

२०—वेदान्त धर्म—इसमें देश-विदेश में वेदान्त का झंडा फहरानेवाले स्वामी विवेकानन्द के भारतवर्ष में वेदान्त पर दिये हुए भाषणों का संग्रह है। स्वामी जी के भाषण कितने प्रभावशाली, जोशीले और सामयिक हैं, इसे बतलाने की आवश्यकता नहीं! मू० ५)

२१—मदिरा—हिन्दी के होनहार लेखक बा० तेजनारायण काक 'क्रान्ति' लिखित सुन्दर गद्य काव्य है। इसकी एक एक लाइन के पढ़ने से आप मतवाले हो जायँगे। मू० सजिल्द १)

२२—कवितावली रामायण—गोस्वामी तुलसीदास रचित इस पुस्तक को कौन नहीं जानता। इस पुस्तक में विस्तृत भूमिका लिखकर कवि की जीवनी और कविता पर पूरा प्रकाश डाला गया है। प्रत्येक कवित्त की सरल टीका और कठिन शब्दों के अर्थ तथा अलंकार भी दिये गये हैं। मू० १।)

२३—पौराणिक महापुरुष—इसमें हरिश्चंद्र, दधीचि, विश्वामित्र आदि प्राचीन काल के महापुरुषों की जीवन कथा संक्षेप में दी गई है। पुस्तक बड़ी ही शिक्षाप्रद और मनोरंजक है। मूल्य ॥।)

